हमारे प्रकाशन—

१	रासमाला प्रथम भाग और द्वितीय भाग (सैट) अनुवादक एवं सम्पादक श्री गोपालनारायण बहुरा एम ए०		२१-००
२	विचार के प्रवाह	डॉ देवराज उपाध्याय	५-००
३	बचपन के दो दिन		४ ८
४	साहित्य तथा साहित्यकार	"	५-०
५.	लोकायन	डॉ चिन्तामणि उपाध्याय	४-०
६	मालवी एक भाषा शास्त्रीय अध्ययन "		३-०
७.	मालवी लोकगीत एक विवेचनात्मक अध्ययन		१६-००
८.	आदिकाल के अज्ञात हिन्दी रासकाव्य	डॉ० 'हरीश'	६-०
९	साहित्य की परिधि	रामचन्द्र बोहरा एम ए०	३-५
१	हिन्दी के आंचलिक उपन्यास	राधेश्याम कौशिक 'प्रवीर'	३-००
११	फाहियान की भारत यात्रा	जगदचन्द्र जालेड़	१-००
१२	भारत की खाद्य समस्या	भूपाल मेहता	०-४०
१३	टॉड कृत राजस्थान भाग १ खण्ड १ राजपूत कुलों का इतिहास प्रधान सम्पादक डॉ रघुबीरसिंह, डी लिट्		१ -००

आगामी प्रकाशन—

१४	हिन्दी काव्य पिछला दशक	गोविन्दप्रसाद शर्मा	१०-०
१५.	मेवाड़ कृत शकुन्तला नाटक	राजेन्द्र शर्मा	१०-
१६.	टॉडकृत राजस्थान भाग १ खण्ड २ 'राजस्थान में जागीर व्यवस्था' प्रधान सम्पादक डॉ रघुबीरसिंह डी लिट्		

मंगल ग्रन्थमाला, ग्रंथ संख्या-१ (खण्ड ३)

अलॅक्जॅण्डर किन्लॉक फार्वस-रचित—

रासमाला (द्वितीय भाग)

सल्तनतकालीन गुजरात

अनुवादक एवं सम्पादक

श्रीगोपालनारायण बहुरा, एम० ए०

उप-सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर

प्रकाशक
उमरावसिंह बंसल
संचालक
बंसल प्रकाशन
गोविन्दराजियो का रास्ता
जयपुर

प्रथम संस्करण १९५४

मूल्य— सात रुपए (७-००)

मुद्रक—
बंसल प्रकाशन
(प्रेस विभाग)
जयपुर

॥ श्रीः ॥

निवेदन

रासमाला का प्रथम भाग दो खण्डो में सन् १९५८ ई० के फरवरी और नवम्बर मे निकल चुका है। सहृदय पाठको ने उनका समुचित समादर भी किया। अब, यह दूसरा भाग प्रस्तुत है। प्रथम भाग के बाद प्रस्तुत द्वितीय भाग के प्रकाशन मे यद्यपि लम्बा अन्तर पड़ गया है परन्तु हमारी और प्रकाशक जी की कुछ कठिनाइयां थी और वे ही इस विवशता का कारण भी बनीं।

रासमाला के हिन्दी अनुवाद और मूल ग्रन्थ के परिचय के विषय मे पूर्व प्रकाशित दोनो खण्डो में निवेदन किया जा चुका है। प्रस्तुत भाग मे गुजरात के राजपूत सुलतानो और तदुत्तर मुसलिम-शासन का विवरण है। साथ ही, आबू, ईडर, दांता और पीरम के गोहिलो के रोचक वृत्तान्त भी संदृब्ध है। इनका रसास्वादन पाठक पुस्तक के पृष्ठो में ही करेंगे।

यह दोहराने की आवश्यकता नही है कि गुजरात और राजस्थान की ऐतिहासिक घटनाए और परम्पराए बिलकुल मिली-जुली हैं। एक मे दूसरे का सदर्भ आए विना नही रहता। अत. प्रस्तुत पुस्तक का एक उद्देश्य यह भी है कि राजस्थान का शृङ्खलाबद्ध वैज्ञानिक इतिहास लिखते समय इसका भी उपयोग किया जा सकता है। यह मान लेना चाहिए कि गुजरात के इतिहास-विषय में खोज-बीन और विश्लेषण के जितने प्रयत्न हुए हैं उतने अन्य प्रदेशों में शायद ही हुए हो और राजस्थान

न तो बिलकुल नहीं के बराबर। गुजरात में इस दिशा में जो प्रयत्न हुए हैं उनका क्रमबद्ध विवरण मेरे सम्माननीय मित्र श्री हरिप्रसाद शास्त्री सह सञ्चालक भो०जे० इंस्टीट्यूट ऑफ रिसर्च एण्ड लर्निंग अहमदाबाद ने अपने एक व्याख्यान में दिया है। उसी का हिन्दी रूपान्तर उनकी अनुज्ञा से अगले पृष्ठों में दिया जा रहा है। मैं समझता हूं कि राजस्थान में इतिहास पर काम करने वाले विद्वान् इससे अनुमान लगा सकेंगे कि इस प्रान्त के इतिहास-लेखन की दिशा में कितना 'कुछ' कैसे और करना कराना है।

स्वल्पमेव साधन-सहायता-सम्पन्न रासमाला के प्रकाशक मेरे मित्र 'मगन जी इस जमाने के दमन में डटे हुए हैं और कठिनाइयों का निरन्तर सामना करते हुए भी अपनी लगन में लगे हुए हैं अतएव मेरी ओर से धन्यवाद और शुभकामनाओं के अधिकारी हैं।

आशा है प्रस्तुत पुस्तक को सुविज्ञ पाठकों से पूर्व भागों की तरह ही प्रश्रय प्राप्त होगा।

लालबल निवास
जोधपुर
२६-६-६१

विनिवेदक
गोपालनारायण

विषय-सूची

प्रकरण आठवाँ

प्रकरण नवाँ

प्रकरण दसवाँ

प्रकरण ग्यारहवाँ

गुजरात के इतिहास में संशोधन-कार्य

इतिहास के सशोधन का विषय एक गहन विषय है। इसमे अनेक कठिनाइयाँ आती हैं। पहली कठिनाई यह है कि आवश्यक साधन-सामग्री की शोध और फिर उपलब्ध सामग्री का शुद्ध रीति से उपयोग करना। दूसरी बात यह है कि शोधकर्ता मे इतिहास-सशोधन की खरी (निष्पक्ष) दृष्टि और पद्धति का होना आवश्यक है। तीसरी आवश्यक बात है, इतिहास-लेखन का प्रयोजन, परिमाण, और परिणाम का मूल्याङ्कन। चौथी सीढी है, इतिहास-सशोधन से उत्पन्न प्रवृत्ति की समीक्षा।

उक्त बातो को ध्यान मे रखते हुए गुजरात के इतिहास के सशोधन के विषय मे यहाँ कुछ विचार किया जाता है।

प्रागैतिहासिक काल में लेखन-कला का नितात अभाव होने के कारण उस काल में इतिहास-लेखन की अपेक्षा करने का कोई अवसर नही है। आद्य इतिहास-कालीन उपलब्ध साधन-सामग्री मे लोथल के खण्डहरो मे प्राप्त हुई मुद्राएँ और मुद्राङ्को की छापे (अथवा टिप्पणियाँ) हैं परन्तु, उनके पढे न जाने की अवस्था में इस काल से पहले के इतिहास के ज्ञात होने की सम्भावना नही है।

शार्यातो, आनर्त्तों, रैवतो, और यादवों का बहुत-सा विवरण विष्णु-पुराण तथा अन्य पुराणो में प्राप्त होता है। यादवो मे सात्वत् कुल का (मुख्यत श्रीकृष्ण के कुटुम्ब का) वृत्तान्त भागवत, हरिवश आदि में निरूपित हुआ है। यह पौराणिक वृत्तान्त प्राय पहली सहस्राब्दि से पूर्व का है।

राजवंशों के चरित्रों के समान ही तीर्थ-धामों का माहात्म्य भी पुराणों का अन्यतम माननीय विषय है। पुराणों में वर्णित तीर्थों में गुजरात के अनेक तीर्थ-धामों का समावेश है। स्कन्दपुराण में तो रेवा, हाटकेश्वर, अर्बुद, द्वारका, प्रभास, रैवतक, धर्मारण्य, कौमारिका आदि तीर्थ-धामों के विषय में पृथक्-पृथक् खण्डों की रचना हुई है।

पौराणिक परम्परा के इस समूह को यदि एक बार रख दें तो पहली सहस्राब्दि में रचित इतर साहित्यिक कृतियों में इस प्रदेश के इतिहास-लेखन की प्रवृत्ति कहीं अल्प से ही दिखाई दे सकती है।

शिलादि पर उत्कीर्ण पुरावृत्त-सम्बन्धी लेखों में सबसे प्राचीन जूनागढ़ का शिलालेख मिलता है जो महाक्षत्रप रुद्रदामा का है। यह लेख संस्कृत की प्राचीन गद्यशैली के उदाहरण के रूप में प्रसिद्ध है और शक संवत् ७२ (ई० सन् १५०) में लिखा हुआ है। इसमें सुदर्शन तड़ाग के सेतु-बंधन तथा जीर्णोद्धार की समकालीन घटना के उपरान्त चन्द्रगुप्त मौर्य और अशोक के समय तक का क्रमबद्ध प्राचीन वृत्तान्त दिया हुआ है। इससे चार सौ अथवा साढ़े चार सौ वर्ष पूर्व के शासकों के नाम-क्रम का निर्देश भी ऐतिहासिक टिप्पणी के रूप में इसका उल्लेखनीय विषय है।

इसके पश्चात् वलभी राज्य के ताम्रपत्रों पर उत्कीर्ण भूमि-दान के लेख आते हैं। वलभीपुर के मैत्रक वंशीय राजाओं ने अपने पूर्वजों का पुरातन शासकों का तीन सौ वर्ष का क्रमबद्ध इतिहास इनमें सुरक्षित रखा है। पूर्वजों की वंशावली लिखने की यह प्रथा गुर्जरों, चालुक्यों, राष्ट्रकूटों आदि अन्य राजवंशों में भी चालू रही है। मैत्रक-वंश का आदि गारुलक राजाओं की भी तीन सौ वर्ष लम्बी वंशावली प्राप्त होती है।

सोलंकी-काल गुजरात के इतिहास का स्वर्णकाल है। इसी समय में साहित्य आदि अन्य क्षेत्रों की तरह इतिहास-लेखन में भी पूर्ण प्रगति

हुई। इस प्रगति का सूत्रपात सिद्धराज जयसिंह और कुमारपाल के समकालीन हेमचन्द्राचार्य से होता है। 'भोज-व्याकरण' की स्पर्धा मे रचित 'सिद्ध-हेम-शब्दानुशासन' मे हेमचन्द्राचार्य ने प्रत्येक पाद के अन्त मे एक-एक श्लोक मे मूलराज से लेकर सिद्धराज तक सोलङ्की राजाओ की प्रशस्ति लिखी है। आगे चल कर इन्ही आचार्य ने चौलुक्य-वश-कीर्तिपरक, सस्कृत मे और कुमारपाल-चरित-विषयक प्राकृत मे, द्व्याश्रय नामक महाकाव्य की रचना की, जिसमे ठेठ मूलराज से लेकर कुमारपाल तक के राजाओ की चरित्र-प्रशस्ति लिखी गई है। गुजरात मे इस प्रकार का यह सबसे प्राचीन ग्रन्थ है। श्री दुर्गाशकर शास्त्री ने लिखा है कि मोटे-मोटे २८ सर्गो का विस्तृत महाकाव्य होते हुए भी इस राजवंश की महिमा को देखते हुए यह बहुत छोटा लगता है। फिर भी, जो कुछ महिमा इसमे वर्णित हुई है वह प्रमाणभूत होने के कारण इस समय के इतिहास के लिये बहुत उपयोगी है। यदि कलिकाल-सर्वज्ञ चाहते तो चालुक्य-राज्य की विपुल साधन-सामग्री के आधार पर विस्तृत इतिहास की रचना करके हमको लाभान्वित कर सकते थे।

सिद्धराज ने जिनको अपने बन्धु के समान अपनाया था उन कवि-चक्रवर्त्ती श्रीपाल ने भी 'आनन्दपुर-प्रशस्ति' मे चौलुक्य-वश और उसके भिन्न-भिन्न राजाओ की प्रशस्ति की रचना की है। कुमारपाल के समकालीन कवि यशश्चन्द्र कृत "मुदितकुमुदचन्द्र" और यश पाल-कृत "मोहराजपराजय" नामक नाटको मे तथा उसी समय में सोमप्रभाचार्य विरचित "कुमारपाल-प्रतिबोध" ग्रन्थ में तत्कालीन ऐतिहासिक महत्त्व का बहुत कुछ वर्णन हुआ है।

ऐतिहासिक चरित्रलेखन की प्रवृत्ति का अधिकतर विकास बाघेला सत्ता के उदयकाल मे अर्थात् तेरहवी शताब्दी के पूर्वार्द्ध मे हुआ। वीरधवल के मत्री वस्तुपाल ने स्वरचित "नरनारायणानन्द" महाकाव्य के अन्तिम सर्ग में अपने वश का वर्णन किया है। वस्तुपाल के विद्यामण्डल में से पांच-छ कवियो ने उसके धार्मिक कार्यों के प्रशस्तिविषयक काव्य रचे हैं और प्रत्येक कवि ने अपने काव्य के आरम्भ

में राजवंश-वर्णन का निरूपण किया है । अरिसिंह-कृत 'सुकृत संकीर्तन' और उदयप्रभ-कृत 'सुकृतकीर्तिकल्लोलिनी' में पाटण के चावड़ा-वंश से वर्णन आरम्भ हुआ है। कवियों के समय से पाँच सौ वर्ष पूर्व के इतिहास की यह रूपरेखा गुजरात के इतिहास-लेखन में बहुत महत्त्व का स्थान लिए हुए है। अन्य कवियों ने भी हेमचन्द्राचार्य का अनुकरण करते हुए मूलराज सोलंकी से राजवंश प्रशस्तियाँ आरम्भ की है। सोमेश्वर-कृत 'कीर्तिकौमुदी" जयसिंह सूरि रचित 'वस्तुपाल तेज-पाल प्रशस्ति' और बालचन्द्रसूरि प्रणीत 'बसन्त-विलास की प्रशस्तियाँ तुलनात्मक दृष्टि से विचारणीय हैं। इनमें सब से अधिक विस्तृत विवरण सोमेश्वर ने लिखा है। यह कवि महामात्य वस्तुपाल के विद्यामंडल का अग्रणी ही नहीं था वरन् पाटण के राजाओं का वंश परम्परागत पुरोहित भी था। इसी सोमेश्वर ने अपने "सुरथोत्सव' नामक अन्य काव्य के अन्तिम सर्ग में अपने वंश की प्रशस्ति भी लिखी है जिसमें इस के पूर्वजों के वृत्तान्त के साथ-साथ पाटण के प्राचीन राजाओं से सम्बद्ध कितने ही विशेष विवरण प्राप्त होते हैं। आबू-देलवाड़ा के आदिनाथ मन्दिर की प्रशस्ति और डभोई के वैद्यनाथ मन्दिर की प्रशस्ति भी इसी सोमेश्वर द्वारा रचित है। नरेन्द्रप्रभसूरि रचित 'वस्तुपाल प्रशस्ति' में भी चौलुक्य और बाघेला वंश के राजाओं का वर्णन आता है। धरणीधर ने भी उसी काल में स्वरचित देवपत्तन त्रिपुरान्तक की प्रशस्ति में राजा सारङ्गदेव और महत्तर त्रिपुरान्तक के पूर्वजों का वर्णन समाविष्ट किया है।

इसी समय के लगभग जैन लेखकों ने भी अनुश्रुतियों के आधार पर ऐतिहासिक वृत्तान्तों का संग्रह सम्पन्न किया। प्रभाचन्द्र रचित प्रभावक चरित (विक्रम संवत् १३४४) में देवसूरि और हेमचन्द्राचार्य के चरित्रों के माध्यम से सिद्धराज और कुमारपाल के समय की कितनी ही बातें तथा उक्त लेखों प्रभावकों के जीवन-प्रसंगों की तिथि क्रम सहित जानकारी प्राप्त होती है।

मेरुतुङ्ग-कृत "प्रवन्ध चिन्तामणि" की रचना सवत् १३६१ मे वढवाण मे हुई। गुजरात के प्राचीन ऐतिहासिक साहित्यिक साधनो मे यह ग्रन्थ सबसे अधिक उपयोगी सिद्ध हुआ है। इस में वनराज द्वारा पाटण की स्थापना से लेकर वस्तुपाल द्वारा सघटित यात्राओ के वृत्तान्त तक का क्रमवद्ध और तिथिक्रम सहित वर्णन हुआ है, यही इसकी विशेषता है। इस ग्रंथ की हस्त-प्रतियो में विभिन्न परम्पराएँ दृष्टिगत होती हैं।

मेरुतुङ्ग कृत "विचार-श्रेणी" नामक दूसरा ग्रन्थ है, जिसमे सूरिगण की पट्टावली के साथ-साथ चावडा, सोलङ्की और वाघेला-वश के नृपतियो का तिथिक्रम भी दिया गया है।

जिनप्रभ सूरि रचित "विविध-तीर्थ-कल्प" में शत्रुञ्जय, रैवतक अर्बुद, आदि जैन तीर्थों के निरूपण मे कितने ही ऐतिहासिक वृत्तान्तो का क्रमवद्ध विवरण प्राप्त होता है। वलभी-भग का निश्चित वर्ष भी इसी से ज्ञात होता है। धनेश्वर सूरि का "शत्रुञ्जय-माहात्म्य," भी, जिसमें शिलादित्य से लेकर समराशाह तक का वृत्तान्त आया है, वस्तुत इसी काल की रचना ज्ञात होती है।

"प्रवन्ध-चिन्तामणि" से कोई सत्तर वर्ष पीछे की रचना "प्रबन्ध-कोश" (चतुर्विंशतिप्रबन्ध) मे राजशेखर सूरि ने "प्रभावक चरित" और "प्रवन्ध-चिन्तामणि" की अपेक्षा विशेष वृत्तान्त लिखे हैं।

इसके सत्तर वर्ष वाद सोमतिलकसूरि ने और जयसिंह सूरि ने तथा वत्तीस वर्ष अनन्तर धनरत्न ने "कुमारपालचरित" लिखे।

तेरहवी और चौदहवी शताब्दी में गौर्जर, अपभ्रंश अथवा प्राचीन गुजराती में रेवन्त-गिरि रास,[1] पेथड़रास, कच्छूलीरास[1] और समरा-

---

१ इन दोनों के विशेष परिचय के लिए देखें — डॉ० 'हरीश' लिखित 'आदिकाल के अज्ञात हिन्दी रासकाव्य' – मंगल प्रकाशन, जयपुर।

रास जैसे काव्यों में समकालीन वृत्तान्तों का वर्णन प्राप्त होता है। चौदहवीं शताब्दी के अन्त में श्रीधर व्यास ने 'रणमल्ल छंद' नामक काव्य की रचना की। इसमें उसने पाटण की मुसलमान सेना के साथ ईडर के राव रणमल्ल के युद्ध का वर्णन किया है।

जयसिंह सूरि से सत्तर वर्ष पीछे रचित 'कुमारपाल प्रबंध' में जिनमण्डन गणि ने वनराज से लेकर कुमारपाल तक के राजाओं का संक्षिप्त किन्तु क्रमबद्ध वर्णन मिलता है।

वस्तुपाल-विषयक चरित्र-ग्रन्थों में जिनहर्ष रचित 'वस्तुपाल चरित' (सं १४९१) सुप्रसिद्ध है। यह ग्रन्थ वस्तुपाल के समय से दो सौ वर्ष पश्चात् लिखा गया था फिर भी इस से कितने ही नवीन विषयों की जानकारी प्राप्त होती है। इस ग्रन्थ में स्वाभाविकतया इतिहासतत्व की अपेक्षा काव्यत्व की प्रधानता है।

संवत् १४९ में रत्नमन्दिर गणि ने "भोज-प्रबन्ध' तथा 'उपदेश-तरङ्गिणी" में कितने ही ऐतिहासिक तथ्यों का उल्लेख किया है।

संवत् १४९१ में चारित्र्यसुन्दर गणि ने 'कुमारपाल चरित्र" की रचना की। पन्द्रहवीं सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दियों में भी प्राचीन गुजराती में 'कुमारपाल' और 'वस्तुपाल' विषयक अनेक रासो की रचना हुई है।

कर्ण वाघेला को परास्त करके अलाउद्दीन खिलजी ने गुजरात में दिल्ली की सूबेदारी कायम की। इसके लगभग १ वर्ष बाद अहमदा-बाद में स्वतन्त्र सल्तनत की स्थापना हुई। इस सल्तनत का संस्थापक जफरखान उपनाम मुजफ्फरशाह था। इसके राज्यकाल का इतिहास फारसी में 'तवारीख-ई-मुजफ्फरशाही' नामक ग्रन्थ में लिखा गया था जो अब उपलब्ध नहीं है। परन्तु, इसका विवरण 'मीरात-ई सिकन्दरी' में मिलता है।

इसके वंशज सुल्तान अहमदशाह ने अहमदाबाद बसाया। इसके राज्यकाल का पद्यबद्ध इतिहास "तवारीख-ई-अहमदशाही" हुल्वी शीराजी नामक कवि ने लिखा था। यह ग्रन्थ भी अब उपलब्ध नही है, परन्तु "मिरात-ई-सिकंदरी" और "मिरात-ई-अहमदी" में इस काव्य के कितने ही उद्धरण प्राप्त होते हैं।

चौलुक्य भीमदेव प्रथम के प्रसिद्ध दण्डनायक विमलशाह के विषय में "विविधतीर्थकल्प" और "भोज-प्रबन्ध" में कितने ही लेख मिलते है, परन्तु ठेठ वनराज के समय से राजदरबार में सुप्रतिष्ठित कुल के इस वंशज का विस्तृत वृत्तान्त लावण्यसमय रचित "विमल प्रबन्ध" में मिलता है, जो विमल मन्त्री से लगभग पाँच सौ वर्ष बाद सम्वत् १५७२ में लिखा गया था। इस रास से दस वर्ष पश्चात् इन्द्रसिंह ने "विमल-चरित्र" नामक सस्कृत ग्रन्थ की रचना की। इसी समय में लक्ष्मी-सागर सूरि और पार्श्वचन्द्र सूरि ने वस्तुपाल विषयक रासो का प्रणयन किया। धर्मसागर रचित 'प्रवचन परीक्षा' में चौलुक्यो का तिथिक्रम दिया गया है, इसी ग्रन्थकार की "तपागच्छ पट्टावली" में कितने ही सूरिओ का तिथिक्रम प्राप्त होता है। सत्रहवी शताब्दी में (सवत् १६७० वि०) ऋषभदास ने "कुमारपाल रासो" की रचना की।

पन्द्रहवी शताब्दी मे आरम्भ हुई फारसी में इतिहास-लेखन की प्रवृत्ति सोलहवी शताब्दी में अग्रेसर हुई। महमूदशाह बेगडा [1] के राज्यकाल (१४५८ से १५१२ ई०) के विषय में तीन इतिहास लिखे गये। तवारीख-ई-महमूदशाही, तबकाते महमूदशाही और माथीरे महमूदशाही। इन पुस्तको के लेखको के विषय मे मतभेद है। इनमें 'तबकाते महमूदशाही' "मिरात-ई-सिकन्दरी" के लेखक की लिखी हुई सी जान पड़ती है।

---

१. महमूदबेगडा के विषय मे कवि उदयराज ने "राजविनोद" नामक सप्तसर्गात्मक संस्कृत काव्य लिखा है, जो अनुवादक द्वारा सम्पादित होकर राजस्थान पुरातत्व मंदिर, जयपुर से प्रकाशित हुआ है।

महमूद बेगड़ा के पुत्र मुजफ्फरशाह द्वितीय का वृत्तान्त 'तवारीख-ई-मुजफ्फरशाही' में मिलता है ।

सुल्तान मुजफ्फरशाह द्वितीय (१५१२ से १५२३ ई०) से बहादुरशाह (१५२६ से १५३७) तक का हाल 'तवारीख-ई-बहादुरशाही' अथवा 'तबकाते हुसमखानी' में हुसमखाँ ने लिखा है परन्तु यह पुस्तक अब उपलब्ध नहीं है । अवश्य ही 'मिरात-ई-सिकन्दरी' और हाजी दबीर के अरबी इतिहास में इससे बहुत कुछ आधार ग्रहण किया गया है और इसी कारण बहादुर शाह के समय तक के इतिहास के विषय में इसकी उपयोगिता सूचित होती है । इन दोनों ग्रन्थों का आधार-स्वरूप 'तोहफत उस्सआदत' नामक ग्रन्थ था जिसमें आराम नामक कश्मीरी ने महमूदशाह तृतीय के समय (१५३८ से १५५४ ई) का इतिहास लिखा था । 'किताबुल मआसिरी महमूदशाही' में भी महमूदशाह तृतीय के समय तक का इतिहास प्राप्त होता है ।

बहादुरशाह से मुजफ्फरशाह तृतीय तक अर्थात् गुजरात की सल्तनत के अन्तिम समय तक का इतिहास मीर अबु तुराब वली ने लिखा है । इसका नाम 'तवारीख गुजरात' है परन्तु वास्तव में यह तवारीख-ई-मुजफ्फरशाही है । इसमें अकबर द्वारा गुजरात को लेने का विवरण दिया गया है ।

ये फारसी-इतिहास उक्त सुल्तानों के बखान की रीति से लिखे गये थे इसलिये इनमें प्रजा का विवरण प्राप्त नहीं होता है । यही इनकी सबसे बड़ी अपूर्णता है ।

की रीति से अपने ग्रन्थ का नाम "मिरात–ई–सिकन्दरी" अर्थात् "सिकन्दर की आरसी" रखा है। इस आरसी मे सुल्तानो के कृत्यो का यथातथ्य प्रतिबिम्ब दिखाना ही उसका अभिप्राय है। जिन बातो का प्रमाण प्राप्त नही हुआ उनके नीचे "खरी खोटी परवरदिगार जाने" ऐसी टिप्पणी दी है। १६२८ ई० मे जहाँगीर बादशाह अहमदाबाद गया था तब शाही बाग में रुस्तमबाडी के समीप सिकन्दर की हवेली के बाग में से लटकते हुए मीठे अंजीर उसने स्वय तोड कर खाये थे।

हाजी अदबीर अन्तिम सुल्तानो के समय मे मुहम्मद उलुग खाँ की सेवा में था। उसने गुजरात का अरबी इतिहास लिखा है, जिसका नाम 'जफरुल वालीह व मुजफ्फर व वालीह' है। इसमें उसने यहाँ के अमीरो के विषय में बहुत कुछ वृत्तान्त लिखा है। सन् १५०५ ई० के पश्चात् यह पुस्तक समाप्त हुई थी। तब से ३०० वर्ष गुप्त रहकर अन्त मे बीसवी शताब्दी के आरम्भ मे प्रकाश में आई है।

अकबर बादशाह के समय में जो हिन्दुस्तान के इतिहास लिखे गये उनमें गुजरात की सल्तनत का पूरा और क्रमबद्ध वर्णन मिलता है। ये इतिहास "तवारीख–ई–फरिश्ता", "अकबर नामा", "तबकात–ई–अकबरी" आदि हैं। इनमें से "तबकात–ई–अकबरी" का कर्ता ख्वाजा निजामुद्दीन अहमद इस सूबे का बख्शी रहा था और गुजरात मे खूब घूमा था इसलिये इसका लिखा हुआ इतिहास सबसे अधिक प्रामाणिक है।

गुजरात के फारसी–अरबी इतिहासों में अलीमुहम्मदखान का लिखा हुआ ग्रन्थ सर्वोत्तम माना जाता है। उसका पिता और वह स्वयं अन्तिम मुगल बादशाहों के समय में गुजरात के अमीर रहे थे। वह गुजरात का अन्तिम बादशाही दीवान था। उच्चपद पर नियुक्त होने के कारण राज्य के दफ्तर उसके हाथ में थे, और मिट्ठालाल कायस्थ जैसे अनुभवी अहलकारों का पूर्ण सहयोग उसको प्राप्त था। इस

महमूद बेगड़ा के पुत्र मुजफ्फरशाह द्वितीय का वृत्तान्त 'तवारीख-ई-मुजफ्फरशाही' में मिलता है।

सुल्तान मुजफ्फरशाह द्वितीय (१५१२ से १५२३ ई०) से बहादुरशाह (१५२६ से १५३७) तक का हाल 'तवारीख-ई-बहादुरशाही' अथवा 'तबकाते हुसमशामी' में हुसमखाँ ने लिखा है परन्तु यह पुस्तक अब उपलब्ध नहीं है। अवश्य ही 'मिरात-ई-सिकन्दरी' और हाजी दबीर के अरबी इतिहास में इससे बहुत कुछ आधार ग्रहण किया गया है और इसी कारण बहादुर शाह के समय तक के इतिहास के विषय में इसकी उपयोगिता सूचित होती है। इन दोनों ग्रन्थों का आधार-स्वरूप 'तुहफत उस्सआदात' नामक ग्रन्थ था जिसमें आराम नामक कश्मीरी ने महमूदशाह तृतीय के समय (१५३८ से १५५४ ई०) का इतिहास लिखा था। 'किताबुल ममासिरी महमूदशाही' में भी महमूदशाह तृतीय के समय तक का इतिहास प्राप्त होता है।

बहादुरशाह से मुजफ्फरशाह तृतीय तक अर्थात् गुजरात की सल्तनत के अन्तिम समय तक का इतिहास मीर अबु तुराब वली ने लिखा है। *इसका नाम 'तवारीख गुजरात' है परन्तु वास्तव में यह* तवारीख-ई-मुजफ्फरशाही है। इसमें अकबर द्वारा गुजरात को लेने का विवरण दिया गया है।

ये फारसी-इतिहास उक्त सुल्तानों के कलाम की रीति से लिखे गये थे इसलिये इनमें अन्य पक्षों का विवरण प्राप्त नहीं होता है। यही इनकी सबसे बड़ी अपूर्णता है।

सल्तनत का सम्पूर्ण स्वतन्त्र इतिहास इसके अन्त के पश्चात् जहाँगीर के समय में लिखा गया। सिकन्दर बिन मोहम्मद ने १६१२ ई० में 'मिरात-ई-सिकन्दरी' नामक इतिहास लिखा। उसने १५५४ ई० तक का वृत्तान्त पूर्व इतिहासों से लेकर शेष अपनी जानकारी के आधार पर इतिहास तैयार किया। इस ग्रन्थकर्ता ने प्रामाणिक इतिहासकार

की रीति से अपने ग्रन्थ का नाम "मिरात-ई-सिकन्दरी" अर्थात् "सिकन्दर की आरसी" रखा है। इस आरसी मे सुल्तानो के कृत्यो का यथातथ्य प्रतिविम्व दिखाना ही उसका अभिप्राय है। जिन वातो का प्रमाण प्राप्त नही हुआ उनके नीचे "खरी खोटी परवरदिगार जाने" ऐसी टिप्पणी दी है। १६२८ ई० मे जहाँगीर वादशाह अहमदावाद गया था तव शाही वाग में रुस्तमवाडी के समीप सिकन्दर की हवेली के वाग में से लटकते हुए मीठे अंगूर उसने स्वय तोड कर खाये थे।

हाजी अदवीर अन्तिम सुल्तानो के समय में मुहम्मद उलुग खाँ की सेवा में था। उसने गुजरात का अरवी इतिहास लिखा है, जिसका नाम 'जफरुल वालीह व मुजफ्फर व वालीह' है। इसमें उसने यहाँ के अमीरो के विषय में वहुत कुछ वृत्तान्त लिखा है। सन् १५०५ ई० के पश्चात् यह पुस्तक समाप्त हुई थी। तव से ३०० वर्ष गुप्त रहकर अन्त मे बीसवी शताव्दी के आरम्भ मे प्रकाश में आई है।

अकवर वादशाह के समय में जो हिन्दुस्तान के इतिहास लिखे गये उनमे गुजरात की सल्तनत का पूरा और क्रमबद्ध वर्णन मिलता है। ये इतिहास "तवारीख-ई-फरिश्ता", "अकवर नामा", "तवकात-ई-अकवरी" आदि हैं। इनमें से "तवकात-ई-अकवरी" का कर्ता ख्वाजा निजामुद्दीन-अहमद इस सूबे का वख्शी रहा था और गुजरात मे खूब घूमा था इसलिये इसका लिखा हुआ इतिहास सबसे अधिक प्रामाणिक है।

गुजरात के फारसी-अरबी इतिहासो में अलीमुहम्मदखान का लिखा हुआ ग्रन्थ सर्वोत्तम माना जाता है। उसका पिता और वह स्वयं अन्तिम मुगल वादशाहों के समय में गुजरात के अमीर रहे थे। वह गुजरात का अन्तिम वादशाही दीवान था। उच्चपद पर नियुक्त होने के कारण राज्य के दफ्तर उसके हाथ में थे, और मिट्ठालाल कायस्थ जैसे अनुभवी अहलकारों का पूर्ण सहयोग उसको प्राप्त था। इस

पुस्तक का नाम 'मिरात-ई-अहमदी' है। प्रारम्भ में गुजरात का सामान्य वर्णन करके राजकीय विभागों और सरकारी आय का विवरण दिया गया है। इसके पश्चात् चावड़ा[1] सोलंकी [1]वाघेला राजवंशों की विवरणी दी गई है। तदनन्तर दिल्ली के समय का इतिहास है। तत्पश्चात् 'मिरात-ई-सिकन्दरी' के आधार पर गुजरात के सुल्तानों का संक्षिप्त इतिहास लिखा गया है। मुगलकाल के १५७३ से १७११ ई तक के इतिहास का आधार 'अकबर-नामा' 'जहांगीर-नामा' 'शाहंशाह-नामा' तथा दफ्तरों में प्राप्त फरमानों पर रक्खा गया है। परन्तु इसके बाद अस्तोन्मुख मुगल-सत्ता का इतिहास ग्रन्थकर्ता ने अपने पिता की और निज की जानकारी के आधार पर ही लिखा है। मुगलसत्ता के स्थान पर मरहठा-सत्ता जमने पर इसको बादशाहों का आश्रय नहीं रहा। इसका इतिहास १७६१ ई की पानीपत की तीसरी लड़ाई तक पहुँचता है। इस प्रकार ठेठ चावड़ा-काल से एक हजार वर्ष तक का क्रमबद्ध इतिहास सर्वप्रथम इस पुस्तक में संकलित हुआ। 'मिराते अहमदी' की पूर्णिका में लेखक ने गुजरात की भौगोलिक, राजनैतिक सामाजिक धार्मिक और आर्थिक स्थितियों का भी पूरा विवरण दिया है।

इसी समय में अर्थात् १४ से १७५० ई के बीच में गुजरात के इतिहास से सम्बद्ध दो उपयोगी ग्रन्थ लिखे गये जिनका ठीक-ठीक समय निश्चित करना कठिन कार्य है। पहला ग्रन्थ "धर्मारण्य-माहात्म्य" नामक मोढ पुराण है जिसमें मोढेरा तीर्थ और चावड़ा-वंश का विवरण मिलता है। ऐसा प्रतीत होता है कि इसकी रचना लगभग पन्द्रहवीं शताब्दी में हुई थी। दूसरा ग्रन्थ कृष्ण कवि द्वारा हिन्दी पद्यों में निगुम्फित 'रत्नमाला' है जो सम्भवतः सत्रहवीं अथवा अठारहवीं शताब्दी में रचित है। मूलग्रन्थ में १८ काव्यरत्नों की योजना उद्दिष्ट हुई जान पड़ती है परन्तु अभी तक इसके आठ ही रत्न उपलब्ध हुए हैं जिनमें जयशेखर और वनराज चावड़ा के वर्णन मिलते हैं। यदि यह सम्पूर्ण ग्रन्थ मिला होता तो अन्य हिन्दू राजवंशों का भी

विवरण उपलब्ध हो सकता था। ये दोनो ग्रन्थ जैनेतर लेखको के होने के कारण जैन-परम्परा से भिन्न परम्परा का ज्ञान प्राप्त करने मे अधिक उपयोगी सिद्ध हुए हैं।

मरहठा-सत्ता के आरम्भ मे "मिरात-ई-अहमदी" लिखी गई और अन्त मे "गुर्जरदेश भूपावली" नामक सस्कृत प्रबन्ध की रचना हुई। इस ग्रन्थ का रचयिता भडोच निवासी रङ्गविजय यति था, जिसने १८०६ ई० मे इस ग्रन्थ को लिखा। उस समय भडौंच मे नवाबी समाप्त होकर अग्रेजो की सत्ता जम रही थी। इस पुस्तक मे महावीर-निर्वाण से लेकर रचयिता के समय तक के राजाओ के राज्यकाल का विवरण दिया गया है, अर्थात् तेवीस शताब्दियो के क्रमबद्ध इतिहास की रूप-रेखा इसमे आलेखित हुई है। इसमे चावडो से पूर्व गुर्जर प्रतिहारो की वंशावली भी दी गई है, जो ध्यान देने योग्य है। इससे पूर्व की वशावली तथा अन्य वशावलिया ऐसी हैं, जो अभी तक पौराणिक मानी जाती हैं।

इसी समय मे जूनागढ के नवाब बहादुरखान के दीवान रणछोडजी अमरजी ने १८२५ ई० में "तवारीख सोरठ व हालार" नामक पुस्तक मे सौराष्ट्र के दो महत्वपूर्ण प्रदेशो का इतिहास तैयार किया। उस समय अहमदाबाद और इसके आस पास के प्रदेशो में अग्रेजी शासन की जड जम रही थी।

अग्रेजी शासन का आरम्भ होने के बाद अंग्रेज भी गुजरात का इतिहास लिखाने मे रस लेने लगे थे। १८३४ ई० में जेम्स लेड ने "पोलिटिकल एण्ड स्टेटिकल हिस्ट्री ऑफ गुजरात" नामक पुस्तक लिखी, जिसमे मिराते अहमदी के बहुत से अश के अनुवाद के साथ वनराज से अकबर तक का इतिहास लिखा है। १८४६ ई० में ब्रिग्स कृत "सिटीज ऑफ गुर्जर राष्ट्र" प्रकाशित हुआ। अहमदाबाद के अग्रेजी विद्यालय के विद्यार्थी एदलजी डोसा भाई ने गुजराती भाषा में पहले पहल

'गुजरात नो इतिहास' तैयार किया जो १८२ ई० में लीथोग्राफ से मुद्रित हुआ। लगभग २५० पृष्ठ की इस पुस्तक में चावड़ा सोलंकी वाघेला वंशों का इतिहास केवल पाँच पृष्ठों में पूरा कर दिया गया है। इसके एक दो वर्ष बाद ही लेखक ने अहमदाबाद नो इतिहास" प्रकाशित किया।

इसी बीच में भड़ौच के श्री रणछोड़दास गिरधर भाई ने 'ब्रिटिश हिन्दुस्तान नो इतिहास' 'मिसिर लोकों नो इतिहास' और 'मीडीज अने ईरानी लोकोनो इतिहास' तैयार किये।

उन्नीसवीं शताब्दी के तीसरे चरण में सबसे महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ अलकजेंडर किन्लॉक फार्बस ने अंग्रेजी में तैयार किया जिस पर इस इतिहास विषय का स्तम्भ प्रतिष्ठित हुआ। अहमदाबाद और सूरत में काम करते हुए इस विद्वान ने इन दोनों नगरों में ग्रन्थासकर्ताओं के मण्डल और सामयिक साहित्य की रचना की। अहमदाबाद में गुजरात वर्नाक्यूलर सोसाइटी (वर्तमान गुजरात विद्या-सभा) और 'बुद्धिप्रकाश' अद्यापि वर्तमान हैं। 'सूरत अट्ठावीसी' और सूरत समाचार' अपेक्षाकृत अल्प जीवी निकले। फार्बस की निवृत्ति के समय बम्बई में स्थापित 'गुजराती सभा' जो आगे चलकर 'फार्बस गुजराती सभा' हो गई, उसका दूसरा चिरञ्जीवी स्मारक है। फार्बस ने ऐतिहासिक प्रबन्धों और रासों तथा फारसी और अंग्रेजी इतिहासों के आधार पर गुजरात का प्राचीन इतिहास तैयार किया जो 'रासमाला' नाम से १८२६ मे प्रकाशित हुआ। इस ग्रन्थ के द्वारा गुजरात के इतिहास को आधुनिक रूप में लिखने में पहल करने वाले फार्बस ने गुजरात की वही सेवा की है जो टॉड ने राजस्थान की और ग्रांट डफ ने महाराष्ट्र की। इसी ग्रन्थ के आधार पर १८९० ई० में गुजरात वर्नाक्यूलर सोसाइटी ने 'गुजरात देशनो इतिहास' तैयार कराया जिसमें ९६ में से ३२ पृष्ठ हिन्दू राजवंशों के वर्णन में लिखे हुए हैं।

अनेक विद्याओ मे पारंगत कवि नर्मद ने इतिहास-लेखन में भी महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया है। १८६५-६६ ई० में "सूरत नी मुखतेसर हकीकत" नामक स्थानीय इतिहास उन्होने लिखा जिसमें १५११ ई० से १८६५ ई० तक का सक्षिप्त वृत्तान्त दिया गया है। इसके लिए कवि नर्मद को फारसी साहित्य तथा लोककथा सम्बन्धी साधन-सामग्री एकत्रित करने में ६ मास का समय लगा था। उन्होने प्रस्तावना में लिखा है "इस छोटे से ग्रन्थ को तैयार करने में मुझे जो श्रम करना पडा है उससे मुझे विश्वास हुआ है कि इतिहास लिखना बहुत कठिन कार्य है और जिन लोगो ने इतिहास के मोटे-मोटे ग्रन्थ लिखे हैं वे धन्य हैं।"

अब इनिहास-लेखन के लिए साहित्य के उपरान्त प्राचीन लेख और पुरातन अवशेषों के रूप मे भी साधन सामग्री का संशोधन आरम्भ हुआ। १८६७ ई० में ईलियट और डॉसन ने भारतीय इतिहास से सम्बद्ध फारसी-अरबी ग्रन्थो के अनुवाद प्रकाशित करना शुरू किया। पं० भगवानलाल इद्रजी, डा० भाऊ दाजी, बरजेस, डा० ब्यूलर आदि ने शिलालेखो और ताम्रपत्रो पर उत्कीर्ण सामग्री को पढ़कर उनके ऐतिहासिक महत्त्व प्रकट किये। इन्ही लोगो ने प्राचीन स्मारकों की भी शोध-खोज आरम्भ की। होप और फर्ग्यूसन दोनों ने अहमदाबाद के स्थापत्य के विषय में (१८६६), डभोई, अहमदाबाद, थान, जूनागढ और ढाक के पुरातन स्मारको के विषय में (१८७५) और काठियावाड़ तथा कच्छ के पुरातन अवशेषो के विषय में (१८७६) पुस्तके तैयार की।

फरामजी बमनजी नें "गुजरात अने काठियावाड़ देशनी वातो" लिखी। आत्माराम केशवजी द्विवेदी ने "कच्छ देश नो इतिहास" रचा। नवलराम लक्ष्मीराम ने "इंग्लेण्ड नो इतिहास" की रचना की। कवि नर्मद ने बीसों ग्रन्थो का अध्ययन करके ईसा की पांचवीं शताब्दी से लेकर वर्तमान काल पर्यन्त "जगत् का इतिहास" लिखा जो "राज्यरंग" भाग १-२ के रूप में १७७५-७६ ई० में प्रकाशित हुआ।

१८६८ ई॰ में नन्दशंकर तुलजाशंकर ने "करण घेलो" नामक ऐतिहासिक नवल कथा लिखी। तभी से गुजरात में ऐतिहासिक नवल कथाएँ लोकप्रिय हो रही है। महीपतराम रूपराम ने वनराज चावड़ा और सिद्धराज जयसिंह पर नवलकथाएं लिखी हैं। नवलराम ने 'वीरमती' और भीमराव भोलानाथ ने 'दवलदेवी' नामक ऐतिहासिक नाटक लिखे हैं। हरगोविन्ददास कांटावाला ने 'पाणीपत' नामक ऐतिहासिक काव्य लिखा। इस ऐतिहासिक मण्डित साहित्य ने इतिहास-लेखन में ही नहीं अपितु ऐतिहासिक प्रसगों में भी जनसाधारण की रुचि बढ़ाने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है।

इसी समय मे अंग्रेजी सरकार ने बम्बई प्रान्त का सर्व-संग्रह (Survey) तैयार करने की विविध विषयक योजना बनाई। इस सर्व संग्रह के सम्पादक के रूप मे जेम्स केम्पबेल की नियुक्ति १८७३ ई॰ मे हुई। पुरातत्त्व विषय का कार्य बरजैस को और गुजरात के प्राचीन इतिहास विभाग का कार्य डा॰ ब्यूलर को सौंपा गया। परन्तु पुरातत्त्व विषय की योजना गुजरात के साथ और अप्रिम पुरातत्त्वविद् पं॰ भगवानलाल इन्द्रजी को सौपनी पड़ी। बम्बई प्रान्त के सर्व-संग्रह का सूरत और भड़ौंच जिला-सम्बन्धी दूसरा भाग १८७७ मे खेड़ा और पचमहाल से सम्बद्ध तीसरा भाग और अहमदाबाद जिले का चौथा भाग १८७९, गुजरात के देशी राज्यों सम्बन्धी पांचवां भाग और छठा भाग १८८० मे बड़ौदा राज्य विषयक सातवाँ भाग १८८३ में और काठियावाड़ सम्बन्धी आठवां भाग १८८४ई में प्रकाशित हुआ। इसी बीच मे गुजरात के इतिहास मे मुसलमान और मराठा-काल से सम्बद्ध अंश क्रमशः वाटसन और बेर्ड ने तयार करके प्रस्तुत कर दिये थे परन्तु प्राचीनकाल से अनुक्रम बैठाने मे विलम्ब हो रहा था। पं॰ भगवानलाल इन्द्रजी ने बारह तेरह वर्ष तक डा॰ भाऊदाजी की सहायता से शिला प्राप्त करके ताम्रपत्रों मुद्राओं और हस्तपत्रों के अभ्यास द्वारा भारत के इतिहास का बहुत कुछ सशोधन किया था। पुरातत्त्व के इस प्रकार

विद्वान् को लेयडन यूनिवर्सीटी ने डाक्टरेट की मानद उपाधि अर्पित की थी, इसी प्रकार हॉलेण्ड और ब्रिटेन की प्राच्य सस्थाओ ने उनको अपने सम्मान्य सभ्य का सम्मान अर्पित किया था। डाक्टर ब्यूलर के स्थान पर इस प्रकार के इस भारतीय मित्र ने गुजरातमें ऐतिहासिक अध्ययन की क्रमबद्ध योजना सघटित की थी, परन्तु १८८८ई० मे ४९ वर्ष की अवस्था में अकाल ही में वे कालकवलित हो गये। अन्त मे उनके द्वारा एकत्रित साधन-सामग्री के आधार पर जेक्सन ने गुजरात का प्राचीन इतिहास का काम पूरा किया और बम्बई प्रान्त के सर्व-सग्रह का प्रथम भाग "हिस्ट्री ऑफ गुजरात" के नाम से १८९६ ई० मे प्रकाशित हुआ। यह इतिहास गुजरात का सबसे विस्तृत आधारभूत और पद्धतियुक्त इतिहास माना जाता है। 'रासमाला'में समाविष्ट दन्तकथाओ के तत्व को छोडकर इसमें इतिवृत्त का सप्रमाण आलेखन हुआ है। गुजरात की जातियो विषयक विवरणी को लेकर सर्वसग्रह का नवा भाग पृथक प्रकाशित हुआ है।

इतिहास-सशोधन के क्षेत्र मे डा० भगवानलाल इन्द्रजी द्वारा गुजरात की ओर से यह भारत को समर्पित अनमोल भेट गिनी जाती है। डा० ब्यूलर, जेम्स केम्पबेल, प्रो० कर्न और डा० भाण्डारकर के वे सह-कार्यकर्ता और कितनी ही बातो में उनके मार्गदर्शक थे। उन्ही के समय मे श्री व्रजलाल शास्त्री (श्री हरप्रसाद शास्त्री के पितामह) जैसे अनेक विद्वानो की प्राचीन इतिहास और लेखविद्या के अभ्यास मे रुचि उत्पन्न हुई। डा० भगवानलाल इन्द्रजी के अल्पायुष्य मे निधन हो जाने से गुजरात और भारत की बहुत बडी क्षति हुई।

बम्बई प्रान्त के सर्वसग्रह की पुस्तको के प्रकाशित होने पर गुजराती में अनुवाद की प्रवृत्ति भी आगे बढी।

फार्बस ने अपनी रासमाला का गुजराती अनुवाद कराने का विचार किया। उसका यह मनोरथ फार्बस गुजराती सभा ने पूरा किया। यह अनुवाद दीवान बहादुर रणछोड भाई उदयराम ने किया है। इसकी

पहली दूसरी और तीसरी आवृत्तियों में अनुवादक ने प्रसङ्गोपात्त कितने ही संशोधन-अनुसोधन के निष्कर्ष समाविष्ट किये हैं।

इतिहास के अनुवाद की प्रवृत्ति में कवि नर्मद ने भी पिछले वर्षों में सक्रिय ख्याति प्राप्त की है। बम्बई प्रान्त के सर्वसंग्रह के अन्तर्गत गुजरात के जिलों से सम्बद्ध भागों के प्रकाशित होते ही नर्मद ने तुरन्त 'गुजरात सर्वसंग्रह' तैयार किया जो उसकी मृत्यु के तीन वर्ष बाद १८८७ ई० में प्रकाशित हुआ। वॉटसन के अनुरोध से नर्मद ने काठियावाड़ सम्बन्धी 'सर्वसंग्रह' का भी अनुवाद किया, जो उसकी मृत्यु के अगले वर्ष में प्रकट हुआ। "गुजरात सर्वसंग्रह" में नर्मद द्वारा संकलित गुजरात का इतिहास भगवानलाल के बाद प्रकाशित हुए इतिहास का पुरोगामी कहा जा सकता है। १८८६ ई मे बेले ने अंग्रेजी में गुजरात का इतिहास प्रकाशित किया।

इसी समय में गुजरात राज्य की ओर से प्राकृत संस्कृत तथा अरबी-फारसी के लेखों का संग्रह प्रकाशित किया गया। इसी प्रकार श्री बालाशंकर उल्लासराम कन्थारिया ने इतिहासमाला नामक पत्र के द्वारा फारसी के ऐतिहासिक ग्रन्थों का अनुवाद करने की प्रवृत्ति आरम्भ की। इस प्रवृत्ति को जूनागढ़ के नवाब ने बहुत कुछ प्रोत्साहन दिया।

बरजेस और कजिन्स ने बम्बई प्रान्त के पुरातन अवशेषों की संस्मरणी (Memoirs) प्रकाशित की जिसमें गुजरात के अनेक स्मारकों और लेखों का समावेश हुआ है।

१८९६ ई में बम्बई प्रान्त के सर्वसंग्रह के अन्तर्गत अंग्रेजी में जो 'गुजरात का इतिहास' प्रकाशित हुआ था उसी का मुख्य आधार लेकर श्री गोविंद भाई हाथी भाई देसाई ने १८९८ ई० में "गुजरात का प्राचीन इतिहास' तथा गुजरात का अर्वाचीन इतिहास तैयार किये। गुजराती भाषा में इस विषय को लेकर चार दशकों तक ये पुस्तकें मुख्य रूप से प्रतिष्ठित मानी गई थी।

बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ मे बरजेस और कजिन्स ने अहमदाबाद

और उत्तर गुजरात के स्थापत्य के विषय मे पुस्तक लिखी। गुजरात के मध्य-कालीन इतिहास के विषय मे अत्यन्त उपयोगी ग्रन्थ "मिराते अहमदी" के अनुवाद का कार्य १९१३ ई० में आरम्भ हुआ। १९१६ ई० में लविबफोर्स बेले ने अंग्रेजी में काठियावाड का इतिहास तैयार किया। प्रो० होदीवाला ने मुस्लिम सिक्को और मराठा इतिहास के विषय मे संशोधन किया। १९२० ई० में 'गुजराती साहित्य परिषद्' में इतिहास विभाग की स्थापना हुई जिसके प्रथम प्राध्यापक श्री बलवंतराय कल्याणराय ठाकोर नियुक्त हुए।

१९२१ ई० में गुजरात विद्यापीठ मे 'पुरातत्त्व-मन्दिर' नामक शाखा स्थापित हुई, जिसके अध्यक्ष मुनि जिनविजयजी ने प्राचीन पुस्तको तथा प्राचीन लेखो के सशोधन में अमूल्य योग प्रदान किया। इसी समय में मुनि जी द्वारा सगृहीत और सम्पादित "प्राचीन जैन लेख सग्रह" भाग १ व २ प्रकाशित हुए। डा० भगवानलाल के बाद कितने ही अशो मे अखिल भारतीय पुराविद् इन्ही को माना जा सकता है। पुरातत्त्व-मन्दिर के मन्त्री के रूप में श्री रामनारायण पाठक और श्री रसिकलाल परीख "पुरातत्त्व" नामक सामयिक शोध-पत्र का सम्पादन करते थे, जिसने पाच वर्ष की अल्प आयुष्य मे ही कितने ही महत्त्वपूर्ण लेखो को चिरजीवी महत्त्व प्राप्त करा दिया है।

इस समय के लगभग ही प्रो० कामदार ने भारत के अर्वाचीनकाल का इतिहास अंग्रेजी मे दो जिल्दो मे प्रकाशित किया (१९२२, १९२४)।

इसी समय में श्री चुनीलाल व० शाह, श्रीनारायण बसनजी ठक्कुर, श्री कन्हैयालाल माणिक्यलाल मुन्शी आदि की ऐतिहासिक नवल-कथाओ ने लोक में मान्यता प्राप्त की। यथा "गुजरात नी जूनी वार्ता" (१८९३), "पद्मिनी" (१९१०), "बहादुरशाह" (१९११), "बादशाह बाबर" (१९२०), "रजिया बेगम" (१९२१), "धारा नगरी नो मुञ्ज" (१९२१), "सोरठी सोमनाथ", "पाटणनी प्रभुता" (१९१६), "वसैनो घेरो" (१९१६), "गुजरातनी गर्जना" (१९२०), "गुजरात नो नाथ" (१९१८, १९१९), "पृथ्वी वल्लभ" (१९२०, २१),

"राजाधिराज" (१६२२–२३) "महारानी मयरणल्ला" (१६२४) 'भगवमग्ना' अथवा 'बसमीपुरनो विनास (१६१७) और पराधीन गुजरात" (१६२४)। धूमकेतु का उदय सच ही हुआ था। 'राजमुकुट' (१६२४) और 'पृथ्वीश' (१६२५) में प्रकट हुई। इन नवल कथाओं ने अमित-साहित्य के वाचक-वर्ग की इतिहास प्रसंगों के प्रति अभिरुचि बढ़ाने में महान् योग दिया।

बीसवीं शताब्दी की पहली पच्चीसी की अपेक्षा दूसरी पच्चीसी में इतिहास-संशोधन के कार्य में और भी अधिक प्रगति हुई। प्रोफेसर अल्तेकर ने १६२६ ई में गुजरात-काठियावाड़ के मुख्य शहरों के विषय में अंग्रेजी में पुस्तक लिखी। १६२८ ई० में श्री दुर्गाशंकर के० शास्त्री ने 'गुजरातनां तीर्थस्थानो' नामक पुस्तक लिखी। १६२६ ई० में रत्नमणिराव भीमराव ने 'गुजरातनु पाटनगर अमदावाद' नामक स्वार्ह ग्रन्थ तैयार किया। १६३१ ई० में कजिंस ने काठियावाड़ के प्राचीन देवालयों के विषय में ग्रन्थ प्रकाशित किया।

इसी बीच में शेख़ गुलाम मोहम्मद ने उर्दू में 'तारीखे मुस्तफाबाद' और सय्यद गुलाम मियाँ साहब ने 'तारीखे पालनपुर' तैयार की। १६३१ ई में फार्बस की कृति के पूरक के रूप में कवि दलपतराम ने पूर्व में एकत्र की हुई गुजरात की ऐतिहासिक बातों का प्रकाशन किया। १६३५ में रत्नमणिराव ने 'खम्भातनो इतिहास' नामक दूसरे चिरस्मरणीय ग्रन्थ की रचना की और श्री कन्हैयालाल दवे ने "वड़नगर' विषयक पुस्तक लिखी। १६४० में श्री हीरानन्द शास्त्री ने 'ग्रम्स ऑफ डभोई' नामक पुस्तक प्रकट की। स्वराज्य प्राप्ति के अनन्तर सोमनाथ के पुनरुद्धार के प्रसंग में रत्नमणिराव ने 'सोमनाथ नो संकलित इतिहास' तैयार किया।

१६२७ई मे रत्नमणिराव ने गुजरातनो सांस्कृतिक 'पुस्तक लिखी। श्री मानशंकर पी मेहता ने 'नागरोत्पत्ति' (१६२३) और 'मेवाड़ना गाहिलो ग्रन्थ लिखे।

१९३६ ई० मे मुनि श्री पुण्यविजयजी ने "भारत की जैन श्रमण संस्कृति और लेखन कला" विषयक अभ्यासपूर्ण लेख तैयार किया जिसको श्री साराभाई नवाब ने "चित्रकल्पद्रुम" मे ग्रन्थस्थ किया। इसी वर्ष श्री इनामदार ने ईडर राज्य के पुरातन अवशेषो के विषय में और श्री हीरानन्द शास्त्री ने गिरनार-स्थित अशोक के शिलालेख के विषय मे अंग्रेजी पुस्तिका लिखी। इसी प्रकार जीन्स और बनर्जी ने बडोदा के गायकवाडों के अंग्रेजी दस्तावेजों को प्रकट किया।

स्वतन्त्रता सग्राम के समकालीन इतिहास में महात्मा गांधी ने "दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह का इतिहास" (१९२४) और श्री महादेव भाई देसाई ने "बारडोली सत्याग्रह" (१९२८) नामक पुस्तके लिखी।

१९३६ से १९४० ई० के बीच में श्री त्रिभुवनदास ल० शाह ने प्रायः गृहीतार्थके आधारपर 'प्राचीन भारतवर्ष'नामक ग्रन्थमाला में बहुत कुछ क्रान्तिकारी विचार-सरणी का प्रसार किया। १९३७–३८ ई० में दक्षिण गुजरात के वांसदा धर्मपुर आदि राज्यो के इतिहास लिखे गये। १९३९ मे कोकिल ने ग्यारहवी शताब्दी से पूर्व के गुजरात मुस्लिम सम्बन्धो के विषय मे अध्ययनपूर्ण टिप्पणी लिखी तथा श्री भोगीलाल सांडेसरा ने "बाघेलाओनु गुजरात" लिखा। १९४० ई० में श्री मणिभाई द्विवेदी ने "पुरातन दक्षिण गुजरात" नामक पुस्तक लिखी और श्री कन्हैयालाल दवे ने सरस्वती पुराण की ऐतिहासिक मीमांसा की। १९४१ मे सैयद अबू जफर नदवी ने 'रणमल छन्द' के विषय में, १९४२ में श्री साराभाई नवाब ने जैन तीर्थों के विषय में तथा श्री रामलाल मोदी ने 'द्वयाश्रय' के विषय में और सैयद अबू ज़फर नदवी ने 'मुजफ्फर शाही' के विषय में मीमांसाए कीं। श्री अमृत वसन्त पण्ड्या ने "ब्रह्म कल्ट इन् गुजरात" और प्रो० फीरोज कावसजी दावर ने "ईराननी संस्कृति" विषयक पुस्तकें लिखी।

भारत के इतिहास ग्रन्थो में विशिष्ट मान्यता प्राप्त स्मिथ कृत "अरली हिस्ट्री ऑफ इण्डिया" का गुजराती अनुवाद गुजरात वर्नाक्यूलर

सोसाइटी की ओर से १९१२ और ३५ में दो भागों में प्रकट हुआ।

१९३२ में फॉर्बस गुजराती सभा के तत्वावधान में श्री दुर्गाशंकर शास्त्री ने 'गुजरातना मध्यकालीन हिन्दू राजपूत युगना इतिहासना प्रबन्धात्मक साधनो' विषय पर और १९३३ में गुजरात साहित्य सभा के समक्ष मुनि श्री जिनविजयजी ने "प्राचीन गुजरातना सांस्कृतिक इतिहासनी साधन सामग्री" विषय पर अध्ययनपूर्ण व्याख्यान दिये जिनको सम्बन्धित संस्थाओं ने पुस्तिकाओं के रूप में प्रकाशित किये हैं। इसी बीच में प्रो॰ कामदार ने भारत का मुगलकाल नामक अंग्रेजी पुस्तक (१९२८) के उपरान्त हिन्दुस्तान का इतिहास (१९२७–२८) तथा इग्लैण्ड का इतिहास (१९२९) गुजराती में प्रकट किये।

१९१२ ई॰ में प्रो॰ कॉमिसरिएट ने 'स्टडीज इन दी हिस्ट्री ऑफ गुजरात" प्रकाशित किया। १९४ –४१ में श्री हीरानन्द शास्त्री ने गुजरात वर्नाक्यूलर सोसाइटी के अनुस्नातक विभाग के समक्ष पुरातत्त्व और इतिहास विषयक व्याख्यान दिये जो १९४४ ई॰ में प्रकाशित हुए। इनमें से एक व्याख्यान गुजरात काठियावाड़ के मुख्य स्मारकों के विषय में और दूसरा यहाँ के सांस्कृतिक इतिहास की साधन-सामग्री के विषय में है। १९१ में डा॰ सांकलिया का "स्टडीज इन दी हिस्टोरिकल एण्ड कल्चरल ज्योग्राफी एण्ड इथ्नोलोजी" प्रकाशित हुआ जिसमें लेखक ने गुजरात के प्राचीन स्थानों और मनुष्यों से सम्बन्धित सर्वोत्तम धारा का दिग्दर्शन किया है।

महाराजा सयाजीराव गायकवाड़ की प्रेरणा से बड़ोदा में सप्तम अखिल भारतीय प्राच्य परिषद् का सम्मेलन १९३१ ई॰ में हुआ और १९३४ ई॰ मे बड़ोदा राज्य के पुरातत्त्व विभाग की स्थापना हो गई। इसके अध्यक्ष के रूप मे आर्क्योलोजिकल सर्वे के निवृत्त अधिकारी श्री हीरानन्द शास्त्री की नियुक्ति हुई। इन्होंने अमरेली मूल द्वारका कामरेज और पाटन में खुदाई कराकर बड़ोदा राज्य के इन प्राचीन स्थलों के अन्वेषणों को प्रकाश में ला दिया। इस विभाग की प्रगति

का सकलित विवरण श्री हीरानन्द शास्त्री के उत्तराधिकारी श्री गद्रे ने १९४७ ई० में प्रकाशित किया है।

फार्वस गुजराती सभा की ओर से श्री गिरिजाशंकर वल्लभ जी आचार्य ने वाघेला काल पर्यन्त गुजरात के ऐतिहासिक लेखो का संग्रह तैयार किया जिसका पहला भाग १९३३ में दूसरा १९३५ में और तीसरा १९४२ में प्रकट हुआ। १९४३-४४ में बडोदा राज्य के पुरातत्त्व विभाग की ओर से वहा के महत्त्वपूर्ण प्राचीन मुस्लिम लेखो का सग्रह प्रकाशित हुआ। १९४४ मे श्री डीस कल्कर ने मध्यकालीन एव अर्वाचीन काल के काठियावाड के उत्कीर्ण लेखो का सग्रह अग्रेजी मे तैयार किया। गुजरात का इतिहास तैयार करने में उत्कीर्ण लेखो का यह सग्रह अमूल्य साधन-सामग्री की पूर्ति करता है

मौर्यकाल से सोलकी काल तक के शिलालेखो और ताम्र-पत्रो का संग्रह तैयार होते-होते १९३६ से १९४० ई० तक के पाच वर्षों में गुजरात के अद्यतन इतिहास की निर्माण की प्रवृत्ति ने एक विचित्र वेग धारण किया। बम्बई प्रान्त के सर्वसग्रह के अन्तर्गत प्रकटित इतिहास को चार दशक बीत चुके थे और इस लम्बे समय के बीच में प्राचीन ग्रन्थो लेखो और अवशेषो के रूप में कितनी ही नई सामग्री हाथ लग चुकी थी। अत इस सामग्री के आधार पर आवश्यक सशोधन-परिवर्धन करते हुए नए सिरे से इतिहास लिखने के समय का परिपाक हो चुका था। इस दिशा में श्री दुर्गाशकर शास्त्री ने पहल की और 'गुजरात का मध्यकालीन राजपूत इतिहास' तैयार किया जिसमें मुख्यतः सोलकी समय का इतिहास मूल साधनो के आधार पर तर्क शुद्ध रीति से लिखा गया है। यह अमूल्य ग्रन्थ गुजरात वर्नाक्यूलर सोसाइटी की ओर से १९३७ और १९३९ में दो भागो मे प्रकाशित हुआ। १९३८ में हेमचन्द्राचार्य के काव्यानुशासन की सम्पादकीय प्रस्तावना में श्री रसिकलाल परीख ने प्राचीन काल से ग्रन्थकर्त्ता श्री हेमचन्द्राचार्य तक के समय का राजकीय एव सांस्कृतिक इतिहास की क्रमवद्ध अद्यतन रूपरेखा अंग्रेजी में अवतरित की है। प्रो० कोमिसेरियेट ने "हिस्ट्री ऑफ गुजरात" के

प्रथम पुस्तक के रूप में मुस्लिम कालीन इतिहास का अमूल्य ग्रन्थ इसी वर्ष में प्रकट किया जिसमें खिल्जी वंश के सूबेदारों से लेकर गुजरात के अन्तिम सुल्तान तक का इतिहास फारसी-अरबी ग्रंथों तथा उत्कीर्ण लेखों और स्थापत्य-स्मारकों के आधार पर अविच्छिन्न विपुल प्रमाणभूत सामग्री के साथ आलेखित है।

१९३६ से १९४० तक के इन्हीं पांच वर्षों में गुजरात के इतिहास संशोधन की दशा में नव चेतना का चाक भी गतिमान हुआ। यह चेतना १९४१ से १९४५ तक की पंचवर्षी में भी चालू रही। १९४१ ई० में डा॰ हसमुख सांकलिया लिखित 'आर्कियोलॉजी ऑफ गुजरात' नामक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ जिसमें लेखक ने गुजरात के पुरातत्व के इतिहास प्राचीन लेखों सिक्कों स्थापत्य शिल्प मूर्तिविधान आदि विविध स्रोतों की नवीन रीति से समीक्षा की है।

१९४१–४२ स ४४–४५ तक डा॰ सांकलिया ने बड़ोदा राज्य के महसाना प्रान्त में साबरमती के तटवर्ती प्रदेश में तथा मध्य एवं दक्षिण गुजरात के कितने ही पुरातन स्थलों में प्रागैतिहासिक पाषाण-कालीन संस्कृतियों की शोध-खोज करके इस विषय पर महत्वपूर्ण प्रकाश डाला है।

१९४२ में श्री मु शी की प्रेरणा से 'गुजरात साहित्य परिषद्' ने सोलंकी वंश के संस्थापक मूलराजदेव की सहस्राब्दि मनाई और नये सिरे से सोलंकियों का इतिहास लिखाने की योजना बनाई। यह इतिहास अंग्रेजी मे लिखने का कार्य भारतीय विद्याभवन ने हाथ में लिया। इस योजना को क्रियान्वित करते हुए विद्याभवन ने प्रागैतिहासिक काल से सोलंकी काल तक के इतिहास की विस्तृत योजना स्वीकार की। १९४३ मे गुजरात साहित्य सभा के उपक्रम से अहमदाबाद मे इतिहास सम्मेलन सम्पन्न हुआ जिसमे श्री कन्हैयालाल मुन्शी मुनि जिनविजयजी और श्री दुर्गाशंकर शास्त्री ने अग्रिम भाग लिया।

इसी वर्ष भारतीय विद्याभवन की योजना के फलस्वरूप श्री

ग्लोरी देट वाज गुर्जर देश" का १९४३ में पहला और १९४४ में तीसरा भाग प्रकट हुआ। पहले भाग में प्रो० वाडिया का भू-स्तर विषयक और डा० सांकलिया लिखित "प्रागितिहास"-विषयक प्रकरण विशेष उल्लेखनीय है। श्री मुन्शी द्वारा लिखित प्राग्वैदिक आर्य विभाग में पौराणिक अनुश्रुतियो और मनमाने गृहीतार्थ का आभार अधिक लिया गया है। यही विधान इनके द्वारा तैयार किये गये तीसरे भाग पर भी लागू होता है, जिसमें प्रतिहार, परमार और चौलुक्य वंश के महान् राजाओ का इतिहास लिखा गया है।

महाभारत काल से प्रतिहार काल तक के एक हजार वर्षों का ववरण लिए हुए दूसरा भाग तथा चौलुक्य कालीन जीवन और सस्कृति से सम्बद्ध चौथा भाग, जिनके विषय मे पहले और तीसरे भागो में सूचना दी गई है अभी तक चौदह वर्ष बीत जाने पर भी, मूर्त्त रूप प्राप्त नहीं कर सके हैं।

भारतीय विद्याभवन ने भारतीय इतिहास और संस्कृति की ग्रथ-माला डा० मजूमदार जैसे सिद्ध इतिहासविद् द्वारा तैयार कराकर पूर्ण रीति से प्रकाशित करने का कार्य हाथ में लिया है। इससे गुजरात के इतिहास और सस्कृति विषयक इस अधूरी ग्रन्थमाला को तर्कशुद्ध रीति से पूर्ण कर लिया जावेगा, यह स्पष्ट है क्योकि इससे श्री दुर्गाशकर शास्त्री रचित मध्यकालीन राजपूत इतिहास के पूरक के रूप मे गुजरात का प्राचीन इतिहास, जो शेष रह गया है, सामने आ जायेगा।

इसी बीच में मुस्लिम काल का अद्यतन इतिहास गुजराती मे तैयार करने का उपक्रम श्री रत्नमणिराव ने किया और १९४५ में 'गुजरात का सास्कृतिक इतिहास (इस्लाम युग) नामक ग्रन्थ का पहला खण्ड गुजरात विद्यासभा' ने प्रकाशित किया जिसमें प्राङ् मुस्लिम काल की विगत वार भूमिका देकर लेखक ने गुजरात में हुई मुस्लिम सत्ता की स्थापना से स्वतन्त्र सल्तनत की स्थापना तक का सुरेख इतिहास आलेखित किया है।

प्रथम पुस्तक के रूप में मुस्लिम कालीन इतिहास का अमूल्य ग्रन्थ इसी वर्ष में प्रकट किया जिसमें खिल्जी वंश के सूबेदारों से लेकर गुजरात के अन्तिम सुल्तान तक का इतिहास फारसी-अरबी ग्रंथों तथा उत्कीर्ण लेखों और स्थापत्य-स्मारकों के आधार पर अविच्छिन्न विपुल प्रमाणभूत सामग्री के साथ आलेखित है।

१९१६ से १९४ तक के इन्हीं पांच वर्षों में गुजरात के इतिहास संशोधन की दशा में नव चेतना का बाढ़ भी गतिमान हुआ। यह चेतना १९४१ से १९४५ तक की पंचवर्षी में भी चालू रही। १९४१ ई० में डा. हसमुख सांकलिया लिखित 'आर्किओलोजी ऑफ गुजरात" नामक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ जिसमें लेखक ने गुजरात के पुरातत्त्व के इतिहास प्राचीन लेखों सिक्कों स्थापत्य शिल्प मूर्तिविधान आदि विविध स्रोतों की नवीन रीति से समीक्षा की है।

१९४१–४२ से ४४–४५ तक डा० सांकलिया ने बड़ोदा राज्य के महसाना प्रान्त में साबरमती के तटवर्ती प्रदेश में तथा मध्य एवं दक्षिण गुजरात के कितने ही पुरातन स्थलों में प्रागैतिहासिक पाषाण-कालीन संस्कृतियों की शोध-खोज करके इस विषय पर महत्त्वपूर्ण प्रकाश डाला है।

१९४२ में श्री मुन्शी की प्रेरणा से 'गुजरात साहित्य परिषद्' ने सोलंकी वंश के संस्थापक मूलराजदेव की सहस्राब्दि मनाई और नये सिरे से सोलंकियों का इतिहास लिखाने की योजना बनाई। यह इतिहास अंग्रेजी में लिखने का कार्य भारतीय विद्याभवन ने हाथ में लिया। इस योजना को क्रियान्वित करते हुए विद्याभवन ने प्रागैतिहासिक काल से सोलंकी काल तक के इतिहास की विस्तृत योजना स्वीकार की। १९४३ में गुजरात साहित्य सभा के उपक्रम से अहमदाबाद में इतिहास सम्मेलन सम्पन्न हुआ जिसमें श्री कन्हैयालाल मुन्शी मुनि जिनविजयजी और श्री दुर्गाशंकर शास्त्री ने अग्रिम भाग लिया।

इसी वर्ष भारतीय विद्याभवन की योजना के फलस्वरूप 'दी

ग्लोरी देट वाज गुर्जर देश" का १९४३ में पहला और १९४४ में तीसरा भाग प्रकट हुआ। पहले भाग में प्रो० वाडिया का भू-स्तर विषयक और डा० सांकलिया लिखित "प्रागितिहास"-विषयक प्रकरण विशेष उल्लेखनीय है। श्री मुन्शी द्वारा लिखित प्राग्वैदिक आर्य विभाग में पौराणिक अनुश्रुतियो और मनमाने गृहीतार्थ का आभार अधिक लिया गया है। यही विधान इनके द्वारा तैयार किये गये तीसरे भाग पर भी लागू होता है, जिसमें प्रतिहार, परमार और चौलुक्य वंश के महान् राजाओं का इतिहास लिखा गया है।

महाभारत काल से प्रतिहार काल तक के एक हजार वर्षों का ववरण लिए हुए दूसरा भाग तथा चौलुक्य कालीन जीवन और सस्कृति से सम्बद्ध चौथा भाग, जिनके विषय मे पहले और तीसरे भागो में सूचना दी गई है अभी तक चौदह वर्ष बीत जाने पर भी, मूर्त्त रूप प्राप्त नहीं कर सके हैं।

भारतीय विद्याभवन ने भारतीय इतिहास और सस्कृति की ग्रथमाला डा० मजूमदार जैसे सिद्ध इतिहासविद् द्वारा तैयार कराकर पूर्ण रीति से प्रकाशित करने का कार्य हाथ में लिया है। इससे गुजरात के इतिहास और सस्कृति विषयक इस अधूरी ग्रन्थमाला को तर्कशुद्ध रीति से पूर्ण कर लिया जावेगा, यह स्पष्ट है क्योकि इससे श्री दुर्गाशकर शास्त्री रचित मध्यकालीन राजपूत इतिहास के पूरक के रूप में गुजरात का प्राचीन इतिहास, जो शेष रह गया है, सामने आ जायेगा।

इसी बीच में मुस्लिम काल का अद्यतन इतिहास गुजराती मे तैयार करने का उपक्रम श्री रत्नमणिराव ने किया और १९४५ में 'गुजरात का सांस्कृतिक इतिहास (इस्लाम युग) नामक ग्रन्थ का पहला खण्ड गुजरात विद्यासभा' ने प्रकाशित किया जिसमें प्राङ् मुस्लिम काल की विगत वार भूमिका देकर लेखक ने गुजरात में हुई मुस्लिम सत्ता की स्थापना से स्वतन्त्र सलतनत की स्थापना तक का सुरेख इतिहास आलेखित किया है।

गुजरात विद्यासभा के भो० जे० विद्याभवन ने गुजरात का सर्वग्राही इतिहास तैयार करने की भूमिका रूप में विभिन्न आकर ग्रन्थों का संशोधन करने की योजना बनाई है। इसके फलस्वरूप अध्यापक उमाशकर जोशी ने 'पुराणों में गुजरात' नामक ग्रन्थ का भौगोलिक खण्ड तैयार किया जो १९४६ ई में प्रकाशित हुआ।

इसी प्रकार फ़ारसी अरबी की मूल साधन सामग्री के आधार पर गुजरात के मुस्लिम काल का नये सिरे से इतिहास तैयार करने का कार्य विद्याभवन की ओर से अध्यापक अबू जफर नन्दी को सौंपा गया जिसके परिणाम स्वरूप इनके द्वारा उर्दू में तैयार किये हुए 'तारीखे गुजरात' नामक ग्रन्थ गुजराती अनुवाद पहले और दूसरे भाग के रूप में १९४९ में प्रकाशित हुआ। इसमें मुसलमानों का गुजरात के साथ सम्बन्ध होने से लेकर गुजरात को सल्तनत स्थापित होने तक का इतिहास समाविष्ट है। नन्दी साहब अब जीवित नहीं हैं परन्तु उनकी लिखी हुई बहुत सी सामग्री अभी तक अप्रसिद्ध है। इस सामग्री को भी प्रकाश में लाना इष्ट है।

दक्षिण गुजरात के कितने ही लेखों के आधार पर वहाँ के स्थानिक राजवर्गों के विषय में जो नवीन सूचनायें मिली हैं उनको श्री अमृतवसत पंड्या ने 'न्यू डाइनेस्टीज ऑफ गुजरात' नामक पुस्तक में (१९५१ ई०) संगृहीत किया है। बीसवी शताब्दी की इस दूसरी पच्चीसी में निमित ललित-साहित्य का ऐतिहासिक प्रसङ्गों के प्रति आकर्षण चालू रहा है। कवि नानालाल ने 'जहांगीर नूरजहाँ (१९२८ ई) और 'शाहनशाह अकबर' (१९३ ई) जैसे नाटक लिखे। ऐतिहासिक नवल कथाओं में श्री चू न शाह स्नेहरचन्द मेघाणी गुणवंतराय आचार्य और धूमकेतु श्री धूमकेतु ने बहुत सी कृतियों का सर्जन किया है यथा— 'राज हत्या' प्रबन्धोलाप' 'रूपमती'' एकल वीर' 'गुर्जरेश्वर'' 'गुजरातनी जय 'जगतमन्दिर मां' 'दरियालाल' ''चौलादेवी' अवन्ती नाथ सिद्धराज 'गुर्जरेश्वर कुमारपाल' 'आम्रपाल'' इत्यादि।

श्री धूमकेतु ने तो मूलराज से लेकर कर्ण गेला तक के समय के प्रसिद्ध प्रसंगो को लेकर चौलुक्य-ग्रन्थावली ही लिख दी है और अब वे गुप्तयुग-ग्रन्थावली लिख रहे हैं। अभी तक तो इस ग्रन्थावली के अन्तर्गत केवल बुद्धकाल और मौर्यकाल से सम्बन्धित छ-सात नवल कथाये ही प्रकाशित हुई हैं जिनको सही रूप मे प्राग्गुप्त-ग्रन्थावली कहा जा सकता है। अब वे वास्तविक गुप्तयुग आरम्भ करने वाले हैं। अद्यतन प्रकाशनो मे श्री मुन्शी ने अपनी रीति से लिखी हुई "भग्न-पादुका"(१९५५) नामक ऐतिहासिक नवल कथा मे कर्ण बाघेला और माधव प्रधान का पात्रो के रूप में चित्रण किया है। इस नवल कथा मे सत्य घटना के साथ रोचक कल्पना-तत्त्व का ऐसा सम्मिश्रण हुआ है कि सामान्य वाचक वर्ग के मन मे कल्पित पात्र और प्रसग भी ऐतिहासिकता की छाप लगाए बिना नही रहते। ऐतिहासिक नवल कथाओ के सभी पात्रो और प्रसगो को ऐतिहासिक मान लेने की मनोदशा उत्पन्न करने मे सतर्कता की आवश्यकता रहती है।

अब हम अपने वर्तमान दशक मे प्रवेश करते हैं। गुजरात विश्वविद्यालय ने गुजराती भाषा का माध्यम अपनाकर विविध विषयो पर गुजराती भाषा मे निबन्ध लिखवाए। इससे पूर्व गुजरात विद्यापीठ की तरह गुजरात विद्यासभा ने भी इस प्रवृत्ति को उत्तेजना प्रदान की। १९५२ ई० मे सभा की सशोधन ग्रन्थमाला में अभी तैयार किया हुआ हड़प्पा और मोहन-जो दडो नामक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ। गुजराती मे इस विषय पर यह सबसे पहला प्रकाशन है। इसी वर्ष इसी ग्रन्थमाला मे डा० भोगीलाल साडेसरा लिखित "जैन आगमो में गुजरात" नामक आकर ग्रन्थ प्रकट हुआ तथा इसी वर्ष "दी ग्लोरी दैट वाज गुर्जर देश" का गुजराती अनुवाद "गुजरातनी कीर्त्तिगाथा" नाम से प्रकाश मे आया। १९५३ ई० मे "जैनतीर्थ सर्वसग्रह" नामक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ प्रकाशित हुआ। गुजरात विद्यासभा की सशोधन-ग्रन्थमाला में श्री दुर्गाशकर शास्त्री द्वारा सशोधित एव सवर्द्धित "गुजरात का मध्यकालीन इतिहास" नई आवृत्ति के रूप में प्रकट हुआ। १९५४ मे बडौदा की महाराजा

सयाजीराव युनिवर्सिटी ने गुजरात के सांस्कृतिक इतिहास की सारग्राही (तिथि क्रमानुसार) 'रूपरेखा' चार भागों में तैयार करने की योजना प्रारम्भ की। इसके प्रथम भाग का प्रधान सम्पादकत्व डा० मजुमदार मजूमदार को सौंपा गया जिसमें प्राचीन लेखों के आधार पर प्राप्त हुई सूचनाओं का विभाग इस समय तक तैयार हो चुका है। १९५१ ई० में अखिल भारतीय-प्राच्य-परिषद् का सत्रहवां अधिवेशन अहमदाबाद में हुआ जिसमें गुजरात इतिहास विभाग के प्रमुख पद को श्री रत्नमणि राव ने अलंकृत किया। दूसरे वर्ष "इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेस" का सत्रहवां अधिवेशन भी डा० चक्रवर्ती के सभापतित्व में अहमदाबाद में ही हुआ। इसमें स्थानीय इतिहास विभाग के अध्यक्ष प्रा० कामदार प्रमुख थे। इस कांग्रेस का बीसवां अधिवेशन १९५७–५८ में वल्लभ विद्यानगर में हुआ जिसकी अध्यक्षता श्री कन्हैयालाल माणिकलाल मुन्शी ने की और स्थानिक इतिहास-विभाग का प्रमुखपद डा० उपाध्याय ने सुशोभित किया।

'गुजरात संशोधन मण्डल' की ओर से संशोधकों ने १९५६ में एक सम्मेलन अहमदाबाद में और दूसरा १९५७ में बड़ौदा में बुलाया। इन सम्मेलनों में संशोधन की बड़ी २ योजनाएं स्वीकृत हुईं परन्तु यह देखना है कि ये योजनाएं इतिहास के क्षेत्र में कितनी फलवती होती हैं।

१९५७ में डा० भोगीलाल सांडेसरा की प्रेरणा से बड़ौदा में 'गुजरात स्वयं संशोधक' नामक संस्था की स्थापना हुई जिसकी प्रवृत्तियां गुजरात के सांस्कृतिक इतिहास-संशोधन के लिए लाभप्रद हैं। इसी वर्ष अहमदाबाद में इतिहास मण्डल' बना तथा वल्लभ विद्यानगर में 'इण्डियन हिस्ट्री कांग्रेस' के अधिवेशन के अवसर पर एकत्र हुए स्थानिक इतिहासकारों ने 'गुजरात इतिहास परिषद्' नामक संस्था स्थापित करने की योजना बनाई जो अभी तक पूर्णरूप से नहीं चल सकी है।

वर्तमान दशा में पुरातत्वीय खाद खोज की प्रवृत्तियों में उल्लेख मात्र प्रगति की है। बड़ौदा की महाराजा सयाजीराव युनिवर्सिटी के

पुरातत्त्व विभाग की ओर से अकोटा, वडनगर आदि स्थलो की खुदाई कराकर पुरातन अवशेषो की खोज कराई गई। इस विभाग के अध्यक्ष डा० सुब्बाराव लिखित "वडौदा थ्रू दी एजेज" और "परसनेलिटी ऑफ इण्डिया" भी उल्लेखनीय है। इनके सहायक श्री रमणलाल मेहता ने भडौंच जिला के पुरातत्त्व पर 'महानिवन्ध' लिखकर डाक्टरेट प्राप्त किया। सौराष्ट्र के पुरातत्त्व विभाग के श्री पु० प्रे० पण्ड्या की देख-रेख मे अनेक स्थलो की प्रागैतिहासिक और आद्यैतिहासिक केन्द्रो की शोध हुई है जिससे हडप्पा-सस्कृति के साथ सौराष्ट्र के सम्बन्धो पर प्रकाश पडता है।

भारत सरकार के पुरातत्त्व विभाग के पश्चिमीय क्षेत्र के अधिकारी श्री रगनाथ राव ने रगपुर और आस-पास के प्रदेश मे नए सिरे से शोध-कार्य किया। रगपुर मे हडप्पा सस्कृति के क्रमिक लय की तथा लोथल की हडप्पाकालीन वसावट पर इनके द्वारा शोध हुई है। हडप्पा और मोइन-जो दडो मे मिली, खुदी हुई मुद्राओ और लोथल मे मिली हुई मुद्राओ के नमूनो से यह प्रतीति होती है कि हडप्पा संस्कृति के साथ इस स्थान का निकट सम्बन्ध था। रगपुर और लोथल के खण्डहरो की शोध ने गुजरात को भारत के आद्यैतिहासिक मानचित्र में निश्चित स्थान प्राप्त कराया है, यह गौरव का विषय है।

अब इन पिछले पाच वर्षो में तैयार हुए इतिहास ग्रन्थो को लीजिए। १९५४ मे श्री र० छो० पारिख ने बम्बई यूनिवर्सिटी के तत्त्वावधान मे श्री ठक्कर वसनजी माधवजी व्याख्यान माला के अन्तर्गत "गुजरात की राजधानियां" विषय पर विद्वत्तापूर्ण व्याख्यान दिये जो प्रकाशित हो चुके हैं।

इस वर्ष का स्मारक ग्रन्थ "चरोतर सर्वसग्रह" भाग १, २ हैं जिसमे खेडा जिले से सम्बद्ध विविध विषयक विवरणी बहुत परिश्रम से सगृहीत की गई है। ऐसी विवरणियां गुजरात के अन्य वडे जिलों के

विषय में भी नये सिरे से तैयार हों तो इतिहास-संशोधन में बहुत सहायता और सुविधा प्राप्त हो।

भारत सरकार की ओर से हिन्दी में प्रकाशित भारत के नक्शे में स्थानों के नाम अंग्रेजी से हिन्दी में रूपान्तरित किए गए हैं। ये नाम प्रामाणिक नहीं हैं, ऐसी सूचनाएं मिली हैं। उदाहरण के रूप में गुजरात के स्थानों पर दृष्टिपात किया तो 'साबरकांठा' के स्थान पर 'शंबर कान्ता' दिखाई दिया। इससे यह विदित हो जायगा कि भारतीय स्थानों के भारतीय भाषा में शुद्धरूप से नाम लिखवाने की ओर ध्यान देने की कितनी गम्भीर आवश्यकता है। सौराष्ट्र के गांवों की जिलावार सूची सौराष्ट्र सरकार के करविभाग ने गुजराती में प्रकाशित की थी इसी प्रकार गुजरात के प्रत्येक जिले के गांवों की सूची गुजराती में तैयार होकर प्रकाशित हो और जिलावार अथवा तालुकावार नक्शे भी गुजराती में प्रकाशित हों यह अत्यन्त आवश्यक है।

१९५५ में गुजरात के इतिहास विषय का महत्त्वपूर्ण प्रकाशन 'मैत्रक कालीन गुजरात' है जिसको १९५१ से १९५५ तक रचित ग्रन्थों में श्रेष्ठ मानकर इसके लेखक श्री हरिप्रसाद शास्त्री को 'नर्मद-स्वर्ण पदक' प्रदान किया गया।

गुजरात की इतिहास-सम्बन्धी प्रारम्भिक पुस्तकों में तो वलभी राज्य के विषय में केवल एक ही प्रसंग देखने में आता है। वह है काकु सेठ के निमित्त वलभी राज्य का विनाश। जैन-प्रबन्धों में प्राप्त इस प्रसंग को रासमाला में उद्धृत किया गया है। आगे चल कर वलभी राज्य के अनेक ताम्रपत्र प्राप्त हुए जिनमें इस राज्य की दीर्घकालीन समृद्धि के जो आंकड़े हस्तगत हुए। बम्बई प्रान्त के सर्वसंग्रह में प्राप्त गुजरात के इतिहास में वलभी राज्य का प्रकरण आया है परन्तु उस समय तक इस राज्य के राजवंश का नाम निर्णीत न होने के कारण इस प्रकरण का शीर्षक 'वलभभाग' ही रख दिया गया। कुछ समय आगे चल कर इस राजवंश के लिए 'मैत्रक राज्य' शब्द का प्रयोग होने

लगा। मैत्रक वश मे कुल मिलाकर १९ राजा हुए और उन्होंने लगातार ३०० वर्ष तक राज्य किया। इस प्रकार इस राज्य के प्रकरण से गुजरात के प्राचीन इतिहास में तीन शताब्दियो की लम्बी खाई पट जाती है। श्रीदुर्गाशंकर शास्त्री और श्री रत्नमणि राव ने इतिहास की भूमिका मे इसका बहुत विस्तृत वर्णन दिया है। इन राजाओं की संक्षिप्त व्यक्तिवार विवरणी श्री रसिकलाल पारिख ने १९३८ ई० में लिखी थी। इन राजाओ के एक सौ से भी अधिक ताम्रपत्र मिले हैं जिनमे भूमिदान-सम्बन्धी राज-शासन उत्कीर्ण हैं। इन लेखो के गहन अध्ययन से वलभीपुर के मैत्रक-राज्य विषयक बडी-बड़ी सूचनाये प्राप्त होती हैं। मगध के गुप्त सम्राटों के सूबेदारो की सत्ता का उन्मूलन करके मैत्रको ने सौराष्ट्र के पूर्व तट पर वलभीपुर नामक प्राचीन नगर में स्वतन्त्र राज्य स्थापित किया और लगभग आठ सौ वर्षों तक पर-शासन के नीचे दबे हुए इस प्रदेश में स्वराज्य की स्थापना की। आगे चल कर इस राज्य की सत्ता सौराष्ट्र के उपरान्त उत्तर और मध्य गुर्जरात तथा पश्चिमी मालवा तक प्रसरित हुई। इसकी विन्ध्य-सह्य-शाखा की सत्ता दक्षिण गुजरात के अधिकाश भाग मे जम गई थी जिसमें सूरत जिले का भी समावेश था। सूरत तो उस समय अस्तित्व मे नहीं आया था परन्तु कंतार गाम या "कंतार ग्राम" ११६ ग्रामो का बडा सीमावर्ती विभाग था। महाराजा ध्रुवसेन बालादित्य, चक्रवर्ती सम्राट् हर्ष के दरबार मे उसके जामाता होने के कारण विशिष्ट सम्मान का उपभोग करते थे। उनके पुत्र धरसेन ने अपने मातामह हर्ष की भांति चक्रवर्ती का महाविरुद धारण किया था। परम माहेश्वर मैत्रक राजाओ ने वेदो मे पारंगत ब्राह्मणों को तथा बौद्ध विहारों को बहुत सी भूमि दान में दी थी। जैन तथा बौद्ध विद्या के केन्द्र वलभीपुर का विद्यापीठ मगध के नालन्दा विद्यापीठ के समकक्ष गिना जाता था। "रावण वध" के कथावस्तु के ताने के साथ शब्द शास्त्र और काव्य-शास्त्र के उदाहरणो रूपी बाना लिए हुए महाकाव्य-लेखन का जो कौशल एततृकालीन वलभी मे रचित भट्टिकाव्य में दृष्टिगत होता है

यही सोलंकी काल में हेमचन्द्राचार्य विरचित 'द्वयाश्रय' में भी देखने को मिलता है। देश-देशान्तरों के साथ वाणिज्य-व्यापार में वलभी नगर मुख्य था। करोड़पतियों के तो यहां सैकड़ों ही घर थे। वलभी के मैत्रक-राज्य की स्थापना गुप्त सम्राट स्कन्दगुप्त की मृत्यु के बाद हुई जान पड़ती है और इसका विनाश विक्रम संवत् ८४२ (७८५ ई०) में सिन्ध के अरबों के हाथों हुआ। उत्तर के प्रतिहारों और दक्षिण के राष्ट्रकूटों के आक्रमणों का शिकार बने हुए इस प्रदेश में मैत्रक कालीन सम्पन्नता को पुनः संस्थापित होने में लगभग तीन शताब्दियां लग गईं। मैत्रक-राज्य के राजकीय तथा सांस्कृतिक इतिहास में कितने ही जटिल प्रश्न बाकी रह गए थे यथा— मैत्रक किस जाति अथवा वंश के थे इनके लेखों की तिथियां किस सम्वत् की हैं और इस संवत् की काल गणना किस आधार पर होती थी और इन लेखों से विदित भू-विभागों तथा ग्रामों के स्थल कौन से थे ? इत्यादि। श्री डा० हरिप्रसाद शास्त्री ने अपने महानिबन्ध में इन प्रश्नों तथा इनसे सम्बन्धित अन्य बातों का विशद निरूपण किया है और गुजरात के इस प्राचीन राज्य की दीर्घ कालीन उज्ज्वल राज्य-प्रणाली का विगतवार विशद विवरण दिया है।

पिछली पचवर्षी का दूसरा महत्वपूर्ण प्रकाशन श्री रत्नमणिराव कृत 'गुजरात का सांस्कृतिक इतिहास' (इस्लाम युग खण्ड २) १९५४ खण्ड ३ (१९५७) और खण्ड ४ (१९५८) है। पिछले दोनों खण्डों का प्रकाशन होने से पूर्व ही विद्वान् लेखक की मृत्यु हो गई अतः सल्तनत कालीन संस्कृति के विषय में लिखने का मनसूबा पूरा न हो सका। यदि कोई विद्वान् इस कार्य को पूरा कर सके तो बहुत उत्तम हो।

१९५१ ई० में श्री अशोककुमार मजुमदार की 'गुजरात के चौलुक्य' नामक पुस्तक, अंग्रेजी में प्रकाशित हुई। परन्तु, यह श्री दुर्गाशंकर शास्त्री के गुजराती ग्रन्थ से विशिष्ट प्रमाणित होगी इसमें संदेह है। इसी वर्ष गुजरात विद्यासभा की ओर से श्री हरिप्रसाद शास्त्री लिखित

"इण्डोनेशिया मे भारतीय संस्कृति" नामक सुन्दर पुस्तक प्रकट हुई जो गुजराती मे इस विषय का सर्वप्रथम प्रकाशन है।

१९५७ का चौथा महत्त्वपूर्ण प्रकाशन प्रो० कॉमिसेरियट का "हिस्ट्री ऑफ गुजरात" का द्वितीय खण्ड है जिसमे सल्तनत काल के बाद मुगल-काल का इतिहास सप्रमाण और विगतवार निरूपण किया गया है। लेखक ने सूचित किया है कि ब्रिटिश काल से सम्बद्ध तीसरा खण्ड भी जल्दी ही प्रकाशित होने वाला है।

१९५८ मे "सूरत, सोना की मूरत" प्रकाशित होने वाला है।

प्राचीन काल के इतिहास मध्ये अब कोई विद्वान् प्रागैतिहासिक और आद्यैतिहासिक सस्कृति पर अद्यतन पुस्तक तैयार करे, क्षत्रप काल के इतिहास का सशोधन पूरा हो, पाटण के चावडा राज्य का समय और विस्तार सम्बन्धी ग्रन्थिया सुलझे, गुजरात के प्राचीन लेखो का आकर ग्रन्थ तैयार हो तभी गुजरात का सम्पूर्ण प्राचीन इतिहास सर्वग्राही ग्रन्थ के रूप मे तैयार हो सकता है। ×

—०—

× भो० जे० अध्ययन एवं शोध–प्रतिष्ठान, अहमदाबाद के सह-संचालक डा० हरिप्रसाद शास्त्री के एक व्याख्यान का हिन्दी रूपान्तर।

प्रकरण पहला

प्रारम्भिक यवन-काल

मुसलमान विजेताओं ने तुरन्त ही राजधानी अणहिलपुर, खम्भात, भडौंच और सूरत के बन्दरगाहों तथा सिद्धराज के वंशजों द्वारा अधिकृत प्रदेश के बहुत से भाग को अपने अधिकार मे ले लिया परन्तु, इस देश का बहुत सा भाग फिर भी स्वतन्त्र ही बना रहा। यद्यपि आगे चल कर अहमदाबाद के सुल्तानों ने बहुत से हिस्से को धीरे २ अपनी अधीनता मे लेकर कर लेना आरम्भ कर दिया था परन्तु वे इस पर अपना पूर्ण अधिकार कभी न जमा सके और अण-हिलवाडा के शक्तिशाली राजाओं के साथ जैसा इसका स्वाभाविक सम्बन्ध था वैसा तो प्रधान सत्ता के साथ अब तक भी स्थापित नहीं हो सका है। राजवंशी बाघेलों की एक शाखा ने साबरमती के पश्चिमी प्रदेश के कुछ भाग पर अपनी राजसत्ता बनाए रखी और इसी वंश की दूसरी शाखाओं के राजपूतों, तरसगमा के पँवारों और ईडर के राठौडों ने भी माही नदी के किनारे पर 'वीरपुर' से 'पोसीना' के किनारे तक पहाडियों के बीच मे स्थित अम्बा भवानी के मन्दिर के उस पार गुजरात की ध्रुव उत्तरी सीमा तक भिन्न-भिन्न स्थानों मे अपनी सत्ता नहीं छोडी। कच्छ के छोटे रण और खम्भात की खाडी के बीच के मैदान पर झाला राजपूतों का दृढ अधिकार था। इन्हीं राजपूतों की कोली नामक शाखा के लोग तथा अन्य शुद्ध एवं मिश्रित राजपूत चुँवाल नामक प्रदेश मे फैले हुए थे और इन्होंने ऐसे-ऐसे स्थानों पर अपना अधिकार जमा लिया था जो घने जंगलों अथवा पहाडियों के

कारण दुर्गम थ । पूर्व में पावागढ़ के कोट पर राजपूतों के संरक्षण में ही कालिका माता की ध्वजा फहराती हुई दिखाई देती थी। उधर पश्चिम में राव खेंगार के वंशजों (चूड़ासमा राजपूतों) ने अपने सुप्रसिद्ध जूनागढ़ के किले पर दृढ़ अधिकार जमा रखा था और यहीं से वे गुजरात के जिस द्वीपकल्प भाग पर बहुत दिनों तक सर्वतन्त्र स्वतन्त्र होकर राज्य करते आए थे उसी के बहुत से भाग पर अब भी अपनी सत्ता बनाए हुए थे तथाशेष भाग में भी बीज रूप से इन्हीं के संरक्षण में दूसरे राजपूत फैले हुए थे । इनमें से गोहिल बहुत प्रसिद्ध थे जिनके अधिकार में गोगो पीरम तथा उन्हीं के नाम से प्रसिद्ध गोहिलवाड़ा का वह प्रदेश भी था जो निरन्तर समुद्र की लहरों से प्रक्षालित होता रहता है ।

यहाँ पर इन हिन्दू संस्थानों का वर्णन करना ही हमारा मुख्य विषय है । मुसलमान इतिहासकारों ने इन लोगों का काफिर राजद्रोही अथवा लुटेरा आदि उपनामों से वर्णन किया है । इन्हीं मुसलमान लेखकों के शब्दों से जिनके आधार पर हम लिख रहे हैं यह स्पष्ट विदित हो जाता है कि अलाउद्दीन जैसे बादशाह के सरदार भी इन लोगों को जीतने में पूर्ण सफलता प्राप्त न कर सके। उसके बाद में होने वाले सुल्तानों ने भी इस उद्यम को चालू तो रखा परन्तु जैसा कि आगे चलकर विदित होगा उनका यह प्रयत्न कभी सफल न हो सका ।

अलाउद्दीन की मृत्यु के बाद थोड़े दिनों के लिए राजसत्ता मलिक काफूर के हाथ लग गई थी परन्तु उसकी मृत्यु के बाद सुल्तान का पुत्र मुबारक खिलजी सन् १३१५ ई० में दिल्ली के सिंहासन पर बैठा। फरिश्ता ने लिखा है कि उसके राज्यकाल के प्रथम वर्ष में ही गुजरात प्रान्त में चारों ओर विद्रोह फैल गया जिसको दबाने के लिए उसने मलिक कमालउद्दीन को भेजा परन्तु वह गुजरात में पहुँचते ही काफिरों के साथ युद्ध करता हुआ मारा गया इसलिए सुप्रसिद्ध सेनापति ऐन उल्मुल्क मुलतानी के संरक्षण में तुरन्त ही दूसरी फौज भेजी गई । वह

युद्धविद्या में बड़ा कुशल था। उसने विद्रोहियों को हराकर उनके सरदारों को मार डाला और देश मे शान्ति स्थापित कर दी। इसके बाद बादशाह ने गुजरात का राज्य अपने श्वसुर जफर खा[1] को दे दिया। वह अपनी फौज लेकर तुरन्त ही अणहिलवाडा पहुँचा जहा पहले ही से बहुत गड़बडी फैल रही थी। उसने विद्रोहियों को हराकर उनकी जागीरे जब्त करलीं और लूट मे जो कुछ उनसे प्राप्त हुआ वह सब खजाना बादशाह के पास भेज दिया। यद्यपि जफरखा निर्दोष और राज्य का मुख्य सहायक सरदार था परन्तु वह जल्दी ही बादशाह की सनक व सन्देह का शिकार हो गया और इसके फलस्वरूप उसको मृत्यु का आ लिगन करना पडा[2]। इसके बाद हिसामउद्दीन नामक सरदार को गुजरात का प्रधान नियुक्त किया गया। वह वास्तव में पॅवार वशीय राजपूत था परन्तु बाद में मुसलमान हो गया था। अधिकार हाथ में आने के थोडे दिनों बाद ही गुजरात के कुछ परमारों को अपनी ओर मिलाकर उसने विद्रोह कर दिया परन्तु गुजरात के दूसरे मुसलमान अधिकारियों ने उसका सामना किया और कैद करके दिल्ली भेज दिया। मलिक वजेहउद्दीन कुरेशी[3] नामक वीर और स्फूर्तिशालो सरदार को हिसामउद्दीन के स्थान पर भेजा गया और वह वहा की स्थिति पर काबू पाने मे सफल भी हुआ। उसको वापस

१ इसका नाम मलिक दीनार था—फिर जफरखा (फतेह का सरदार) की उपाधि प्रदान की गई। उसने गुजरात में आकर तीन चार महीनो में ही सब बन्दोबस्त कर दिया था। (मीराते अहमदी)

२ बादशाह कुतुबुद्दीन ने उसको दिल्ली बुलवाकर मरवा डाला था और गुजरात का राज्य अपने प्रीतिपात्र खसरोखा दास की माता के भाई इमामुद्दीन को सौंप दिया था। (तारीखे फीरोजशाही)

३ इसका सही नाम वहीदुद्दीन कुरैशी था। गुजरात भेजते समय उसकी उपाधि सदर-उल मुल्क निश्चित की गई थी। बाद में वापिस बुलाकर कुतुबुद्दीन मुबारकशाह ने उसको अपना वजीर बनाकर ताज-उल-मुल्क (देश का मुकुट) की पदवी दी थी। (तारीखे फीरोजशाही)

सुल्तान के बाद मलिक खुसरो जो हिसामउद्दीन का सम्बन्धी था[1] और बहुत समय तक बादशाह का प्रीतिपात्र रह चुका था गुजरात का सूबेदार बनाया गया। परन्तु, उसकी तो महत्वाकांक्षा अपने स्वामी की गद्दी पर अधिकार प्राप्त करने की थी और वह सदैव इसी बात में लगा रहता था इसलिए उसने स्वयं आकर गुजरात में सूबेदारी की हो ऐसा प्रतीत नहीं होता है। मुबारक खिलजी जो अपने वंश का अन्तिम बादशाह था सन् १३२१ में मलिक खुसरो[2] द्वारा मार डाला गया।

गयासुद्दीन[3] तुगलक के समय में ताजुल्मुल्क को[4] गुजरात प्रान्त का अधिकारी इसलिए बनाया गया कि वह वहां की परिस्थिति को काबू में ले आएगा। मुहम्मद तुगलक के समय में अहमद अय्याज़[5] को गुजरात की सूबेदारी मिली और मलिक मोकबिल उसका वज़ीर बनाया गया। इसी समय कितने ही दूसरे सरदारों को भी गुजरात में जागीरें मिलीं। इन्हीं में से एक मलिक तुग़र[6] अथवा 'व्यापारियों का

१ दोनों एक मा के लड़के थे।

२ यही खुसरो नासिरुद्दीन के नाम से तख्त पर बैठा था। यह वास्तव में परमार राजपूत था। इसके समय में परमारों का प्रभुत्व बढ़ गया था और मुसलमानों राजमहलों में मूर्तिपूजा होने लगी थी। (तारीखे फीरोजशाही)

३ 'तवारीख फीरोजशाही' और 'मिराते अहमदी' में लिखा है कि गाज़ी मलिक तुग़लक नामक एक अमीर को देश के अन्य अमीरों ने गद्दी पर बिठाया और उसने गयासुद्दीन तुगलकशाह की उपाधि धारण की।

४ 'मिराते अहमदी' में ताजुद्दीन जफर को गुजरात का सूबेदार नियुक्त करना लिखा है।

५ ख्वाजा जहान का अल्काब (उपाधि) देकर बादशाह ने उसको गुजरात का सिपहसालार नियुक्त किया और उसी के गुलाम मलिक मुकबिल को खान-ए जहान की उपाधि देकर वहां का वज़ीर बनाया तथा मस्तियार नाम के किसी व्यक्ति को मुल्तान और गुजरात की सूबेदारी प्रदान की" ऐसा फरिश्ता ने लिखा है।

६ मलिक शाहबुद्दीन ने जिसको मलिक इख्तियार का खिताब दिया था यह वही शख्स है। पढ़ने में भूल होने के कारण मलिक कुच्चर लिखा है।

सरदार' पदधारी अमीर था जिसको सूरत के नीचे समुद्री किनारे पर स्थित नवसारी की जागीर मिली। सन् १३०७ ई० मे तुर्मुशीरीन खां नामक एक मुगल सरदार ने हिन्दुस्तान पर चढाई की। मोहम्मद तुगलक ने लगभग अपने समस्त साम्राज्य के मूल्य के बराबर धन देकर उसको लौटा दिया, परन्तु वापस लौटते हुए वह सिन्ध और गुजरात होता हुआ गया और इन दोनों ही 'देशों को लूटकर बहुत सा धन तथा मनुष्य यहां से ले गया।

बीस वर्ष बाद मलिक मुकबिल में, जो उस समय गुजरात की सूबेदारी पर नियुक्त प्रतीत होता है, और अमीर जुदीदा[1] अथवा मुगल वंशीय सरदारों मे कुछ अनबन हो गई। सूबेदार उन अमीरों से डर गया और कुछ सिपाहियों व सरकारी तबेले के घोड़ों के संरक्षण मे सरकारी खजाने को साथ लेकर दिल्ली रवाना हुआ। मार्ग मे बडोदरा और डभोई के बीच के रास्ते मे ही अमीरों ने उस पर हमला करके खजाना लूट लिया और उसको विवश होकर अणहिलवाडा भाग जाना पडा। इस घटना का समाचार सुनकर खुद बादशाह गुजरात पर चढाई करने के लिए तैयार हुआ परन्तु मालवा के सूबेदार अजीज ने आगे बढकर विद्रोह को शान्त कर देने की प्रार्थना की और वह स्वीकार कर ली गई। गुजरात पहुँचते ही वहा के अमीरों ने अजीज को हरा दिया और मार डाला। यह समाचार सुनकर बादशाह ने चढाई करने में ढील न की और उसने गुजरात पर कूच का डका बजा दिया।

आबू की पहाड़ियों पर पहुँच कर मुहम्मद तुगलक शाह ने अपने सरदारों में से एक को अमीरों का मुकाबला करने के लिए भेजा। देवी (डीसा ?) गाव के पास ही दोनों पक्षों की मुठभेड हुई जिसमें

१ मुहम्मद तुगलक के समय में तुर्मसजीन खा के जमाई मलिक नोरोज के साथ बहुत से मुगल अमीर आए थे और उसके राज्य में नौकर रहे थे। इनमें से जो १,००० मनुष्यों का स्वामी होता था वह अमीरे हजारा अथवा तुर्की में युजखासी कहलाता था और जो १०० मनुष्यों का अमीर होता था वह अमीरे सदा कहलाता था। ऐसे बहुत से अमीर थे।

विद्रोहियों की पूरी हार हुई। अब बादशाह धीरे-धीरे भड़ौच की ओर आगे बढ़ा और नर्मदा के किनारे पर दूसरी लड़ाई हुई जिसमें भी शाही सेना की विजय हुई और इसी फौज ने खम्भात और सूरत के नगरों को लूट लिया। इसके बाद देवगढ़ पर चढ़ाई हुई। इसी देवगढ़ का मुसलमानी नाम दौलताबाद रखकर उसने अपने पागलपन की सनक में दिल्ली की जगह इसको राजधानी बनाने का दो बार प्रयत्न किया था। जब यह देवगढ़ के चारों ओर घेरा डाले पड़ा था उसी समय समाचार मिले कि अमीर तुगीचा ने कितने ही हिन्दू जमींदारों की सहायता से अणहिलवाड़ा पर कब्जा कर लिया है और यही नहीं सरकारी अधिकारी का भी काम तमाम करके सूबेदार को कैद कर लिया है और खम्भात को लूटकर अब भड़ौंच को घेर रखा है। दौलताबाद छोड़कर बादशाह भड़ौंच की ओर रवाना हुआ। उसके आते ही विद्रोही खम्भात लौट गये जहां उन्होंने बादशाह के भेजे हुए सरदारों का सामना करके उनको हरा दिया। अब मुहम्मद तुगलक को बदला लेने के सिवाय और कुछ न सूझ रहा था और वह एक दम खम्भात की ओर बढ़ गया। विद्रोही लोग वहां भी उसके सामने न टिक सके और भाग भाग गए, परन्तु मार्ग की कठिनाइयों और मौसम की प्रतिकूलता के कारण बादशाह को अपनी सेना सहित आधुनिक अहमदाबाद के पास आसावल नामक स्थान पर ठहरना पड़ा। इसी बीच में विद्रोहियों ने अणहिलवाड़ा में सेना इकट्ठी करली और बादशाह का मुकाबला करने के लिए आगे बढ़े। कुर्री नामक स्थान पर फिर लड़ाई हुई और शाही सेना की विजय हुई। विद्रोही सिन्ध की ओर भाग गए और मुहम्मद तुगलक ने अणहिलवाड़ा नगर में प्रवेश किया। वहां की व्यवस्था ठीक करने के लिए कुछ समय तक वह वहीं पर ठहरा रहा।

बादशाह ने उस वर्ष का अधिकांश भाग गुजरात में सेना-संगठन करने में व्यतीत किया और दूसरा वर्ष जूनागढ़ के घेरे और कच्छ[१] की

[illegible] कच्छ में जाम कामाजी राज्य करते थे। [illegible] का समय [illegible] से १३५१ ई (हिजरी सन ७२५ से [illegible]) तक था। [illegible] का समय [illegible] से १३८८ ई तक का था।

विजय करने मे लगाया। जूनागढ के पास ही गोंडल नामक स्थान पर उसे एक भयङ्कर रोग ने घेर लिया। यद्यपि यह रोग आगे चलकर उसकी मृत्यु का कारण हुआ परन्तु उस समय उसकी बढती मे इसके कारण कोई अडचन नहीं पडी। वह सिन्धु नदी के किनारे-किनारे आगे बढा और सिन्ध मे पहुँच कर वहा के सुमरी नामक राजा को भगोडे अमीरों को आश्रय देने के अपराध का पूरा दण्ड दिया।

फीरोजशाह तुगलक ने अपने समय मे नगरकोट को जीतने के बाद सिन्ध को जीतने का विचार किया परन्तु वर्षा अधिक होने के कारण उसको कुछ दिन रुकना पडा और इसलिये मौसम ठीक होने तक वह अपनी सेना सहित गुजरात मे ठहरा रहा। इसके कुछ वर्षो बाद (१३७६ ई० मे) गुजरात से राज्य को बहुत कम आमदनी होने लगी। इसी समय शमशुद्दीन दमघाना नामक सरदार ने बादशाह से निवेदन किया, "यदि मुझे गुजरात प्रात का सूबेदार नियुक्त कर दिया जावे तो वहा से आजकल जो आमदनी होती है उससे बहुत ज्यादा वसूल कर सकता हूँ।" यह बात बादशाह के गले उतर गई और उसने गुजरात के तत्कालीन सूबेदार से पूछा कि शमशुद्दीन ने जितनी रकम वसूल करने का वादा किया उतनी ही रकम वह भी वसूल कर सकता था या नहीं? सूबेदार ने इनकार कर दिया और शमशुद्दीन उसके स्थान पर नियुक्त कर दिया गया। उसने सूबेदारी का काम तो सम्हाल लिया परन्तु प्रतिज्ञानुसार रकम देने मे असफल रहा इसलिए एक विद्रोह खडा होगया। जिन लोगों को उसने तग किया था वे बदला लेने का अच्छा अवसर देखकर अमीरों से जा मिले और उसे लडाई मे परास्त करके मार डाला। इसके बाद सन् १३८७ ई० तक फरहत उल् मुल्क गुजरात का सूबेदार रहा। जब १३८७ ई० मे उसके स्थान पर दूसरा आदमी भेजा गया तो फरहत ने भी विद्रोह कर दिया और विदेशी सरदारों की सहायता से अपने भावी उत्तराधिकारी को हराकर मार डाला। इसके बाद गयासुद्दीन तुगलक ने उसी को गुजरात की सूबेदारी पर कायम रक्खा, और १३६० ई० तक वह अपने पद पर बना रहा। गुजरात पर स्वतन्त्र

रूप से अपनी सत्ता जमाने के लिए उसने १३१० ई० में फिर विद्रोह किया। अपना स्वार्थ-सिद्ध करने के लिए यह हिन्दुओं के धर्म को प्रोत्साहन देकर उनको अपनी ओर मिलाने का प्रयत्न भी करने लगा। उसके इस आचरण से धर्मान्ध मुसलमान बहुत भयभीत हुए और उन्होंने साम्राज्य एवं इसलाम धर्म को संकट में बताते हुए बहुत से प्रार्थना-पत्र बादशाह की सेवा में भेजे। इस पर साक अथवा टांक जाति के एक उमराव को जो पहले हिन्दू वंश का था मुज़फ्फरखाँ[1] का खिताब देकर गुजरात का अधिकारी नियुक्त किया गया। इतना ही नहीं उसका पद बढ़ाने के लिए सफेद छत्र व लाल शामियाना भी जो बादशाह के साथ चलता था उसको प्रदान किया गया। ज्योंही मुज़फ्फरखाँ गुजरात में पहुँचा और राजधानी की ओर आगे बढ़ा त्योंही उसका प्रतिस्पर्द्धी भी सिद्धपुर के मुकाम पर बहुत से हिन्दुओं की सेना लेकर सामना करने आ पहुँचा। वहीं पर लड़ाई हुई जिसमें फरहत-उल्-मुल्क[2]

---

[1] मुज़फ्फर के स्थान में 'ज़फर' पढ़िये। यह टांक जाति के राजपूत सहारन का पुत्र था। सहारन को बादशाह फीरोज़ तुग़लक ने इस्लाम धर्म में परिवर्तित कर लिया था। मुसलमान होने के बाद उसका नाम वजीहउल्-मुल्क पड़ गया था। मुज़फ्फर खां का असली नाम निज़ाम मुफरह था। जब इसको गुजरात का सूबेदार बनाया गया था तब एक लेख लिखा गया था। फरिश्ता में लिखा है कि यह लेख स्वयं बादशाह ने अपने हाथ से लिखा था—"हमारा सिरताज, मजलिस-ए-आली यानी मदहम [illegible] सआदत मशहूर जंगबहादुर, शाहन शाह और सच्चा पासनदार [illegible] और इस्लामी का शृंगार, [illegible] [illegible]।

[2] [illegible] सुल्तान का खिताब था।

मुसलमानकाल के आरम्भ में होने वाले गुजरात के सूबेदार—

दिल्ली के बादशाह

अलाउद्दीन खिलजी १२९५–१३१५

मोहम्मद तुगलक प्रथम १३२५–१३५१
फीरोज़ तुगलक १३५१–१३८८

की हार हुई और वह मारा गया। इसके बाद मुजफ्फरखां ने बादशाह के प्रतिनिधि की हैसियत से अणहिलवाडा के राज्य की बागडोर अपने हाथ मे ले ली। (ई० स० १३९१)

सूबेदार	दिल्ली के बादशाह
फरहत उल् मुल्क १३७६—९१	
जफरखां १३९१—१४०३	मुहम्मद तुगलक द्वितीय १३९१–१३९३
बाद में मुजफ्फरशाह सुल्तान,	
गुजरात १४०७—१४१९ ई० तक	

प्रकरण दूसरा

वाघला-लूणावाड़ा के सोलंकी-सोढ़ा परमार, काठी झाला-ईडर के राठौड़-पीरम के गोहिल

यद्यपि सोलंकी वंश की जड़ उखड़ चुकी थी परन्तु बहुत पहले से ही विशाल वटवृक्ष की जड़ के समान उसकी अनेक शाखाएं जमीन में गहरी पहुँच चुकी थीं। गुर्जरात की सीमा के पार गौण्डवाना प्रांत में वाघेलों की एक शाखा ने अधिकार जमा लिया और वह प्रांत वाघेलखण्ड अथवा बाघेलखण्ड कहलाने लगा। मेवाड़ के सामन्तों में रूपनगर के ठाकुर हैं। इनका किला उस वंश में आने के प्रधान मार्गों के एक मुख्य नाके पर स्थित है। यह ठाकुर सीमा सम्बन्धी झगड़ों में बहुत ख्याति प्राप्त कर चुके हैं और अपने को सोलंकी वंश का राजपूत कहलाते हैं। इनके पास अपनी वंशपरम्परा की निशानी के रूप में सिद्धराज का विजयशंख भी मौजूद है जिस पर उनको बड़ा गर्व है।

ऐसा प्रतीत होता है कि गुजरात प्रधान में तो वाघेले पहले साबरमती के पश्चिमी किनारे वाले परगने व मास्क में बस फिर जो देश आजकल झालावाड़ कहलाता है वहां चले गए। वहीं पर उनमें से एक ठाकुर ने वढ़वाण पर अधिकार कर लिया और सायला[2] में अपने एक

१. वाघेलों की एक शाखा तो साबरमती के पश्चिमी किनारे वाले बहुत से प्रदेश में बसी रही और दूसरी शाखाएं बनास नदी के उस पार साढ़ी और पोसीना के किनारे गुजरात की उत्तरी सीमा पर स्वतन्त्र होकर रहती रहीं।
(Bombay Gaz Vol 1 p 200)

२. वढ़वाण से दक्षिण पश्चिम में ८ मील की दूरी पर।

शक्तिशाली पटावत को नियुक्त कर दिया। परन्तु वे झालों और दूसरे लोगों के डर से अपने इस अधिकार पर भी अधिक दिनों तक स्थिर न रह सके और वापस लौट गए। फिर अहमदशाह के समय में वे कलोल और सानन्द के परगने मे जा बसे। ये परगने भी मुसलमानों के शस्त्रों की क्रीडाभूमि से अधिक दूर नहीं थे।

सोलकियों की दूसरी शाखा, जिसके नायक वीरभद्रजी थे, माही नदी के किनारे अवतलमाता की पहाडी पर वीरपुर में जा बसी। इसीलिए ये लोग वीरपुरा सोलकी के नाम से प्रसिद्ध हुए। इस शाखा के विषय मे कोई विशेष वृत्तान्त तो प्राप्त नहीं हुआ परन्तु भाट लोगों की गाथा से केवल इतना पता अवश्य चलता है कि इन लोगों ने १४३४ ई० मे लूणेश्वर महादेव के प्रसाद से लूणावाडा नामक नगर बसाया था। इनके अतिरिक्त दूसरी शाखाए, जो सोलकी राजपूतों की ही समझी जाती हैं, चूनवाल के कोली ठाकुरों मे पाई जाती हैं। इनका वर्णन आगे लिखा जाता है।

परमारवश की सोढा[1] नामक शक्तिशाली शाखा के राजपूत बहुत प्राचीन काल से सिन्ध के एक भाग मे राज्य कर रहे थे और जिस भाग में सिन्ध की प्राचीन राजधानी आरोर स्थित है उसी अमरकोट और उमरा सुमरा के स्वामी बने हुए थे। भारतवर्ष के मैदान (जगल) में अब भी धाट नाम का एक पराधीन राज्य है, जिसकी राजधानी अमरकोट है। यह सस्थान भाटियों को जाडेचों से पृथक् करता है और अब तक परमारवशी सोढा राजपूतों के अधिकार मे है।[2] जिस समय

---

१ परमार राजपूतों की एक शाखा जिसको सिकन्दर के इतिहासकारों ने 'सोगदोई' (Sogdoi) अथवा 'सोदरय' (Sodiae) लिखा है। इस जाति की मुख्य शाखा १७५० ई० तक उमरकोट में राज्य करती रही परन्तु एक शाखा १४वीं शताब्दि में ही गुजरात में आ गई थी।

२ टाड राजस्थान भा० १, पृ० ४३–४५–६२–६३।

का यह बयान है उन्हीं दिनों सोढ़ा[1] जाति की एक अन्य शाखा ने गुजरात में प्रवेश किया। कहते हैं कि पचभाएा जो बाद में मालों के अधिकार में आगया था उस समय बाघेलों के अधिकार में था और वहां के राणा वहला वाघेला ने सायला और दूसरे गांवों का पट्टा पमार राजपूतों के नाम कर दिया था। इसकी कथा इस प्रकार है —

पारकर में अकाल पड़ा इसलिए दो हजार सोढ़ा परमार जिनके नायक मुंजा और लगधीर थे[2] अपनी स्त्रियों और बालबच्चों सहित पांचाल देश में आए और मूली से कुछ मील दूर पूर्व की ओर थाघरिया नामक स्थान पर झोंपड़ियां बांध कर बस गए। सायला के पमारवंशी राजा ने इन सोढ़ों को धनवान और अरक्षित देखकर इनको लूट लेने का विचार किया। उसने शिकार का साज सजा कर कुछ आदमी अपने साथ लिए और वहां जा पहुंचा। सोढ़ों की बस्ती के पास जाकर उसने कहा मैं शिकार खेलने आया था एक तीतर घायल होकर इधर आगया है और कहीं झोंपड़ियों में छुप गया है मुझे मेरा तीतर दे दो। तीतर वापस न देना राजपूती गौरव के विरुद्ध था इसलिए आपस में झगड़ा हो गया और बहुत से पमार व सोढ़ा आपस में कट मरे। "जंगली तीतर उड़ कर सरदार के द्वार पर आ गया है घोड़ों पर सवार सशस्त्र पमार उसे वापस मांग रहे हैं परन्तु वीर परमार तीतर लौटाने

---

[1] जगदेव परमार का दूसरा भाई रणधवल था जो धारा नगरी में राज्य करता था। उसी का एक वंशज पारकर में आ बसा जिसके वंश में आगे चलकर सोढ़ा परमार हुआ—उसी के नाम पर परमारों की इस शाखा का नाम सोढ़ा परमार पड़ गया था।

[2] यह दोनों मुखिया सूर्य की मूर्ति माण्डवराय अथवा माण्डवराय की पूजा करते थे। (सूर्य मण्डल का अंशज होने के कारण माण्डव कहलाता है) जब वह पारकर छोड़कर आने लगे तो उन्होंने मूर्ति की पूजा की सूर्य देव ने इन्हें स्वप्न में आकर कहा कि मुझे भी अपने साथ ले चलो और जहां पर मेरा रथ रुक जाय वहीं झोंपड़ियां बांध कर बस जाना। थाघरिया के नेस के पास रथ रुक गया और इसलिए वे लोग वहीं बस गए।

मे अपना अपमान समझता है। प्रात काल होते ही चमाडों और सोढों मे युद्ध होता है, पाच सो चमाड और एक सौ चालीस सोढा मारे गए। एक साधारण जगली पक्षी के लिए मुञ्ज ने अपने प्राणों की बाजी लगा दी। परमार युद्ध मे पीठ दिखाना नहीं जानता—

ध्रुव चालै, मेरू डगै, उलट पडै गिरनार
रण मे पग पाछा धरै, क्यूँ कर वीर पँवार?

उसे तो अपना निवासस्थान कडोल, चोढगढ और मूली का किनारा चाहिए वह इससे अधिक कुछ नहीं चाहता—

थान कडोलो चोढगढ, थर मूली रो वास।
एतो दे परमारने, और न दूजी आश॥"

अन्त मे सायाला का ठाकुर इस लडाई मे काम आया और परमारों की जीत हुई[1]।

जो सायाला का ठाकुर इस युद्ध मे मारा गया था उसकी बहन बढवाण के वाघेला राजा को व्याही थी। उसने अपने भाई की मृत्यु का बदला लेने के लिए अपने पति से बहुत आग्रह किया, परन्तु वडला ने चमाडों की रक्षा करने का वचन दे दिया था इसलिए वह प्रत्यक्ष मे उनके विरुद्ध कुछ नहीं कर सकता था। उन्हीं दिनों, आहो और फत्तो नाम के दो भील नायकों ने गुजरात मे बहुत प्रसिद्धि प्राप्त कर ली थी। इन्होंने साबरमती नदी की खोलों मे अपने दुर्गम किले बना रखे थे और वहीं से वाघेलों के देश को लूटा करते थे। बढवाण के राजा ने सोढों से अपना पिण्ड छुडाने के लिए उनको भीलों के किले पर चढाई करने को उकसाया। इस पर सोढों ने युक्ति से आहा भील के किले मे प्रवेश किया और उसको तथा उसके बहुत से साथियों को मार डाला। इसके बाद वे फत्ता की ओर बढे और उसको भी समाप्त कर दिया।

---

१. यह लडाई फागण बुदी ३ सवत् ७१५ में हुई थी—

सवत सात पनोतरो, ढ्ढा यण तीज।
सोढाने चमाड शर, धजवड कीधी बीज॥

इस पराक्रम के बदले में बड़थाण के वाघेला राजा ने उनको चौबीस चौबीस परगनों की चार चौबीसियाँ प्रदान कीं जिनके नाम मूली थान चोटीला और चौवरी थे।

काठी[1] सिन्ध के सुमरा राजा के आश्रित तथा पटावत थे और पावर देश में रहते थे[2] एक बार एक गायिका ने मुजरा करते समय राजा की हँसी की इसलिए उसको देशनिकाला दिया गया। परन्तु,

---

१ सम्भवतः काठी लोग ढोर चरानेवाली जातियों में से थे और मध्य एशिया से आए थे। अर्यन (Arrian) ने ऐसी ही एक जाति के विषय में लिखा है जिसने अलक्षेन्द्र का हाइड्रोटिस (Hydrotes) पर सामना किया था। ऐसा प्रतीत होता है कि धीरे धीरे उनको दक्षिण की ओर खिसकना पड़ा और इस तरह वे लगभग १ ई० तक काठियावाड़ पहुँचे। जूनागढ़ के राव खेंगार (१ ४४–१ ६० ई०) की सेना में काठी राजपूत थे। इन लोगों की ो शाखायें हैं। एक अवर्तिया और दूसरे शाखायत इनमें आपस में बेटी–व्यवहार होता है। (देखो H Willberforce Bell का लिखा हुआ The H story of Kathiawad from the Earliest Times) Heo emann London 1916

२ पावर भूमि कच्छ में है सिन्ध में नहीं और कच्छ के स्वामी वाघेला राजा के आश्रय में ही काठी लोग बसते थे। जाम लाखा फूलाणी के दरबार में वाटी दुमगी (दुमग्गी ?) नाम की एक गायिका थी। उसने एक बार जाम लाखा की निन्दा का एक गीत गाया इसलिए उसको देश से निकाल दिया गया। परन्तु काठी पग ने उस गायिका को अपने यहाँ बुलाया और छिपकर उससे वही गीत सुना जिस पर राजा नाराज हुआ था। इसके फलस्वरूप उनको भी देश से निकाल दिया गया और वे बागदमा में गोंडी के मोलरी राणा के यहाँ आकर [illegible] । [illegible] वीतने पर सम्वत् [illegible] में उन्होंने कच्छ के जाम मुलवाजी [illegible] और उसको मार डाला इसलिए उसका पुत्र शासामी [illegible] गोंडी के राणा ने इसी पर चढ़ाई की उसको [illegible] से निकाल बाहर किया। अन्त में सीधे सौराष्ट्र में आए [illegible] में रहने लगे।

काठी पटावतों ने उस गानेवाली को अपने यहा बुलाया और जिस गीत पर राजा अप्रसन्न हुआ था वही गीत गवाकर प्रसन्न होने लगे। जब सिन्ध के अधिपति को यह बात मालूम हुई तो उसने काठियों के लिए भी देशनिकाले की आज्ञा जारी करदी। उन दिनों सोरठ में धोराजी के पास ढाक नामक ग्राम मे वाला वश का राजा राज्य करता था। काठी लोग सिन्ध छोडकर उसी की शरण में चले गए और वहीं पर उसके सहायक होकर रहने लगे। इन्हीं में से अमरा पटगर[1] नामक एक काठी था जिसके अमराबाई[2] नाम की एक बहुत सुन्दरी पुत्री थी। इस अमराबाई से वाला राजा का प्रेम हो गया और उसने उसके पिता से इच्छा प्रकट की कि वह अपनी पुत्री का विवाह उसके साथ करदे। अमरा पटगर ने इस शर्त पर विवाह करना स्वीकार किया कि वाला उसके (अमरा पटगर के) साथ एक ही थाल मे भोजन करे। राजा ने यह बात मान ली और विवाह हो गया। अब, ढाक के राजा के भाइयों ने अवसर देखकर एक षडयन्त्र रचा और उसको जातिच्युत घोषित करके गद्दी से उतार दिया। उसने काठियों की शरण ली और उन्होंने उसको अपना प्रधान मानकर भोमियों से राज्य छीन लेने की युक्तियां सोच निकालीं। वाला राजा अपने वशपरम्परागत सूर्योपासना के धर्म का पालन करता था और अब उसके अनुयायी होकर काठी लोग भी उसी धर्म को मानने लगे थे। एक दिन वाला सो रहा था और अपनी खोई हुई पैतृक भूमि का स्वप्न देख रहा था। उसी समय स्वप्न में सूर्य भगवान् ने उसको दर्शन दिये और कहा "मेरा भरोसा रख और लडने के लिए जा। मैं तेरी सहायता करूँगा, तेरी विजय होगी और फिर तू मेरे लिए एक मन्दिर बनवा देना।" इसके अनुसार

---

१ काठियों की आठ शाखाए थी—(१) माजरिया (२) तोरिया (३) नेहर (४) नाथा (५) पटगर (६) जेत्रिलिया (७) भाभला, जिनको कोई कोई पारवा भी कहते हैं और (८) बावरिया, जिनको वेल भी कहते हैं।

२ कोई कोई अमरा के बदले वीसल पटगर भी कहते हैं और अमराबाई के बदले रूपदे कहते हैं।

श्रीसूर्यभगवान् की कृपा और काठी मित्रों की सहायता से साखा ने बहुत से गांव जीत लिए। इन्हीं गांवों के साथ उन्होंने सोढों से थान और चोटीला गांव भी छीन लिए। थान को उन्होंने अपनी राजधानी बनाई और वहीं पर श्री सूर्यदेव का एक मन्दिर बनवाया जहां अब तक उनकी पूजा होती है। राघो चावड़ा नामक काठी सामन्त की अध्यक्षता में उन्होंने मूली चौबीसी को भी लेने का प्रयत्न किया परन्तु राजा समवाल सोढा परमार ने उनका सामना किया और राघो को मार डाला।

'अपनी सेना इकट्ठी करके इसने चूडासमों और गोहिलों को कँपा दिया। इस योद्धा को कोई भी वश में नहीं कर सका, वह बहुत दूर तक अपना भाला घुमा ले गया। शालमाल का पुत्र महादेव के समान शूर वीर है। हे राघो! क्या तुमने इन राजाओं के विषय में नहीं सुना था?

कोई कोई समय ही मनुष्य का मिलना मनुष्य से होता है। भो चावड़ा! तुम योद्धा अवश्य हो परन्तु परमार तुम से भी अधिक बलवान् है। भाले की नोक से बींध दिया यह पृथ्वी को कैसे छोड़ सकता था? पहले एक साधारण तीतर की रक्षा के लिए उसने क्या क्या नहीं किया? इसी लिए सोढों की कीर्ति बढ़ी है और उनको इसका गर्व है।'

छनी रानी के पेट से साखा राजा के तीन पुत्र हुए—सुमान साचर और हरसर साखा। इन्होंने अपने अपने हिस्से में आई हुई भूमि पर अधिकार किया। वे क्रमशः चोटीला मीठियाळू और सैंतपुर तीनों स्थानों पर रहने लगे और आगे चलकर अपने अपने नाम से तीन काठी शाखाओं के मूल पुरुष हुए।[1] पहले तो वास्तव में काठियों

---

[1] साचर के वंश में सोभित साचर हुआ जिसके पांच पुत्र हुए। उनमें से एक तो निःसंग चला गया—बाकी चारों का वंश इस प्रकार चला—

राजा चोटीला की गद्दी पर बैठा उसके वंशज राजाणी कहलाते हैं।
लाखा भरावदर की गद्दी पर बैठा उसके वंशज लाखाणी कहलाते हैं।
देवा पलियाद की गद्दी पर बैठा उसके वंशज देवाणी कहलाते हैं।
गोहल गढ़डा तथा बोटाद की गद्दी पर बैठा उसके वंशज गोहलका राज-

की आठ शाखाए थीं परन्तु इनका सामान्य नाम वर्तिया (विदेशी) ही था। अब इनसे अपनी भिन्नता दिखाने के लिए झाला काठी, जिनका निकास जातिच्युत ढाक के राजा और उसकी स्त्री अमराबाई से था, अपने को घरडेरा (उत्तम) राजपूत कहने लगे।

अणहिलवाड़ा के पतन के बाद वहां के राजवंश के जिन निकट-सम्बन्धियों ने उस देश के अधिकतर भाग पर कब्जा प्राप्त किया था उनमें बाघेलों के बाद झालों की गणना है। इस राज्य का बहुत कुछ भाग इनके भी हाथ लगा था। पहले ये झाला राजपूत कीर्तिगढ़[1] अथवा केरोकोट में मकवाणों के नाम से प्रसिद्ध थे। जब गुजरात में बाघेलों का राज्य था तब वहां (कीर्तिगढ में) विहियास नामक मकवाणा अपने वशपरम्परागत राज्य का उपभोग कर रहा था।

भाट कहता है कि जब विहियास मरने लगा तो वह बहुत दिनों तक पडा रहा और उसके प्राण न निकले। तब उसके पुत्र कुँवर केसर ने पूछा, "पिता जी ! आपका जीव गति क्यों नहीं प्राप्त करता है ?"

---

१ कहते हैं कि केरोकोट एक छोटा सा गाव है और अब भी इसी नाम से प्रसिद्ध है। यह कच्छ में भचाऊ के पास स्थित है और वला के आगे जहा तक प्राचीन नगर वलभी की कल्पना जिन अवशेषों से की जा सकती है वे सब यहाँ भी मौजूद हैं। जब साँभर के राजा ने अणहिलवाडा पर चढ़ाई की थी तब मूलराज कथकोट में जा छिपा था। यदि वह कथकोट और यह केरोकोट एक ही हों तो इसका पता नक्शे में चल सकता है अन्यथा नही।

उक्त टिप्पणी में जो गडबडी मालूम पडती है उसका निराकरण इस प्रकार है कि कीर्तिगढ सिन्ध के थल परगने में था और उस समय वह कच्छ के अधिकार में स० १८१६ तक रहा। कपिलकोट अथवा केरोकोट आधुनिक भुज के अधीनस्थ केरा ग्राम के पास है और केथकोट तो अब तक भचाऊ के तालुके में चला आता है। यही पर भीमदेव और मूलराज रहे थे। इस प्रकार ये तीनो स्थान एक दूसरे से भिन्न हैं। मकवाणे कीर्तिगढ में रहते थे।

विहियास ने उत्तर दिया 'सामइया नगर में मेरा शत्रु हमीर[२] सुमरा राज्य करता है। यदि तुम यह संकल्प करो कि उसके अस्तबल में पले हुए सवा सौ बछेरे (घोड़ों के बच्चे) लाकर मेरे तेरहवें के दिन भाटों को दान कर दोगे तो मेरी गति हो जाए। उस समय उसके सभी भाई भतीजे वहां मौजूद थे परन्तु किसी ने भी कोई उत्तर नहीं दिया। तब केसर कुँवर जो अभी बालक ही था आगे आया और उसने पिता के सामने संकल्प किया 'मैं आपकी इच्छा पूर्ण करूंगा। इसके बाद विहियास के प्राण छूट गए।

अपने पिता की मृत्यु के तेरहवें दिन केसर ने सब शोक छोड़ दिया और अपने कुटुम्बियों को बुलाकर सामइया चलने के लिए कहा। उनमें से किसी ने कहा 'तेरे साथ कौन अपने प्राण खोने के लिए जावेगा?' उसने इन बातों की कोई परवाह न की। उसे तो अपने ही बाहुबल पर भरोसा था। उसके हाथ घुटनों तक लम्बे थे। हाथ में नवामन का लोहे का भाला और धनुष बाण लिए हुए वह विष्णु के वाहन गरुड़ के समान सुन्दर घोड़े पर सवार हुआ और सामइया पहुँच कर वहां से बछेरे ले आया। इस प्रकार उसने अपना वचन और पिता की इच्छा पूर्ण की।

केसर ने एक बार ज्योतिषी को बुलाकर अपनी जन्मपत्री दिखाई और पूछा 'मेरी आयु कितनी है?' ज्योतिषी ने उसको थोड़ी आयुमात्रा बताया। तब उसने कहा 'यदि मैं यों ही मर जाऊंगा तो मुझे

---

२ सिन्ध में दो हम्मीर हुए हैं। पहला हमीर कच्छ के लाखा फूलाणी के समय में हुआ था और जब कच्छ के पुँआरा जाम और मुमस्ती के विरुद्ध गूजर में लड़ाई हुई थी तो इसने जाम का साथ दिया था। यहाँ जिस हमीर से तात्पर्य है वह दूसरा हमीर था। यह सामइया अथवा मीमपुर का था। अल्लागद के राज मवचन मे (१ २८ ई से ? ४४ ई तक) इस पर चढ़ाई की थी। इस दूसरे हमीर को कच्छ के जाड़ेजा राजा जाम लाखा जाडाणी के भाई दालाजी के -ँन्न टोपीजी ने मारा था।

कोई न जानेगा और यदि युद्ध मे प्राणत्याग करूँगा तो मेरा नाम अमर रहेगा।' यह विचार करके वह सामइया गया और मेनी नदी के किनारें चरती हुई हमीर की सात सौ ऊँटनियों को ले आया[1] तथा कीर्तिगढ पहुँच कर उन्हें भाटों को दान कर दीं। इतना होने पर भी हमीर की सेनाने कीर्तिगढ पर चढाई न की। अब, केसर तीसरी वार सामइया पहुँचा। उस समय दशहरे का पर्व था इसलिए हमीर की बहू वेटिया रथ मे बैठकर सैर करने निकलीं थी। वहा से केसर उस रथको हांक कर साथ ले गया। वे सब मिल कर १२५ सुमरी[2] स्त्रिया थीं।

हमीर ने अपने मन्त्री को कीर्तिगढ भेजा और उसने जाकर केसर से कहा "ये तो हमीर की बहू बेटिया हैं, आप इन्हें उसी भाति वापिस बिदा कर दीजिए जिस भाति सुसराल से अपनी बहन वेटियों को लाकर दहेज के साथ वापस भेजते हैं"। इस पर केवर ने हँसकर उत्तर दिया, "यह माल तो हमारा हो चुका, अब तो ये हमारे घर की रानियां हो गई।" यह उत्तर सुनकर मन्त्री वापस लौट गया।

इस के वाद केसर ने चार[3] सुमरियों को तो अपने पास रख लिया और बाकी को अपने भाई-बन्धुओं मे सब को एक एक करके वाट दिया। इन चारों के अतिरिक्त भी केसर के वहुत सी रानिया थीं। दश बारह वर्ष तक झगडा यों ही चलता रहा और इसी वीच मे केसर

---

१ ऊँटो वा ऊँटनियों के टोले (झुण्ड) को एक साथ घेर कर लाने की तरकीब यह है कि ऊँट के खून में रंग कर एक कपडे को बांस पर लगाकर इतना ऊँचा कर देते हैं कि सब ऊँटो को दिखाई पडे। फिर बास को लिये हुए एक आदमी आगे आगे दौडता है तो सब ऊँट पीछे चले आते हैं।

२ सुमरा, वास्तव मे हिन्दू राजपूत थे परन्तु अलाउद्दीन खिलजी ने सुमरा दूदा और चनेसर को जीतकर सिन्ध का राज्य अपने अधिकार में कर लिया था। इसके बाद बहुत से सुमरा मुसलमान हो गये।

३ इन चार मे से एक चारण की लडकी थी।

व उसके भाई-बन्धुओं के इन सुमरी रानियों के पेट से अठारह[1] पुत्र उत्पन्न हुए।

अन्त में हमीर ने केसर से कहलाया 'मैं तुम से लड़ने के लिए आऊँ परन्तु कीर्तिगढ़ तो खारी जमीन में बसा हुआ है इसलिए मेरी सेना के लिए खाने पीने का क्या प्रबन्ध हो सकता है?' इस पर केसर ने उत्तर भेजा 'मैं तुम्हारी फौज के लिए एक हजार बीघा में गेहूँ पैदा करा दूंगा।' अब हमीर कीर्तिगढ़ आया और लड़ाई शुरु हुई। इस लड़ाई में बहुत से राजपूत मारे गए और अन्त में केसर और उसके पुत्र भी अपने भाई भतीजों सहित काम आए। केसर के पुत्रों में से केवल हरपाल बचा। सुमरी रानियां अपने २ पतियों के साथ सती हो गईं[2]। कीर्तिगढ़ नष्ट हो गया।

उस समय अणहिलवाड़ा में वाघेला कर्ण गैला[3] राज्य करता था।

---

1 इनमें से नौ तो केसर के थे।

2 मूल बात यों है कि केसर के पुत्र हरपाल ने चिता बनाकर सब ही सुमरियों को जला दिया और कीर्तिगढ़ का विध्वंस कर दिया। इसके बाद उसने पाटण में आकर शरण ली। भाट कहता है कि उसके वंश की नौ शाखाएं हुईं।

मकवाणा राणिंग(१) अहो बालल(२) मखाला
लखाधव झुपाण(३) भला कसी(४) भय माई।
अतरपाट शवल थोय(५) अके परजन(६) वाघो
सिटोदर(७) ने हापेव(८) अके अब राण(९) ज्याथी।
नव शाखाओ नव लड़ मां मकवाणो हलमी माणि।
एटली शाख उखमल तल तिलक शाख मकवा तणी॥

3 कर्ण वाघेला का समय १२९६ ई से १३०४ ई तक का था और हरपाल का समय ११वीं शताब्दी में ही आता है। इसीलिए इसे सिद्धराज का पिता कर्ण सोलंकी समझना चाहिए जिसका समय १०७२ ई से १०९४ ई तक का था। पृथ्वीराजरासो में लिखा देखा है कि पृथ्वीराज के समय में झाला मौजूद थे और पृथ्वीराज का समय कर्ण वाघेला से पहले का है। फिर केसर★

★को मारने वाले हम्मीर सुमरा को सिंध के समा जाम हालाजी के कुँवर हिंगोलजी और होथीजी ने मारा था। ये ११४७ ई० के पहले हुए थे, क्योंकि इनके काकाजी के दत्तक पुत्र लाखाजी और लाखियारजी इनसे अवस्था में छोटे थे और वे ११४७ ई० में कच्छ में आये थे। इन लाखाजी के दो पुत्रिया थीं, जिनमें से एक तो सिद्धराज को ब्याही थी और दूसरी जगदेव परमार को। सिद्धराज का देहान्त ११४३ ई० में हुआ था और उसका विवाह इससे पहले ही हुआ था। इस हिसाब से हरपाल का समय कर्ण सोलंकी के समय में ही आता है।

फिर, कर्ण बाघेला के समय में सिन्ध के सुमरा राजपूतों में हमीर नाम का कोई व्यक्ति नहीं था। उस समय तो दूदा और चनेसर नाम के दो आदमी सुमरों की गद्दी के वारिस थे। इनमें से जब चनेसरको गद्दी न मिली तो वह भागकर बादशाह अलाउद्दीन के पास दिल्ली पहुंचा और उससे मदद मागी। सुमरा राजपूतो ने अब तक मुसलमानों को लडकी न दी थी और इसीका उनको अभिमान था, परन्तु चनेसर ने अपनी बहन बादशाह को देने का वादा किया और अपने साथ फौज ले आया। इस लडाई में दूदा मारा गया और बाद में जब चनेसर की मति ठिकाने आई तो वह भी फौज के सामने हो गया और लडते लडते मारा गया। बचे हुए सुमरों को जबरदस्ती मुसलमान बना लिया गया और जो बची हुई स्त्रिया थी वे भागकर कच्छ के जाम अबडा की शरण में चलीं गई। बादशाह के लश्कर ने उनका पीछा किया। यद्यपि अबडा जाम उस समय अधिक शक्तिशाली नहीं था परन्तु शरण में आई हुई सुमरी स्त्रियों की रक्षा करना उसने अपना कर्त्तव्य समझा और वह बादशाही लश्कर का सामना करने के लिए तैयार हो गया। इतने मे सुमरियाँ नलिया के पास बडसर गाँव में जा पहुंची परन्तु वहाँ भी बचने का कोई उपाय न देख कर वे जीवित ही जल मरीं। इस स्थान पर अब भी प्रतिवर्ष फाल्गुन शुक्ला १५ को सुमरों का मेला भरता है और अबडा जाम अब भी शरणाधार कहलाता है तथा देवता की भाँति पूजा जाता है।

बाबरा भूत का सिद्धराज के समय में होना बताया जाता है, सम्भव है वह उसके पिता कर्ण सोलंकी के समय में भी हो, परन्तु कर्ण बाघेला के समय में तो उसका होना असंभव ही प्रतीत होता है।

ऐसा ही झगडा हो गया और उसको भी वश मे करके उसने अपनी स्त्री बना कर रखा।

एक दिन प्रातःकाल राजा कर्ण अपने दरबार मे बैठा हुआ था। उसने हरपाल मकवाणा को बुलवाया और वह आकर उसके सामने खडा हुआ। कर्ण ने उसकी सेवाओ के बदले में वर मांगने के लिए कहा। उसने कहा "एक रात मे मैं जितने गांवों मे तोरण बाध सकू उतने गाव मुझे दे दीजिए।" कर्ण ने इस बात को स्वीकार कर लिया और उसको इस विषय का एक लेख भी लिख कर दे दिया। जब हरपाल घर गया तो शक्ति ने उससे पूछा "राजा ने आपको क्या इनाम दी?" हरपाल ने जो कुछ दरबार मे हुआ था वह सब कह सुनाया। शक्ति ने तोरण बाधने का काम अपने ऊपर लिया। हरपाल ने उस समय बावरा भूत[1] को भी अपनी सहायता के लिए बुलाया। वह तुरन्त ही अपने

---

१ जब शक्ति देवी ने ही काम अपने हाथ में ले लिया था तो फिर बावरा भूत से सहायता मागने की कोई आवश्यकता न रह गई थी परन्तु मूल बात इस प्रकार है कि पहले जब हरपाल और बावरा भूत में युद्ध हुआ था तब रात भर लडते लडते हरपाल थक गया था और उसे कडाके की भूख लगी थी इसलिए वह रैबारिया के बाडे में जाकर कुछ बकरे ले आया और श्मशान में चला गया। वह बकरो को मुर्दों की चिता मे सेक सेक कर खाने लगा। इतने ही में श्मशान की देवी ने भी हाथ फैलाया और हरपाल ने अपना सब भोजन उसके हाथ में रख दिया। देवी ने उस भोजन को समाप्त करके फिर हाथ फैलाया तो हरपाल ने अपनी जङ्घा का मास काटकर उसको दे दिया। इससे देवी बहुत प्रसन्न हुई और उसे वर मागने के लिए कहा। हरपाल ने कहा, तू मेरी स्त्री होकर मेरे साथ रह। देवी ने कहा, "मैं देवता हू और तू मनुष्य, अपना लग्न कैसे हो सकता है?" उसने कहा, "यदि तुझे मुझमें कोई देवतापन मालूम पडे तो मेरा कहना करना।" इस प्रकार प्रतिज्ञा करके शक्ति उसके साथ घर चली गई और वहीं रहने लगी। जब राजा के लेख का हाल हरपाल ने शक्ति से कहा तो उसने सोचा कि अब हरपाल के देवत्व की परीक्षा लेने का अच्छा अवसर आ गया है। राजा की यह आज्ञा थी कि एक रात में जितने गावो में तोरण और गागरबेडियां

सवालाख साथियों के साथ आकर उपस्थित हो गया। ये लोग रात को नौ बजे रवाना हुए और पहला तोरण पाटडी में बांधा और फिर उसी के नीचे के छः सौ गांवों में भी तोरण बांध दिए। सुबह होते होते वे दो हजार गांवों में तोरण बांध कर लौटे। उधर सुबह होते ही कर्ण राजा ने अपने मन्त्री को यह देखने के लिए भेजा कि मकवाणा ने कितने गांवों पर अधिकार किया। मन्त्री सांढनी (ऊंटनी) पर चढ़कर रवाना हुआ और उसने दो हजार गांवों की सूची उपस्थित कर दी। राजा ने अपना प्रतिज्ञापत्र देखा और उसके अनुसार ही इस गांवों का पट्टा कर दिया[1]। जब दोपहर में राजा अन्त पुर में गया

(बड़ों को एक पर एक) बंध जायेंगी उतने ही गांव उसको मिल जायेंगे– इस लिए हरपाल ने शक्ति से कहा "मैं तो गागरबेड़ियां रखता हूं और तुम तोरण बांधो। इसके अनुसार शक्ति ने पाटडी से शुरू करके रातभर में छः सौ गांवों में तोरण बांधे। उधर हरपाल ने समय पाकर बाबरा भूत को बुलाया और उसने अपने सहायकों सहित रात भर में २१ गांवों में गागरबेड़ियां रखीं। हरपाल के इस चमत्कार को देखकर शक्ति ने जान लिया कि उसमें देवत्व मौजूद है। इसके बाद उनका विवाह हो गया। नैमीशाली गांव के रावल औदीच्य ब्राह्मणों ने यह विवाह सम्पन्न कराया था।

१ नया गांव बसाने वाला पहले ज्योतिषियों से अच्छा मुहूर्त निश्चित करवाता है फिर दो स्तम्भ ठीक कराकर उन पर तोरण बांधता है। यह तोरण और स्तम्भ कीर्तिस्तम्भ का काम करते हैं। इसके बाद एक जलकुम्भ की स्थापना करके अपनी कुलदेवी का आवाहन करता है और उसका पूजन करता है। कुल देवी के पूजन के पश्चात् हनुमान का पूजन होता है और अन्त में ब्राह्मण-भोजन के उपरान्त यह कार्यक्रम समाप्त होता है।

मूल में जो बात लिखी है उससे मिलती हुई एक बात यहां पर लिखते हैं –

"रिचबोर्न का धर्मदाय का भाग –रिचबोर्न पर टिचबोर्न कुल का अधिकार बहुत पुराना बताया जाता है। कहते हैं कि सन् १०६६ में होने वाली इंग्लैण्ड के नार्मण्डी के ड्यूक विलियम की विजय से भी २ वर्ष पहले से इनका कब्जा इस पर बराबर चला आता है। बुढ़ापे और कमजोरी के कारण मृत्युशय्या

पर पडी हुई लेडी माबेल्ला (Mabella) ने अपने प्रिय पति से यही अन्तिम प्रार्थना की "कम से कम इतना इन्तजाम कर दीजिए कि मेरे बाद में प्रतिवर्ष कुमारी मेरी के मेले के (ता० २५ मार्च के दिन कुमारी मेरी को देवदूत मिले थे और उसे क्राइस्ट के अवतार के विषय में समाचार दिए थे) अवसर पर गरीबों को धर्मादे की रोटियां मिल जाया करें।' इस स्त्री के पति का नाम सर रोजर था। उसने अपनी स्त्री की बात तुरन्त ही स्वीकार करली और कहा "जितनी देर में यह लकडियों का ढेर जल चुके उतनी देर में तुम जितनी दूर फिरकर आ जाओगी उतनी ही जमीन इस धर्मकार्य के लिए अलग निकाल दूंगा।' लेडी माबेला बहुत दिनों से बीमार थी इसलिए बहुत कमजोर हो गई थी। उसके पति ने सोचा था कि कमजोरी के कारण वह बहुत थोडी दूर ही आसपास की जमीन में फिर सकेगी इसलिए वह जमीन अलग निकाल दूंगा परन्तु जब उसके कहने के अनुसार उसके नौकर उसको एक खेत के कोने में ले गये तो उसमें कुछ ताजगी आती हुई मालूम पडी। इससे उसके पति को बहुत आश्चर्य हुआ। देखते ही देखते वह थोडी ही देर में कितने ही उपजाऊ और सरस एकडों में घूम आई। जिस खेत में लेडी माबेला का यह चमत्कारपूर्ण कार्य सम्पादित हुआ था वह अब तक 'क्रॉल्स' (रेंग कर चलने का खेत) कहलाता है। यह भूमि पार्क अथवा चौगान में जाने के मार्ग के पास है और इसका क्षेत्रफल २३ एकड है। जब काम समाप्त हो गया तो माबेला के नौकर उसको फिर पलग पर ले आए और उसने अपने कुटुम्ब के लोगों को बुलाकर कहा "जब तक यह धर्मदाय चलता रहेगा तब तक अपना वंश भी चलता रहेगा और उसकी उन्नति होगी परन्तु यदि अपने कुटुम्ब में कोई ऐसा नीच पैदा हो जाएगा कि इस कार्य को बन्द कर देगा तो अपना वंश समाप्त हो जावेगा, कोई पुरुष-उत्तराधिकारी इसमें न बचेगा और इसकी निशानी यह है कि उसके सात पुत्र होने के बाद सात पुत्रियाँ होकर फिर कोई पुत्र न होगा।" इस प्रकार हेनरी द्वितीय के समय में यह प्रथा पडी और कितनी ही शताब्दियों तक चलती रही तथा प्रतिवर्ष २५ मार्च का दिन इस कुटुम्ब के लिए उत्सव का दिन हो गया।

किया। इस पर राजा ने हरपाल को दो हजार गाँव देने की बात कही। रानी ने हरपाल को अपना राखीबंध भाई बना रखा था इसलिए उसने तुरन्त ही अपना रथ सजवाया और उसके पास कापड़ा (दक्षिणा) लेने पहुँच गई। हरपाल ने जब रानी को आते देखा तो हवेली के बाहर आया और आदर सहित अन्दर ले जाकर पूछा 'बहिन आज कैसे आना हुआ ?' रानी ने उत्तर दिया 'मैं अपने भाई से कापड़ा (कापली) लेने आई हूँ।' इस पर हरपाल ने पाँच सौ गाँवों का मास नामक परगना अपनी बहिन को दक्षिणा में दे दिया।

जब बाबरा भूत ने हरपाल से यह कौल किया था कि वह उसके याद करते ही उपस्थित होकर आज्ञा का पालन करेगा तो इसके साथ ही उसने यह भी शर्त रखी थी कि 'उस काम के समाप्त होते ही तुम मुझे काम नहीं बताओगे तो मैं तुम्हें खा जाऊंगा।' अब हरपाल भूत से पिंड छुड़ाने के लिए तरकीब सोचने लगा क्योंकि प्रतिज्ञानुसार वह तो उसे खाने के लिए तैयार हो ही गया था। इसलिए उसने भूत से कहा कि एक बड़ा भारी लट्ठ (बांस) लो और उसको जमीन में गाड़ दो फिर उस पर चढ़ते और उतरते रहो जब यह काम समाप्त हो तब

गत शताब्दी के अर्ध भाग तक यह यह प्रथा चलती रही परन्तु इसके बाद इसकी निन्दा होने लगी क्योंकि टिचबोर्न का धर्मदाय लेने के लिए सभी मार्गों से सभी तरह के लोग आने लगे। उनमें बहुत से आवारा बदमाश और आलसी लोग भी होते थे। यहाँ तक होने लगा कि जब वे लोग यहाँ आते तो आसपास के लोगों के यहाँ चोरी भी कर लेते थे। अन्त में मेजिस्ट्रेट और भले भले आदमियों की शिकायतों पर सन् १७९६ में यह धर्मदाय बन्द कर दिया गया। आश्चर्य की बात यह हुई कि जिस दिन यह कार्य बन्द हुआ उस दिन जो बेरोनेट (उस कुटुम्ब का सरदार) था उसके सात पुत्र थे और जब उसके बाद उसका बड़ा पुत्र स्वामी हुआ तो उसके सात पुत्रियाँ हुईं। इस अन्तिम बेरोनेट ने अपने कुटुम्ब को मृत स्त्री के स्थापन के अनुसार अपने कुटुम्ब का नाम बदल कर डोटी (Doughty) रख लिया। (Winchester Observer)

मुझको खा जाना। इस प्रकार हरपाल भूत की चिन्ता से मुक्त हुआ।[1]

हरपाल और शक्ति का वंश अमरवेल की तरह विस्तार पाने लगा। उनके सोढा[2], मागा और शेखडा नामके तीन पुत्र तथा उमादेवी नामकी एक पुत्री हुई। एक दिन शक्ति के कुंअर हवेली के आगे आंगन में खेल रहे थे। इतने ही में राजा का एक मस्त हाथी छूटकर आया।

---

१ इससे मिलती हुई एक बात इस प्रकार है—"एक बार मिचायल स्कॉट बड़ी परेशानी में फँस गया क्योंकि उसका एक भूत से पाला पड गया था, जिसके लिए निरन्तर काम बताने की चिन्ता उस पर सवार रहती थी। पहले उसने भूत को ट्वीड (Tweed) के आरपार केल्सो (Kelso) में जलबन्धक (Damhead) बांधने की आज्ञा दी। एक रात भर में यह काम तैयार हो गया। यह जलबन्धक अब तक 'भूत का बांध' कहा जाता है। फिर मिचायल ने उसको ईल्डर (Eilder) पहाडी को तीन भागों में विभक्त कर देने के लिए कहा। यह काम भी एकही रात में पूरा हो गया। अब भी इस पहाडी के यही तीनों सुन्दर शिखर विद्यमान हैं। अन्त में, इस जादूगर ने उस भूत को समुद्र की रेत को बटकर रस्सा बनाने का कभी न पूरा होने वाला काम सौंपा और अपना पिंड छुडाया।

(Appendix to the Lay of the Last Minstrel)

२ अंग्रेजी मूल में शेडो नाम लिखा है परन्तु नीचे के गुजराती छप्पय में सोढो लिखा है इसलिए हमने भी वही नाम लिखा है। 'सोढा ने अमरवेल उत्पन्न की' यह भी इस छप्पय में लिखा है, शायद इसीलिए अंग्रेजी मूल में स्वर्ग बेल (Creeper of Paradise) लिखा है—

छप्पय—
गाम मशाली तणे, विरद 'रावल' बोलाव्यो,
अंग थकी ओदीच्य, तेणे मंगल बरताव्यो।
पोहो पाटण परणियो, जगत को बात न जाणी,
हुवा देव हरपाल, शक्ति रीझी थई राणी।
संसार बात राखी सही, अमरबेल उत्पन करी।
सोढो, मागो ने शेखरो, माई उमादे डीकरी॥

शक्ति देवी[1] ने उसी समय अपना हाथ आगे बढ़ाकर कुंवरों को बचा लिया[2] तभी से ये लोग झाला कहलाने लगे।[3]

छप्पय— "तू सुखियो सामन्त देस सब मारया कोट
तू सुखियो सामन्त बखपडे लीधा चोट
तू सुखियो सामन्त शक्ति राखी करि राणी
तू सुखियो सामन्त अढारसें घर[4] घर आणी।
हरपाल बडो अमरा हुवो दिन दिन अधिको दाखिय।
कुंआरो तोल केसर तणा ईसा सामन्त म आखिय॥
पाटडिये पोहोपाट मेहेल कीधो मकवाणो
राणी गोख रहत गति को शक्ति न जाणी
राय तणा गजराज मेह छूट्या मदमंता
दूर पंथ हलिया राजवी कुंअर रमंता।
सोबो, सांगो ने शेखडो लावे कर झाली लिया
यो आप शक्ति आपणी कुंअर सात झाला किया॥

---

१ यह शक्ति देवी प्रताप सोलंकी की पुत्री थी। चैत्र कृष्णा ११ संवत् ११७१ के दिन इसका देहान्त हुआ था। इस तिथि को झाला राजपूत व्रत भी गोज मनाते हैं। हरपाल की दूसरी रानी थर पारकर के सोढा की पुत्री राजकुंवर बाई थी—उसके नौ कुँअर हुए थे। हरपाल की मृत्यु ११३ ई० में हुई थी उसने पाटडी में १० ई० से ११३ ई० तक राज्य किया।

२ गुजराती में 'झालवाना' शब्द का अर्थ बचाना या बचा लेना होता है इसी लिए झालने से उनका नाम झाला पड़ गया।

३ पास ही में एक चारणी का लड़का भी खेल रहा था उसके सिर में एक थपकी (थपड पटीरया) मारकर उसको आगे किया था इसलिए झाला राजपूतों के यहाँ चारण टपरिया कहलाते हैं।

४ पहले लिख चुके हैं कि हरपाल ने तेवीस सौ गाँवों में तोरण बांधे थे उनमें से पाँच सौ गाँव रानी को कांचली में दे दिए, बाकी अठ्ठारह सौ गाँव रहे। यही बात ठीक है क्योंकि अब तक अट्ठारह सौ गाँवों की मुंडलाव कह-लाती है। कमंची मूल में दो हजार गाँव लिखे हैं यह भूल अथवा अनुमानी से लिखे मालूम होते हैं।

ईडर

विन्ध्य और अरावली पर्वतश्रेणियों को मिलाने वाली पहाडियों के नैर्ऋत्य कोण मे ईडर का किला आगया है। यह एक बहुत ऊचे सपाट भाग पर स्थित है और इसके चारों ओर की छोटी-छोटी पहाड़ियों के बीच-बीच में आए हुए नीचे भाग को प्राकारों द्वारा कृत्रिम रूप से भर कर इसको और भी सुदृढ बना लिया गया है। ईडर नगर पहाडी की तलहटी मे ही बसा हुआ है। इसके चारों ओर सुन्दर पत्थर की चार दीवारी है जिसमें जगह जगह गोल बुर्जे भी बनी हुई हैं। इसके चारों ओर की चट्टानोंवाली पहाडियों ने इसको ऐसा ढक लिया है कि थोडी दूर से देखने पर भी यह अच्छी तरह दिखाई नहीं पडता। इन पहाडियों पर जगह जगह चौकिया बनी हुई हैं जहा तोपें रखी हुई हैं तथा यहा के राजा के जेठावत, कूपावत और चौहान सामन्त रक्षा के लिए पर्य्याप्त सख्या मे मौजूद रहते हैं। राठौड़ राजाओं के महल शहर के पिछले भाग मे जलाशय के पास ही बने हुए हैं जहां से एक ऊभा [उर्ध्वगामी] व सुरक्षित पगडडियों का मार्ग कितने ही दरवाजों और चौकियों से होता हुअ किले के सपाट मैदान मे पहुँचता है। पहाडी के दो मुख्य शिखर हैं जिन पर इमारतें बनी हुई हैं। बायी ओर

---

१ ईडर माहीकांटा में एक प्रमुख रियासत है। यह इतिहास में परम वीर राजपूतों का सस्थान होने के कारण प्रसिद्ध है। स्थानेश्वर के युद्ध में जब यहाँ का बच्चा बच्चा राजपूत अपने स्वामी के लिए बलिदान होगया तो यह मारवाड के राठौडों के हाथ पड गया और जब तक मरहठों ने आकर यहाँ पर अधिकार न कर लिया तब तक उन्हीं के आधीन रहा। राठौडो और मरहटों ने इसको नौ बार आपस में लिया दिया। ईडर का राजा गुजरात के सुल्तानों के हृदय में कांटे की तरह खटकता था। अन्त में, अहमदशाह ने यहा से १८ मील की दूरी पर इस किले पर निगाह रखने के लिए १४२७ ई० में अहमदनगर का किला बनवाया।

एक बड़ा भारी हिन्दू देवालय है जो ईडर के राव रणमल का शरण्य स्थान कहलाता है, दाहिनी ओर एक छोटी सी छतरीदार इमारत है, जिसको 'सुहागन रानी का महल' कहते हैं। नगर के आगे का मैदान तो अभी तक भी घने वृक्षों के अभेद्य जंगल से ढका हुआ था। इसी जंगल के कारण यहाँ का किला अत्यन्त दुर्गम समझा जाता था और इसीलिए गुजरात में एक कहावत भी अब तक प्रचलित है कि जब किसी असाध्य काम को कोई कर लेता है तो वह कहता है, 'मानों ईडर गढ़ जीत्यो रे आनंद भयो'

ईडर दुर्ग प्राचीन इतिहास में ईल्व दुर्ग कहलाता था और द्वापरयुग में यह ऐलवण राक्षस एवं उसके भाई वातापी के रहने का स्थान था। ये राक्षस आसपास के प्रदेशों में उपद्रव मचाते थे और मनुष्यों को खा जाते थे इसलिए बहुत सा देश उजाड़ हो गया था। अन्त में अगस्त्य ऋषि ने उनका नाश किया। जब कलियुग में युधिष्ठिर का नाम खूब प्रसिद्ध था और लोगों को ऋणमुक्त करने के लिए विक्रम का उदय नहीं हुआ था तब ईडर में वेणीवच्छराज[1] नामक राजा राज्य करता था।

मूलकथा इस प्रकार है —हरिद्वार के उत्तर में श्रीनगर नामक स्थान के राजा के कोई सन्तान नहीं थी। एक ब्राह्मण ने उसको प्रयोग बताया कि रजस्वला होने के बाद चौथे दिन रानी रक्त से स्नान करे और फिर शुद्ध जल से स्नान करके राजा के पास जावे, दूसरे दिन प्रातःकाल भी ऐसा ही करे। रानी ने दूसरे दिन जब प्रातःकाल रक्त से स्नान किया तो एक गिद्ध उसको मांसपिण्ड समझकर उठा ले गया और ईडर के पर्वत पर ले जाकर डाल दिया। वहाँ कुछ सिद्धपुरुषों की तपस्विनियाँ थीं [illegible] अपने गुप्त अंगों को ढके हुए वह उनके पास गई और कपड़ा माँगा। सिद्धा ने उसे कपड़ा दे दिया। इसके बाद स्नान करके वह सिद्धाश्रम में गई और वहाँ सिद्धलोग उसे अपनी कन्या के समान रखने लगे। दस मास पूरे होने पर उसके पुत्र का जन्म हुआ। पाँच वर्ष का होने पर यह बालक बछड़े चराने जाने लगा इसलिए उसका नाम वच्छराज पड़ा। उन दिनों मानसरोवर के पर्वत पर एक अघोरी रहता था; उस ओर [illegible] सिद्धा ने वच्छराज को मना कर दिया था। एक दिन वह उस

इमके पास सोने की एक चमत्कारिक मूर्ति[1] थी, जिसकी सहायता से उसने पर्वत पर वडा भारी किला व वहुत से जलाशय वनवाये थे।

पर्वत पर चला गया जो आजकल मटारसा का डू गर कहलाता है। वहा पर उसे एक दूसरा सिद्ध मिला जिसने उसको पराक्रमी जानकर महाकालेश्वर के अघोरी के पास जाने के लिए कहा। उसने कहा, 'मेरे गुरुओ ने मुझे वहा जाने के लिए निषेध कर दिया है।' सिद्ध ने कहा, "तू वहा जा, पहले तो वह तेरा सत्कार करेगा फिर कडाही में तेल गरम करके उसके सात प्रदक्षिणा करने के लिए कहेगा, तब तू उससे कहना कि पहले तुम करके बताओ। जब वह सातवी बार फिरने लगे तो मेरा नाम लेकर तू उसको कडाही में डाल देना, इससे वह सोने की मूर्ति बन जावेगा। फिर, तुझे जैसे जैसे आवश्यकता पडे उसका एक एक अङ्ग काट लेना। जिस अङ्ग को काटेगा वही फिर बन जायेगा और तेरे पास उतना का उतना सोना बना रहेगा।" यह सुनकर वह वहा गया और सिद्ध के कथनानुसार स्वर्ण-पुरुष लेकर घर आया। सिद्ध ने कहा "इसकी सहायता से तू ऐसा काम कर जिससे तेरा नाम अमर रहे।" तब उसने उसी पहाडी पर ईडरगढ बनाया और शहर भी बसाया। एक बाग लगाकर उसमें कुण्ड एव बावडी बनवाई। बाग मे से कोई चुपचाप फूल तोड ले जाता था इसलिए एक दिन बच्छराज स्वय शस्त्र लेकर पहरा देने लगा। उसने देखा कि गुफा में से एक नागकन्या निकली और फूल तोडने लगी। इतने ही में उसने आकर कन्याको पकड लिया और उसकी वेणी (चोटी) काट ली। फिर घर जाकर उसको चमत्कारिक स्त्री की वेणी समझकर उसकी पूजा करने लगा। उधर नागकन्या ने अपने घर जाकर अपनी वेणी के काटे जाने का वृत्तनत कहा। उसके पिता ने वच्छ को पकडने के लिए दूत भेजे परन्तु वे उसका रूप देखकर बहुत प्रसन्न हुए और उसको वेणी की पूजा करते देखकर वापस लौट आए। नागराज को जब यह वृत्तान्त ज्ञात हुआ तो उसने अपनी कन्या का विवाह उसके साथ कर दिया। वेणी का पूजन् करने के कारण उसका नाम वेणीवच्छराज पडा।

---

१ ऐसी ही एक मूर्ति कच्छ के जाम लाखा फूलाणी के पास भी थी, जिसमें से जितना सोना काटा जाता था उतना ही नया और बढ जाता था। यह स्वर्ण—पुरुष के नाम से प्रसिद्ध थी।

मेघी वच्छराज की रानी और पाताल लोक के राजा नागराज की कन्या थी। इन दोनों ने बहुत वर्ष पर्यन्त ईडर में राज्य किया फिर पीछे किसी बात के अनुसार लोप हो गये।

"एक दिन राजा और रानी दोनों अपने ईडरगढ के महल के झरोखे में बैठे हुए थे। इतने ही में शहर में से किसी के मर जाने के कारण रोने पीटने की आवाज सुनाई दी। रानी ने पूछा 'ये आदमी रोते पीटते जा रहे हैं, इसका क्या कारण है?' राजा ने कहा कोई मर गया है, इसलिए उसके शोक में रो रहे हैं। यह सुनकर रानी ने कहा 'जहां मनुष्य मर जाते हैं वह स्थान अपने रहने योग्य नहीं है। इसके बाद राजा और रानी दोनों तारण माता के पर्वत पर गए। वहां से आगे माता का स्थान है जिसके पास ही एक गुफा में होकर वे पाताल में उतर गये। उनके बाद में वह धरती बहुत दिनों तक उजड़ पड़ी रही।

वलभीपुर के भंग के समय शिलादित्य की रानियों में पुष्पावती नाम की एक रानी थी। उसने पुत्र उत्पन्न होने के लिए अम्बा भवानी की मनौती मान रखी थी। इसलिए वह उस समय आरासुर में ही थी। जब वह वापस लौटने लगी तो मार्ग ही में उसको समाचार मिला कि उसका स्वामी मारा गया। यह सुनते ही देवी से प्रार्थना करके उसने जिस पुत्र के होने का वरदान मांगा था वही पुत्र अपने वंशपरम्परागत राज्य को प्राप्त करेगा उसकी इस आशा पर भी पानी फिर गया। तब और कोई उपाय न रहा तो उसने एक गुफा में जाकर अपने प्राण बचाए और वहीं उसके पुत्र उत्पन्न हुआ जो गुफा में पैदा होने के कारण गोहा कहलाने लगा। रानी ने उस कुंवर को एक ब्राह्मणी[1] को सौंप दिया और उससे यह प्रार्थना की 'तू इसको तेरी जाति के उपयुक्त शिक्षा तो देना परन्तु इसका विवाह किसी राजपूत की पुत्री के साथ ही करना।' यह कहकर रानी तो चिता पर चढ़ अपने पति के शोक को

[1] इस ब्राह्मणी का नाम कमलावती था।

चली गई। उस समय ईडर भीलों के अधिकार मे था। जल्दी ही गोहा[1] अपनी ब्राह्मणी माता को छोड़कर भीलों के साथ साथ जगलों में घूमने लगा और अपनी हिम्मत और बहादुरी के कारण उनका प्रीतिपात्र हो गया। खेल ही खेल मे भीलों ने गोहा को अपना राजा चुन लिया और वहीं एक लड़के ने अपना अ गूठा काटकर रक्त से उसका राज-तिलक कर दिया।[2] इस प्रकार शीलादित्य का पुत्र वन का और ईडर गढ़ का राजा हुआ। कहते हैं कि उसके वशजों ने कई पीढ़ियों तक यहा पर राज्य किया, परन्तु फिर भील लोग परदेशी राजा से ऊब गए और गुहादित्य की आठवीं पीढी मे नागादित्य[3] नामक राजा पर उन्होंने

---

१. इस गोहा अथवा गुहादित्य को वलभीपुर के अन्तिम राजा सातवें शिलादित्य का पुत्र मानते हैं। परन्तु ऐसी बात नही है, क्योंकि सातवा शिला-दित्य ७६६ ई० (४४७ गुप्त अथवा वलभी सवत्) में हुआ था।

इस गुहादित्य के वशज उस समय मेवाड में चित्तौड पर राज्य कर रहे थे। यह गुहादित्य तो वलभीपुर के पूर्व राजा विजयसेन अथवा सेनापति भट्टार्क का पौत्र गुहसेन था जो वलभी का छठा राजा ५३९ ई० से ५६९ ई० तक रहा था और गुहिल ही कहलाता था। इसके वशज गोहिल अथवा गेलोटी हुए जो आजकल सीसोदिया नाम से कहे जाते हैं। गुहिल-पुत्र होने के कारण ये लोग गुहिलुत्त या गेलोत अथवा गेलोती वा गेलोटी कहलाये। इस गुहसेन का बडा कु वर धरसेन उसके बाद वलभी की गद्दी पर बैठा और छोटा कु वर गुहा अथवा गुहादित्य को ईडर का राज्य मिला। (गु अ)

२ इस खेल की बात ईडर के माडलिक भील राजा ने भी सुनी। उसके कोई पुत्र नहीं था इसलिए स्वाभाविक रीति से राजा बने हुए गोहा को उसने अपना पुत्र स्वीकार करके राज्य सौंप दिया।

३. ईडर की गद्दी पर बैठने वाले गेलोटी वश के राजाओं की परम्परा इस प्रकार है —

(१) गोहा अथवा गुहादित्य (२) केशवादित्य (३) नागादित्य (प्रथम) (४) भगादित्य अथवा भोगादित्य (५) देवादित्य (६) आशादित्य (७) कालभोजादित्य

हमला करके उसे मार डाला। नागादित्य का पुत्र बप्पा जो उस समय केवल तीन ही वर्ष का था किसी तरह बच गया और वही आगे चलकर मेवाड़ राज्य का संस्थापक हुआ।[1]

इस घटना के बाद मारवाड़ के मंडोवर नामक शहर से परिहार राजपूतों ने आकर ईडर के तोरण बांधे और इसको फिर से बसाया। इन राजपूतों ने भी कुछ काल तक ईडर पर राज्य किया। परिहार अमरसिंह के समय में कन्नौज के राजा जयचन्द्र दलपांगला ने अपनी पुत्री संयोगिता के विवाह के लिए राजसूय यज्ञ किया था और सभी राजाओं के पास निमन्त्रण भेजा था। उस समय ईडर चित्तौड़ के आधीन था इसलिए वहाँ के रावल समरसी ने अपने साले पृथ्वीराज के विवाह में जाते समय अपने सामंत अमरसिंह को भी साथ आने के लिए बुलाया था। परिहार सामन्त अपने पुत्र और पाँच हजार घुड़सवार साथ लेकर चित्तौड़ जा पहुँचा। कुछ समय बाद ही मुसलमानों के साथ युद्ध में पृथ्वीराज की हार हुई और इस युद्ध में परिहार

अथवा कालभोज (८) नागादित्य (द्वितीय) अथवा गुहादित्य द्वितीय। नागादित्य का पुत्र बप्प अथवा बाप्प हुआ। उसकी माता ने उसको बाकोर से एक मील की दूरी पर मांडीर के किले में आकर एक भील को सौंप दिया। उसने उसको पाराशर के जंगल में नागदा नामक गाँव में रखा। यह गाँव आजकल के उदयपुर के पास ही है। जब बप्पा पन्द्रह वर्ष का हुआ तो मेवाड़ में चित्तौड़ के मौरीवंश (परमार) के राजा ने जो उसका मौसेरा भाई था उसको अपना सामंत बना कर अपने पास रखा। उसी समय गजनी के मुसलमानों ने चित्तौड़ पर चढ़ाई की। बप्पा ने उनको हराकर भगादिया और गजनी तक उनका पीछा किया। वहाँ गजनी को जीतकर एक चावड़ा सामन्त को अपनी ओर से वहाँ का सरदार नियुक्त कर दिया। ईसवी सन् ७२६ में चित्तौड़ के सामन्तों ने बप्पा के पराक्रम से प्रसन्न होकर और मौरीवंश के राजाओं से तंग आकर उनको तो चित्तौड़ से निकाल दिया और बप्पा की सहायता करके उसको वहाँ का राज्य दे दिया। ७२८ ई० में 'रावल' की पदवी लेकर बप्पा चित्तौड़ की गद्दी पर बैठा।

[1] टॉड राजस्थान भाग १ पृ० २२ ।

भी काम आए। जब यह खबर ईडरगढ़ पहुंची तो बहुत सी रानियां सती हो गई और बहुत सी ईडर के उत्तर में एक ऊंची टेकरी है उस पर से गिर कर मर गई। यह टेकरी आज तक 'रानियों के कूद पड़ने की डूंगरी' अथवा 'हत्यारी डूंगरी' कहलाती है।

हाथी सोढ नाम का एक कोली अमरसिंह का विश्वासपात्र नौकर था। चित्तौड जाते समय वह ईडर उसी के भरोसे छोड़ गया था। हाथी जब तक जीवित रहा तब तक ईडर को अपने कब्जे मे बनाये रखा और उसके मरने के बाद उसका पुत्र शामलिया सोढ राज्य का वारिस हुआ। इसी के समय मे राठौड़ों ने पहले पहल ईडर मे प्रवेश किया।

जयचन्द दलपांगला[1] की मृत्यु के बाद उसका पुत्र सियोजी राठौड कन्नौज छोड कर मारवाड़ के रेतीले मैदानों मे आ बसा। उसके तीन पुत्र हुए जिनमें से सबसे बड़ा अस्तानजी तो उसके बाद गद्दी पर बैठा, उससे छोटे सोनगजी और अज्जी ने अपनी रोटी पैदा करने के लिए विदेश मे जाने का विचार किया और अणहिलवाडा के दरबार में आ पहुँचे। उस समय संभवत भीमदेव द्वितीय (सोलंकी) यहा का राजा था। वह इन कुॅअरों का मामा था इसलिए उसने उनको कड़ी परगने मे सामेतरा नामक गाव का पट्टा कर दिया। कुछ समय बाद ही अज्जी राठौड का विवाह चावडों की लडकी से हुआ। इन चावड़ों की जायदाद द्वारका के पास ही थी इसलिए इस अवसर पर उस भाग से ये लोग अच्छी तरह परिचित हो गए और वहीं पर एक संस्थान कायम करने की बात इनके मन मे उठी। फिर थोड़े दिन बाद ही अज्जी ने भोजराज चावड़ा को मार डाला और द्वारका का मालिक बन बैठा। अज्जी के दो कुॅवर हुए, वागाजी और वाढेलजी जिनके वंशज अब भी वागा और वाढेल कहलाते हैं।

उधर शामलिया सोढ के अत्याचारों से उसकी प्रजा मे असन्तोष बढ रहा था। उस समय उसकी प्रजा मे नागर ब्राह्मणों की संख्या बहुत

१ जयचन्द को 'दलपुंगल' की उपाधी प्राप्त थी।

बड़ी थी और इन ब्राह्मणों का मुखिया ही राजा का प्रधान मन्त्री भी था। उसके एक बहुत सुन्दरी लड़की थी। एक दिन राजा की दृष्टि उस पर पड़ गई इसलिए वह उस पर मोहित हो गया और उसके पिता से उसका विवाह अपने साथ कर देने की मांग की। मन्त्री ने सोचा कि यदि एकदम ही ना करदी जावेगी तो शामलिया बलपूर्वक उसकी लड़की को ले जावेगा इसलिए उसने विवाह की उपयुक्त तैयारी करने के लिए छः महीने की अवधि मांगी और इसी बीच में किसी बलवान् राजा का आश्रय ढूंढ लेने की तरकीब सोची। इसी आशय से उसने सामतरा की यात्रा की और वहां पहुँचकर सोनंगजी के दरबार में अपना परिचय दिया। इसके बाद उसने सोनंगजी से कहा "यदि आप में साहस हो तो मैं आपको सौ लाख रुपये की ईडर दिला सकता हूँ।" सोनंगजी ने उसकी बात स्वीकार कर ली। इसके बाद घर लौटकर ब्राह्मण ने विवाह की तैयारी का ढोंग दिखाना शुरू किया। नित्य ही दो-दो तीन-तीन रथों में बैठकर सगे सम्बन्धियों की स्त्रियों के बहाने मारवाड़ी राजपूत योद्धा उसकी हवेली में आकर जमा होने लगे। इस प्रकार सब योद्धा और उनके प्रधान आ पहुँचे। कुनबी लोगों ने उनके खाने के लिए बकरों और शराब का प्रबन्ध किया। फिर ब्राह्मण ने शामलिया को कहला भेजा "मेरी तैयारियां पूरी हो चुकी हैं आप जान सजाकर जीमण में पधारें।" तदनुसार जान भी आ पहुँची और ब्राह्मण ने उनको खूब शराब पिलाकर तथा दूसरे मादक द्रव्य खिलाकर नशे में बेहोश कर दिया। फिर उस मन्त्री ने अपने नौकरों को दूसरी परोसगारी करने की आज्ञा दी। मारवाड़ी राजपूतों ने इस संकेत को समझ लिया और जिस महल में जीमण हो रहा था उसके घेरा डाल दिया और कोई भी बाहर न निकल सके ऐसा प्रबन्ध कर दिया। परन्तु कुछ कालियों ने एक ओर से रास्ता निकाल लिया और वे शामलिया को बाहर ले आए। राजा (शामलिया) ने शत्रुओं की टोली में होकर किले में पहुँचने का प्रयत्न किया परन्तु रास्ते में ही उसके बहुत से मनुष्य मारे गए और ईडरगढ़ के दरवाजे से थोड़ी दूर पर ही वह भी घायल होकर गिर पड़ा। जहां पर वह पड़ा पड़ा तड़प रहा था वहीं

सोनगजी आए। तब शामलिया ने अन्तिम बार उठने का प्रयत्न किया और अपने ही रक्त से विजयी राठौड़ के मस्तक पर तिलक कर दिया। उसने सोनगजी से मरते मरते यह विनती की कि जब जब ईडर की गद्दी पर कोई राठौड बैठे तब तब सोढा राजपूत अपने दाहिने हाथ के रक्त से राजतिलक करे और उसकी स्मृति में इन शब्दों का उच्चारण करे "तपे शामलिया सोढ को राज'। राव सोनगजी ने यह बात मजूर करली और शामलिया ने प्राण छोड दिए।

शामलिया की स्त्री, जो उस समय गर्भवती थी, भाग कर महादेव खोखरनाथ के डूॅगर की तलहटी में एक गुफा में जा छुपी। महादेव के पुजारियों ने ही उसका रक्षण किया और समय पर उसके एक पुत्र का जन्म हुआ जिसके वशज अब भी मेवाड की सीमा पर सरवाण मे तथा पाटणवाडा में पाए जाते हैं और खोखर कहलाते हैं।

ईडरगढ के चढाव पर जिस स्थान पर शामलिया तथा उसके साथी मरे थे व जहा उनके रक्त के छींटे पड़े थे वहा अब भी लोग काली चौदस के दिन हनूमान् का पूजन करने के लिए जाते हैं और तेल सिंदूर आदि चढ़ाते हैं। जब तक सोनगजी का राज्य ईडर मे रहा तथा बाद में जब उनके वशज पोल में चले गए तब से अब तक जब भी कोई उनका वशज गद्दी पर बैठता है तो शामलिया का वशज, सरवाण का कोली, आकर राजतिलक करता है और इस प्रकार अब भी शामलिया के अपरास्त राज्य पर अपना दावा प्रगट करता है।

कर्नल टॉड ने लिखा है कि 'गोहिल[1] राजपूत अपने को सूर्यवशी

---

[1] शिलादित्य ७वें की रानी वलभी के नाश के समय भाग कर गुफा मे चली गई थी, वहीं उसके पुत्र हुआ जिसका नाम गोहा पडा। इस गोहा के वशज होने के कारण ही ये लोग गोहिल कहलाए और इस प्रकार इनका निकास वलभी के राजवश से ही है। इसका सब से प्राचीन वृत्तान्त इनकी राजधानी मागरोल के एक शिलालेख में मिलता है जिसमें सहार के पुत्र और सोमराज के पिता साहाजी गोहिल का हाल लिखा है। यह साहाजी सवत् १२०२ वि० (११४६ ई०) में हुआ था।

बताते हैं, परन्तु जो वृत्तान्त हमें प्राप्त हुए हैं उनके आधार पर ये चन्द्रवंशी और विक्रमादित्य को छीननेवाले शालिवाहन के वंशज प्रमाणित होते हैं। इनका आदि निवास मारवाड़ में लूनी नदी के किनारे पर बालोतरा से पश्चिम की तरफ दस मील की दूरी पर खूना खेड़गढ़ में था। इन्होंने इस गढ़ को वहाँ के मूल निवासी भेरो भील से छीन लिया था और बीस पीढ़ी तक इस पर अपना अधिकार रखा बाद में राठोड़ों ने इनको वहाँ से निकाल दिया था।[१] बहुत समय तक मरुप्रदेश पर अधिकार रहने के कारण इनको मरु पद प्राप्त हुआ और अब भी इनके सरदार मरु ही कहलाते हैं।

जिस समय गोहिल राजपूत मारवाड़ छोड़ कर निकले थे उस समय उनका मुखिया आंजरसी का पुत्र सेजक था। उसका मारवाड़ छोड़ कर आने का कारण यह बताते हैं कि शियाजी द्वितीय के पुत्र आस्थानजी की सरदारी में कुछ राठोड़ों ने इनमें और इनके पड़ोसी डाभियों में झगड़ा करवा दिया था। यह स्मरणीय है कि उस समय राठोड़ मारवाड़ में पहले पहल अपना दखल जमा रहे थे। भाट का कहना है कि डाभियों ने गोहिलों के साथ दगा किया और कपट से सेजक को मारने का षड्यन्त्र रचा। उन्होंने मरु को दावत में आने के लिए निमन्त्रण देकर वहीं मार डालने का जाल रचा परन्तु सेजक की रानी डाभी की पुत्री बड़ी चतुर थी। उसने अपने सम्बन्धियों की चाल को भांप लिया और वह तुरन्त रथ में बैठ कर अपने घर चली गई। वहाँ पहुँच कर उसने पूरा कच्चा चिट्ठा अपने पति को सुना दिया। जब सेजक मरु रवाना हुआ तो उसने अपने सभी प्रमुख योद्धाओं को बुलाया और उनको डाभियों के मनसूबे की बात कह सुनाई। वे भी शस्त्रास्त्र से सुसज्जित होकर उसके साथ हो लिए। डाभी सेजक को मारने के लिए इकट्ठे हुए थे। वह भी उनका मुकाबला करने के लिए आ पहुँचा। कैसे आश्चर्य की बात है कि

१ कन्नौज के जयचन्द के पुत्र सेतरामजी हुए उनके पुत्र शियाजी राठौड़ ने मोहोदास को मारकर खूना खेड़गढ़ लिया था। मोहोदास के पुत्र का नाम डाबरसी था।

जिस सेजक को भोजन के लिए निमन्त्रित किया था उसी के साथ लड़ाई होने लगी। जिस भवन मे जीमन के थाल सजाए गए थे उसी मे तलवारें चलने लगीं, वे लोग एक दूसरे को कत्ल करने लगे, योद्धाओं के शरीर पर घाव इस तरह खुलने लगे मानो किसी विशाल भवन की खिड़किया खुल रही हों। जांजरसी के पुत्र ने अपनी चमचमाती तलधार मान के कलेजे में भौंक दी। डाभियों के साथ युद्ध करके गोहिल इस प्रकार प्रसन्न होता हुआ अपने घर खेरगढ लौटा मानो शिकार खेल कर ही लौटा हो। मान का उसने यमलोक भेज दिया था।"

जिन राठोडों ने इन दोनों दलों में शत्रुता पैदा करा दी थी, अब उन्होने यह सोचकर कि इस झगडे मे दोनों ही पक्ष कमजोर हो गए हैं, आगे कदम बढाया और लूट का माल अपने कब्जे मे कर लिया तथा लडने वाली जातियों को मरुदेश से निकाल बाहर किया। इसी से यह कहावत चली—

'डाभी वाया, गोहिल जीवणा' [1]

सेजकजी ने अपनी जाति के लोगों को इकट्ठा किया और विदेश मे जाकर अपने भाग्य की परीक्षा करने का विचार किया। उनके साथ उनके मन्त्री शाह राजपाल अमीपाल व पुरोहित गगाराम वल्लभदास भी गए। इन पुरोहितों के वशज अब तक साहोर में मौजूद हैं। सेजकजी के इष्टदेव मुरलीधर भगवान् ने स्वप्न में दर्शन देकर आज्ञा दी थी कि मार्ग में

---

१. इस विषय में चारण कहताहै—

(छप्पय)—खेडगढ खें खाट, मरद सेजके मचाड्यो
झटके नाख्या झुण्ड, डाभीया थाट उड़ाडो।
राठोडा सग राड, करी गोहलपत करमी
हग भरिया देसोल, धरा सोरठ पर धरमी।
करमाण भूप कर में उठा, धन्य लीधी सोरठ धरा।
शालीवाण जेम कीधो राका, जगदे जानरसिंहग ॥

महाँ भी मेरा रथ टूट जाय वहीं गढ़ बनवा लेना' इसलिए सेजकजी ने भगवान् मुरलीधर तथा अपनी कुलदेवी के त्रिशूल व क्षेत्रपाल को एक रथ में विराजमान करके संघ के आगे आगे रवाना किया। जब यह संघ पाँचाल देश में पहुँचा तो देवताओं के रथ का पहिया निकल गया और सेजकजी वहीं ठहर गया। यह वही स्थान है जहाँ आजकल सापर नामक गाँव बसा हुआ है। फिर वह शाह राजपाल को साथ लेकर जूनागढ़ के राव को नमस्कार करने गया। राव कवाट[¹] और कुमार खंगार ने उनका बहुत आदर सत्कार किया और उनको अपना देश छोड़ने का कारण पूछा। सेजकजी ने उत्तर दिया "राठौड़ों ने वाणियों को हमारे विरुद्ध भड़का दिया और अब उनको भी देश से निकाल दिया है तथा आस्थानजी ने खेरगढ़ पर भी अधिकार कर लिया है।" राव कवाट ने सेजकजी को अपनी सेवा में रख लिया और सापर तथा दूसरे ग्यारह गाँवों का पट्टा कर दिया। उन्होंने उस भाग की काँटों और भीलों से रक्षा करने का भार भी सेजकजी को ही दिया। उस समय तक कागी लोग पावर देश छोड़कर बाहर नहीं निकले थे और थानलपुर जूनागढ़ के राव और वाघेलों की सरहद पर चोटीला के पास ही बसा हुआ था।

सेजकजी बहुत दिनों तक जूनागढ़ में रहे। उन्हीं दिनों, एक दिन कुमार खंगार जिसकी अवस्था उस समय तेरह वर्ष की थी शिकार का गया। वह घूमता घूमता सापर गाँव के पास पहुँचा और उसका शिकार

(दूहा) रथ भागो समरथ को मेवक क्रम संभाल
पर मेवक पर नाम धरि प्रथम सुराम पंचाल।
दूनी कान कुमार सर बीजे बखी नहि
[illegible] बांधी बार [illegible] मेवार मे करी।
पैठम न [illegible] धनी सरीखो मेव
वागो नीम [illegible] [illegible] [illegible] आउता।
[illegible] पर मेवर [illegible] कोड मनमी [illegible]
[illegible] न [illegible] [illegible] [illegible] भी आउता।

[¹] [illegible] है [illegible] ७० — ११ में हुआ (कर्नल टॉमस)।

एक खरगोश, गोहिलों के डेरे में जा छुपा। खगार ने अपना शिकार मांगा परन्तु सेजक के भाई भतीजों ने उसे लौटाने से इनकार किया और कहा कि कोई भी राजपूत शरण मे आए हुए को नहीं लौटा सकता। झगडा हो गया, कुअर के कुछ साथी मारे गये और वह स्वय भी बन्दी हुआ। उसके साथियों में से एक आदमी किसी तरह बचकर जूनागढ जा पहुँचा और सब हाल कह सुनाया। उसने इतना और बढाकर कह दिया कि कुमार का हाल कुछ मालूम नहीं, ईश्वर जानें वह जीवित है या मार दिया गया। सेजकजी भी उस समय दरबार में ही मौजूद था। वह बहुत उदास हुआ और यह सोचकर कि अब गाव मेरे अधिकार मे न रह सकेंगे, उसने उठकर राजा को मुजरा किया और पट्टा उसकी गोद मे डाल दिया। राव ने इसका कारण पूछा तो उसने उत्तर दिया "मेरे साथियों ने आपके इकलौते कुअर को मार डाला है, अब मैं आपके राज्य में कैसे रह सकता हूँ ?" राव ने पट्टा वापस लौटाते हुए कहा 'कोई चिन्ता की बात नहीं, तुम सुख से रहो।' इसके बाद सेजक तुरन्त ही सापर जा पहुँचा और कुअर को जीवित देखकर उसको नमस्कार किया तथा अपनी पुत्री बालम कुअरबा का उसके साथ विवाह कर दिया। फिर, बहुत सा दान दहेज देकर कुअरजी को जूनागढ पहुँचा दिया। इसके बाद राव की आज्ञा लेकर सेजकजी ने एक नया नगर बसाया, जिसका नाम सेजकपुर पड़ा।

उन्हीं दिनों सेजकजी के दूसरे भाई भी वहीं के दूसरे गावों में बसे हुए थे। इनूजी को बगड, मानसिंह को बोताद के पास टाटम, ईदाजी को सुरका और दीपालजी को पलियाद गाव मिला।[1]

सेजकजी के बाद उनका बड़ा पुत्र राणजी गद्दी पर बैठा और दूसरे

---

१. इनके अलावा सोनजी, विसाजी और वेजजी और थे, इनको खास नामक ग्राम मिला था। आठवा भाई और भी था उसका नाम मालूम नही है। विसाजी के वशज खास ग्राम के रहने वाले होने के कारण खासिया कहलाते हैं। कोई खासिया धुवकिया मेर कोली की लड़की के साथ व्याहा था इसलिए इसके वंशज खासिया कोली कहलाए।

दोनों छोटे कुँवरों को जिनके नाम साहाजी और मारंगजी थे मांडवी और अरथीला गांव मिले। यही दोनों क्रमश गारियाधार और लाठी कुलों के पूर्व-पुरुष हुए।

उन्हीं दिनों वलाकुल का एमल अथवा अभय नामक ठाकुर था। उसके अधिकार में वालाक देश था और पास ही वलभीपुर के खण्डहरों में स्थित वला नामक नगर उसकी राजधानी था। इसके अतिरिक्त तलाजा नगर भी उसी के अधिकार में था। यह नगर समुद्र से अधिक दूर नहीं है और शत्रुञ्ज नदी के किनारे पर स्थित है। यह नदी जैनों के पवित्र पर्वत से निकलकर सुन्दर और शकु के आकारवाली पहाड़ियों की तलहटी में होकर बहती है। इन पहाड़ियों को टीकाकारों के अनुयायी सोरठ की रीढ़ की हड्डी' कहते हैं और गिरनार तथा शत्रुञ्जय ये दोनों इसके सुप्रसिद्ध शिखर हैं।

इन पहाड़ियों में गुफाएं बहुत हैं जो अधिकतर उत्तर और पश्चिम की ओर हैं और तलहटी तथा शिखरों के बीच बीच में आ गई हैं। एक सबसे अधिक चमत्कारिक गुफा समकोण आकार की है जो बहुत विशाल है। इसका बाहरी मुखभाग पहले चार खम्भों के आधार पर स्थित था। अब ये नष्ट किये गये हैं। खम्भों के ऊपर का भाग चौकोर पत्थरों चार चार चार महराब वाली कमानों से सुसज्जित है। प्राचीन बौद्ध कारीगरों ने सुन्दरता की दृष्टि से इसका बहुत पसन्द किया प्रतीत होता है। सम्भव है इसकी बनावट की मजबूती की ओर उनका इतना ध्यान न गया हो। जिस समय शिलादित्य वलभी में राज्य करता था उस समय उसके राज्य में रहने वाले यात्रियों का सम्बन्ध इन गुफाओं से था इस बात का अन्दाज़ा नहीं लगाया जा सकता यह दन्तकथा कैसे प्रच लित हो गई कि एभल वाला ने इस (गुफा) को बनवाया था। इसके पास

[illegible] के [illegible] देवालयों के विषय में मि[illegible] फर्ग्युसन [illegible] Illustration of the Rock cut Temples of India नामक [illegible]

ही एक दूसरी बड़ी गुफा है जो देवी खोडियार की गुफा कहलाती है, जिसके विषय मे आगे लिखा जावेगा। इनके अतिरिक्त और भी ऐसी छोटी छोटी कितनी ही गुफाए है जिनमे से कुछ मे तो रमते साधु रहते है और कुछ की बनावट कुड अथवा टाके जैसी है जिनमे वर्षा का स्वच्छ जल इकट्ठा कर लिया जाता है। पानी की आव के लिए इनके चारों ओर से पहाड मे नाले काट दिये गये है। इसी पहाडी के शिखर पर एक जैन मन्दिर है जो १३८१ ई० मे बना था और इसके पश्चिम मे एक सपाट स्कध है जिस पर एक दूसरा देवालय बना हुआ है। यह देवालय आधुनिक समय मे ही बना है। इन दोनो ही देवालयों में पहुँचने के लिए चट्टानों को खोद खोदकर बडी कारीगरी से सीढिया बनाई गई है। उत्तर और पूर्व की ओर तलाजा की पहाडिया वनशोभा से सुशोभित है। इनकी सरसता और रगबिरगे फूलों एव पत्तों की विचित्रता के कारण सुदृढ चट्टानों पर विराजमान शुभ्र देवालयों की शोभा और भी अधिक हो जाती है। यह देवालय सुनील आकाश के समक्ष विशुभ्र निर्मल चन्द्रमा की तरह सुशोभित है। इन्हीं पहाडियों की तलहटी मे एक नगर बसा हुआ है जो चारों ओर से सुदृढ बुर्जों वाले कोट से घिरा हुआ है। इसी कोट की उत्तरी बुर्जों के नीचे होकर एक स्वच्छ नदी बहती है जिसका नाम इन पहाडियों के नाम पर ही (तलाजा) पडा है। यह नदी थोडी नीचे उतर कर पालीताना से आने वाली नदी मे मिल जाती है। पूर्व की ओर पास ही मे तालव दैत्य का छोटा सा मन्दिर है जिसमें सध्या समय नित्य दिया जलाया जाता है। इस दैत्य के नाम पर ही इस पहाडी का नाम सस्कृत मे तालध्वजगिरि पडा है। ऐसी दन्तकथा प्रचलित है कि तालव दैत्य मे और एभल राजा मे शत्रुता थी। एभल ने दैत्य को पराजित किया। यद्यपि इस यशस्वी और विजयी राजा की स्मृति तो अब क्षीण हो गई है और थोडे दिनों मे लोग उसे बिलकुल भूल जावेंगे परन्तु तालव दैत्य तो अब भी अपने चट्टानों के सिंहासन पर बैठा हुआ राज्य कर रहा है। उसके मन्दिर मे अखण्ड-दीपक जलता रहता है—पर्वत शिखरों को आहत करने वाले घोर से घोर वर्षा के तूफान मे भी उसकी ज्योति मन्द नहीं पड़ती और जब टूटी हुई चट्टानों

के पत्थर लुढ़क लुढ़क कर नीचे आते हैं तो तलाजा नगर के निवासी यह बातें कहने लगते हैं कि हमने ताला देव की मनौती नहीं की इसलिए वह हमसे क्रुद्ध होकर बदला ले रहा है ।

एमल[1] वाला (द्वितीय) के समय में एक जन बनिये ने इतना अनाज इकट्ठा कर लिया कि उसके दाम बैठना कठिन हो गया । उसने टोना टोटका करने में कुशल अपने गुरु के पास जाकर प्रार्थना की । गुरुजी ने एक पत्र पर मन्त्र लिखकर एक काले हरिण के सींग में बांध दिया और उसको जंगल में छोड़ दिया । इसके बाद मेह बरसना बिलकुल बन्द हो गया और सात वर्ष तक घोर अकाल पड़ा । सब जानवर मर गए, मनुष्य घर छोड़-छोड़ कर मालवा चले गए और देश उजाड़ हो गया । इधर बनिये ने इस समय में सब अनाज बेच लिया । एमल वाला के भी बहुत से घोड़े मर गए और केवल पांच ही घोड़े बच रहे इससे उसको बहुत खेद हुआ । एक दिन उसके दरबार में आकर एक लकड़हारे ने कहा 'मैंने जंगल में एक ऐसा कृष्णमृग देखा है कि जहां-जहां वह जाता है वहां-वहां जमीन हरी हो जाती है ।' तब एमल ने कहा कि अवश्य ही किसी ने इस हरिण के साथ मेह को बांध दिया है । फिर राजा अपने साथियों सहित जंगल में गया और हरिण को पकड़ कर उसके सींग में से पत्र खोल कर पढ़ा । उसमें लिखा था 'जब कोई इस पत्र को खोल कर पानी में डुबो देगा तो वर्षा होगी ।' पत्र को पानी में भिगाते ही मूसलधार पानी पड़ने लगा । एमल के कुछ साथियों का तो इस तूफान में पता ही न चला और वह स्वयं भी एक कबाण (स्वर्गीय घोड़े) पर चढ़ कर भागने लगा परन्तु रास्ता दिखाई नहीं दिया इसलिए उसने दूर पर टिमटिमाते हुए एक दीपक की ओर अपने घोड़े को छोड़ दिया । अन्त में वह एक

[1] एमल नाम के तीन राजा हुए हैं । इन तीनों की अलग अलग कथाएं हैं जिनको अभी तक ही एमल के वर्णन में मिला देते हैं । पहले एमल का [illegible] जिसका [illegible] दूसरा एमल था । यह बात भी यहाँ लिखी गई है [illegible] एमल के विषय में है

चारणो की ढानी (नेस) मे जाकर पहुँचा। उस ढानी के सभी पुरुष तो मालवा चले गए थे और स्त्रिया वहीं पर थीं। उनमे से साई नेसड़ी नामक स्त्री ने एभल को घोडे से नीचे उतारा परन्तु वह थकान और सरदी के कारण अचेत था। साईने उसका आलिंगन किया तथा उसको आग से सेक (तपा) कर होश मे लाई। जब राजा होश मे आया तो उसने साई से पूछा "तू कौन है?" साईने उत्तर दिया, "मैं एक चारण की स्त्री हूँ।" राजा ने कहा, "तूने एभल वाला के प्राण बचाए हैं इसलिए काचली मे[1] जो इच्छा हो वही मांगले।" साई ने कहा, "अवसर आने पर माग लूगी।" इस के बाद एभल अपने तलाजा लौट गया।

अकाल समाप्त होने पर चारण अपने घर आया। जब उसे यह बात मालूम हुई कि उसकी स्त्री ने किसी अनजान मनुष्य को तीन दिन तक अपने घर मे रखा था तो उसके बदन में आग आग लग गई और वह अपनी स्त्री के अपवाद लगाकर उसको धमकाने लगा। साई हाथ जोड़ कर सूर्यनारायण भगवान् के सामने खडी हो गई और कहने लगी, "हे सूर्यदेव! यदि मैं अपराधिनी हूँ तो मेरे शरीर मे कोढ़ निकले, नहीं तो इस चारण के कोढ़ निकल आवे।" उसका पति कोढी हो गया और इस प्रकार साई ने अपनी पवित्रता का प्रमाण दिया। इसके बाद उसने अपने पति की पूर्ण सेवा की और उसको लेकर तलाजा में एभल के दरवाजे पर आई। द्वारपाल से कहा, "एभल राजा से जाकर कहो कि साई नेसडी काचली मागने आई है।" उस समय एभल अपने पुत्र आनो के साथ भोजन करने बैठा था। साई के आने का सवाद सुनकर तुरन्त उठ बैठा और दरवाजे पर आकर उसको नमस्कार किया, फिर उससे पूछा, 'बहिन क्या चाहिए?' साईने उत्तर दिया, "मेरा पति

---

१ गुजरात में भाई द्वारा बहन को दी हुई दक्षिणा को भाईपसली और काठियावाड में वीरपसली कहते हैं। ऐसी दक्षिणा में अधिकतर रुमखो (काचली) देने रिवाज है। राजस्थानी में भी वीर या बीर शब्द भाई के अर्थ में प्रयुक्त होता है। इस प्रकार की दक्षिणा को 'कांचली' भी कहते हैं।

कोढ़ी हो गया है, परन्तु यदि वह किसी बत्तीस लक्षणों वाले[1] पुरुष के रक्त से स्नान करे तो ठीक हो सकता है। राजा ने पूछा 'ऐसा पुरुष कहाँ मिल सकता है?' भाट ने कहा 'तुम्हारा पुत्र जानो ही बत्तीसों लक्षणों से युक्त है।' यह सुनकर राजा दुखी होकर अन्तःपुर में चला आया। रानी ने पूछा 'कौन आया है और आप इतने उदास क्यों हैं?' राजा ने कहा एक भाट की स्त्री आई है मैंने उसे वचन दिया था और वह उसकी पूर्ति में जानो के प्राण माँगती है। यह सुनकर जानो ने तुरन्त उत्तर दिया 'वह ठीक कहती है, हमारा नाम सदा के लिए अमर हो जावेगा।' रानी ने भी अपनी अनुमति दे दी और कहा कि संसार को विदित हो जायेगा कि ऐसे रत्न ऐसी ही सुलक्षणा माता की कोख से पैदा होते हैं। अन्त में एभल ने अपना वचन पूरा करने का निश्चय किया और जानो का वध करके उसके खून से भाट को स्नान करा दिया। स्नान करते ही भाट के कोढ़ दूर हो गए। बाद में योगमाया के प्रभाव से माई ने जानो को पुनर्जीवित भी कर दिया। जानो व उसके पिता का यश अब तक भी गाया जाता है —

सोरठ। करो विचार च[1] पाला मैं किया[2] भलो,
सिरनों सौंपणहार ए वाढणहार[3] बखाणिए।

एभल के समय में ही चला ग्राम में चारण जाति का मामड़िया नामक चारण रहता था। उसके सात पुत्रियाँ थीं जिनको लोग शक्ति

---

१ सामुद्रिकशास्त्र के अनुसार शुभ पुरुष के ३२ लक्षण निम्नलिखित हैं —
(१) पंच (बाहु नेत्र ठोडी नासा स्तन) दीर्घ
(२) पंच (त्वचा केश अंगुलियां दन्त नख) सूक्ष्म
(३) सप्त (करतल पादतल नेत्रान्त तालु जिह्वा अधरोष्ठ नख) रक्त
(४) षट् (वक्षस्थल कुक्षि ललाट स्कन्ध कर मुख) उन्नत
(५) त्रि (ललाट कटि वक्ष) पृथु (विस्तीर्ण)
(६) त्रि (ग्रीवा जंघा मेहन) लघु ७ त्रि (स्वर सात्विकता नाभि) गंभीर

(१ [illegible] [illegible] (२) काटने वाला

के सातों रूप[1] समझते थे। लोगों का विचार था कि वे जीवित भैंसों और बछड़ों का रक्त पी जाती थीं। एभल वाला ने उनके पिता को बुलाकर उनको देश से बाहर निकाल देने की आज्ञा दी। मामडिया ने अपनी लडकियों को बुलाकर कहा, "तुम शक्तिया हो, तुमसे कोई भी विवाह न करेगा और राजा ने तुम्हे अभी देश से बाहर निकाल देने की आज्ञा दी है।" सातों बहिनो ने इस आज्ञा को शिरोधार्य किया और चलने के लिए तैयार हुई। चलते समय उन्होंने आपस मे यह निश्चय किया कि जिस गाव मे जिस शक्ति का मन्दिर आ जावे वह वहीं रह जावे और बाकी आगे चली जावेगी। उनमे सबसे बडी बहन का नाम खोडियार था क्योंकि वह लगडी थी। छ बहनें तो आगे आगे चलती थीं और वह सबके पीछे लगडाती हुई चलती थी, परन्तु उसका नाम इतना प्रतापशाली था कि वे जहा जहा गई वहा वहा उन्हें खोडियार देवी का ही मन्दिर मिला।

गुजरात मे अब भी खोडियार माता के बहुत से मन्दिर हैं, लोग वहा जाकर प्रण करते हैं और भैंसों एव बछडों का बलिदान करते हैं। उसके बहुत से भूवा (भक्त) हैं जिनमे गोहिल राजपूत बहुत अधिक और प्रधान हैं। खोडियार माता की बहन आवड़ देवी का मन्दिर काठियावाड मे मामची नामक गाव में है। दूसरी बहनें भी इसी प्रकार पूजी जाती हैं।

वला मे पहले वालम ब्राह्मणों के एक हजार घर थे। ये लोग वैजनाथ महादेव के मन्दिर के अधिकारी और कायस्थों के गुरु थे। जब किसी कायस्थ की लडकी का विवाह होता तो ये ब्राह्मण एक सौ रुपये दक्षिणा के लेते थे इसलिए बहुत सी लडकिया तीस तीस वर्ष की अवस्था तक कुआरी रह-जाती थीं क्योंकि उनके माता-पिता के-पास इतना धन न होता था कि वे ब्राह्मणों को भी सन्तुष्ट करें और विवाह

(१) शक्ति-स्वरूपा सप्त-माताओं के नाम ये हैं—ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, इन्द्राणी और चामुण्डा (अमरकोष)

का व्यय भी सहन करें। अन्त में सब कायस्थों ने मिलकर विवाह लग्न कराना ही बन्द कर दिया और सोचा कि ब्राह्मण अब अपने आप ही सीधे हो जावेंगे । परन्तु ब्राह्मणों ने त्रागा (धरना) करने और अपने शरीर पर प्रहार करके कायस्थों के सिर हत्या मंडने की धमकी देकर इसका उत्तर दिया। अब कायस्थ राजा के पैरों पड़े । एमल वाला ने सुन रखा था कि कन्यादान देने से अश्वमेध यज्ञ के समान फल मिलता है इसलिए उसने ज्योतिषियों को बुलाकर शुभ मुहूर्त निकल-वाया और सब लड़कियों के विवाह का खर्चा स्वयं ने भेलने का निश्चय किया। अब ब्राह्मणों ने कहा कि हम तो अपनी दक्षिणा अगाऊ (पहले) लेंगे तब विवाह करावेंगे । एमल (तृतीय) ने सोचा कि यहां पर ब्राह्मणों का जोर अधिक है इसलिए उसने सब कन्याओं को तलाजा बुलवा लिया और दूसरी जाति के ब्राह्मणों ने उनका विवाह करा दिया[1]। इस प्रकार अपना काम पूरा करने के बाद कायस्थ लोग वापस वला में आकर रहने लगे परन्तु ब्राह्मण गुरु उनको फिर तंग करने लगे और अपनी दक्षिणा इस तरह मांगने लगे मानों उन लोगों ने ही विवाह कराया हो। धरना और अन्य प्रकार के बलात्कार कायस्थों पर होने लगे। राजा ने एक सभा बुलाकर झगड़ा निपटाना चाहा परन्तु ब्राह्मण लोग सभा से बाहर हो गये और राजा को भी दुर्वचन कहने लगे। इस पर राजा को बड़ा क्रोध आया। वह स्वयं तो अलग खड़ा रहा और कायस्थों के सिखाये हुए कुछ भीलों ने उन पर आक्रमण कर दिया तथा बहुत से ब्राह्मणों को मार डाला। बचे हुए ब्राह्मणों ने शपथ ली कि उनके कुल में से कोई भी कायस्थों का कुलगुरु का काम नहीं करेगा और न कोई उस गांव में ही जाकर बसेगा। यह शपथ लेकर वे लोग अपने

---

१ दोहा—अयणकल बीजे एमलो साकर संकट सोड।

विवा तलाजा हूँगरे कन्यादान करोड़ ॥

कुटुम्ब सहित बाहर निकल गए। गुजरात की ओर चलते चलते ये लोग धधुका जा पहुँचे जहा धनमेर कोली राज्य करता था। उसके कोई पुत्र नहीं था इसलिए उसने अपनी समस्त पृथ्वी और धन कृष्णार्पण करके ब्राह्मणों को सौंप दिया। चार सौ ब्राह्मण तो यहीं बस गए और बाकी के जिन लोगों ने दान लेना अस्वीकृत कर दिया था वे गुजरात मे आगे चले गए और वासो, सोजित्रा आदि दूसरे गावों मे जा बसे। जो लोग धधुका मे बस गए थे उनको राजा ने वहा के क्षत्रियों और वैश्यों का गुरुपद प्रदान किया। यद्यपि मोढ वैश्यों के यहां मोढ ब्राह्मण ही दूसरे स्थानों से धर्मकार्य कराने के लिए आया करते थे परन्तु राजाज्ञा द्वारा वे बन्द कर दिए गए और आज तक धधुका मे सब जातियों की पुरोहिताई वालम ब्राह्मण ही करते हैं।

उन्हीं दिनों राणजी गोहिल ने गोमा और भादर नदी के सगम पर धधुका के पास ही राणपुर नामक नगर बसाया। उसने शक्तिशाली मेरों से मित्रता की और उसको दृढ़ रखने के लिए धनमेर की कन्या के साथ विवाह कर लिया जिससे उसके एक पुत्र उत्पन्न हुआ। इस पुत्र को खस नामक गाव जागीर में मिला। इसीके आधार पर आज तक उसके वशज खसिया कोली कहलाते हैं।[1]

एभल (तृतीय) वाला ने ब्राह्मणों को दु ख दिया है, यह बहाना बना कर वैर लेने के लिए राणजी गोहिल और धनमेर ने उस पर चढाई कर दी। गोहिल के पास दो हजार राजपूत थे और धनमेर के नायकत्व मे पाच हजार मेर। कुछ लोगों का कहना है कि जिस समय एभल अपना प्रात कालीन नित्यकर्म कर रहा था उसी समय इन लोगों ने उस पर आक्रमण किया। वह पूजा से नहीं उठा और मार दिया गया। दूसरे लोग यह कहते हैं कि सायंकाल के समय रणक्षेत्र में ही उसका

(१) सेजकजी गोहिल के भाई वीसाजी ने धु धुकिया मेर कोली की पुत्री के साथ विवाह किया था और उसीके वशज खसिया कोली कहलाए, ऐसी भी कथा प्रचलित है, जो सत्य प्रतीत होती है। देखिए टिप्पणी पृष्ठ ४१।

निधन हुआ था। जब वह युद्ध क्षेत्र में गया था तब भगवान् सूर्यनारायण से यह प्रार्थना करके गया था कि, हे भगवन्! जब तक मैं युद्ध से विजयी हो कर न लौटूं तब तक आप अस्त मत होना। परन्तु सूर्य भगवान् अस्त हो गए और वह मारा गया। इस कथा के आधार पर ही कहते हैं कि, वलभी के खण्डहरों में स्थित उसकी मूर्ति का मुख अब भी प्रातःकाल में जब सूर्य उगता है तो पश्चिम की ओर रहता है और धीरे धीरे सायंकाल में सूर्यास्त के समय पूर्व की ओर आ जाता है। इस प्रकार वह अपने इष्टदेव के प्रति आक्रोश प्रकट करता है।

सोलियार के पिता मामडिया ने एमल के कार्यों का वर्णन इस प्रकार किया है —

झूलना छंद

"प्रथम मेह खासियों[1] कोहड़[2] टाल्यो पछे वालो सवधाविपो मेन्न धारी तम्मत भूपां सिरे शिरोमणि तसाउ, गादियाँ शिरोमणि घले गादी कोल परघानतस वीह[3] पछे कन्या, भयंकर भांमतस् शर सभो शाप स्तारस नेसडी साईरो[4] भयारो[5] भास्वत शीश पमो : पोतरो सुरर[6] सुरजेरो पिता[7] मोम मेहराण हिंवराण भाज वसारो उमसण जनसण वसावण[8] रांकरो मासमो[9] धर्मरान्न।

वालक देश को धनमेर और रणजी गोहिल दोनों ने मिलकर लीता था परन्तु धनमेर ने अपना भाग भी अपने जमाई को दे दिया। रणजी ने अपनी गद्दी वला में स्थापित की और मृत्युपर्यन्त वहीं पर राज्य किया।

---

(१) वापस लाया (२) अकाल (दुर्भिक्ष) का भय और कोढ मिटाया (३) विन (४) नेमडी नाम के चारणी पति की कथा ऊपर आ चुकी है (५) एमल के पुत्र भगा के अविवाहित की कथा भी आ चुकी है। (६) सूर्य का पुत्र (७) सूराजी का पिता (८) कम हुए शहर उजाड़न वाला और उसके दोषों को मिटाने वाला। (९) अ-गरीब के लिए मामला और धमराज। गरीब लोग राजस्थान और गुजरात में अमाने के लिए मामला कहा करते थे।

राणजी[1] के बाद मे उनका पुत्र मोखडा जी गद्दी पर बैठा। इस वंश मे यही सबसे अधिक पराक्रमी राजा हुआ। सबसे पहले 'पीरम के राजा' की पदवी प्राप्त करने वाला परम यशस्वी राजा यही था। खम्भात के अखात और पालीताना के बीच मे अखात की जलरेखा के समानान्तर फैली हुई खोखरा की दुर्गम पर्वत श्रेणी पर अधिकार प्राप्त करके मोखड़ाजी ने अपने प्रथम पराक्रम का परिचय दिया। वहीं उसने सभी ओर आक्रमण किए और आस-पास के देशों मे अपनी धाक जमा दी। "हे मोखड़ा! जब खोखरा की पहाड़ियों मे आप सिंह के समान गर्जन करते हो तब विंध्याचल के निवासी अपना भोजन छोड कर भाग खडे होते हैं।"[2] उसने भीमडाद, माडलगढ और मीतियालु पर अपना कब्जा कर लिया था परन्तु उसकी सबसे बड़ी विजय तो गोगो और पीरम पर अधिकार प्राप्त करने मे थी।

गोगो आजकल अच्छी जनसंख्या वाला स्वच्छ नगर व बन्दरगाह है। यहा आठ हजार से भी अधिक मनुष्य बसते हैं और खम्भात के अखात में यह एक अच्छा जहाजी अड्डा है। यहा के निवासी गोधारी कहलाते हैं। इनमें से कुछ लोग तो मुसलमान हैं और कुछ कोली अथवा हिंदू हैं। अणहिलपुर के राजाओं ने जिन लोगों को आश्रय देकर यह नगर बसाने के लिए पृथक् रूप से भूमि दी थी, ये उन्हीं के वंशज हैं। ये लोग अब तक अपनी पुरानी प्रतिष्ठा को पालते है और बृटिशराज्य के झण्डे के नीचे जितने हिन्दुस्तानी मल्लाह काम करते हैं उनमें सबसे

---

(१) लगभग १३०९ ई० में अलाउद्दीन के लश्कर ने राणपुर लिया था और तभी यह मारा गया था।

(२) "तज खोखरा तणे गाजे, केसर गुंजियो,
विन्ध्याचल वाजे मूक्यो, चारो हे मोखडा!

उक्त सोरठा सुन कर ही फार्बस् साहब ने यह सोचा होगा कि मोखडा सिंह के समान बलवान था इसलिए विन्ध्याचलवासी उससे काँपते थे, परन्तु मूल बात इस प्रकार है कि पीरम द्वीप में एक सादूल नामक सिंह रहता था उसका शिर काट कर इन्होंने पीरम के दरवाजे पर लटकाया था।

अधिक विश्वास योग्य बने हुए हैं। गोगो में आजकल बहुत से फेरफार हो गए हैं और मोखड़ा गोहिल के समय की बहुत थोड़ी निशानियाँ बची हैं। शहर के नैऋत्य कोण में नये कोट के आस-पास ही पुराने किले की निशानियाँ देखने में आती हैं। जो बुर्जे गिरकर ढेर हो गई हैं उनका अनुमान अब भी लगाया जा सकता है परन्तु जहाँ जहाँ पीपल के वृक्षों ने अपनी जटाएं खूब फैला ली हैं वहाँ कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता। शहर की स्थिति को देखने से प्रतीत होता है कि यह नगर खूब सोच समझ कर इस सुरक्षित स्थान पर बसाया गया था क्योंकि यह आस-पास के प्रदेश की अपेक्षा अधिक ऊंचाई पर स्थित है, जहाँ से एक ओर तो पीरम द्वीप और खम्भात की खाड़ी अच्छी तरह सामने दिखाई पड़ती है और दूसरी ओर खोखरा की पहाड़ियाँ तथा आस-पास का सारा प्रदेश दृष्टि के सामने आ जाता है। यहाँ पर पीने के लिए स्वच्छ पानी की भी कमी नहीं है।

पीरम द्वीप और गोहिलवाड़ा के बीच में एक तीन मील चौड़ी खाड़ी है जो बीच में लगभग साठ फैदम[1] गहरी है। वल्लभी नदी इस खाड़ी में मिल कर ही समुद्र में मिलती है। ऐसी कथा प्रचलित है कि पहले पीरमद्वीप पृथ्वी से मिला हुआ था। इस बात के बनने का कारण यह हो सकता है कि जब समुद्र में ज्वार आता है तो बहुत सी टेढ़ी-मेढ़ी चट्टानों पर से पानी हट जाने के कारण वे दिखाई पड़ने लगती हैं और ऐसी चट्टानें गोगो बन्दर की ओर अधिक हैं। खम्भात की खाड़ी के किनारे पर जो समय समय पर फेर-फार हुए हैं उनका मूल कारण बताने में इतिहास और प्रकृति विज्ञान शास्त्र दोनों ही अभी तक सफल नहीं हो सके हैं और पीरम के उत्कर्ष तथा वल्लभी के नाश के विषय में जो घनिष्ट सम्बन्ध बताया जाता है वह एक रहस्य मात्र बना हुआ है। पीरम द्वीप प्रायः सर्वत्र ही रतीले टीलों की श्रेणियों से बना हुआ है; इन टीलों के नीचे थोड़ी-थोड़ी काली मिट्टी का भाग भी पाया जाता है। पश्चिम की ओर ये टीले इस द्वीप को समुद्री आघातों से बचाने में

[1] १ फैदम=१ गज

कोट का काम करते हैं परन्तु खुले मौसम में हवा के झोकों से इनकी मिट्टी (रेत) बराबर उड़ती रहती है और ये बराबर बढ़ते रहते हैं। पूर्व की ओर रेत बिलकुल नहीं है और इसके आगे ऐसी जमीन है जहां थोड़ी बहुत खेती हो सकती है जिस से यहाँ के रहने वाले लोगों का कुछ समय तक भोजन चल सकता है। रेतीले टीलों पर फैली हुई मोरण (एक प्रकार की झाड़ी), नीम के पेड़, जिनकी फैली हुई शाखों पर यहाँ के लोग चारा इकट्ठा करते हैं, इनके अतिरिक्त कुछ कँटीली झाड़ियाँ और पूर्वीय किनारे पर फैली हुई तमरिया (mangroves) की झाड़ियाँ ही पीरम की मात्र वनस्पति है। दक्षिण-पश्चिम से उठे हुए बादल यहाँ पर खूब जल बरसाते हैं और इस कारण उठी हुई भीषण बाढ़ का प्रभाव पीरम की खाड़ी पर जितना होता है उतना शायद ही और कहीं होता हो। पहले प्रबल बाढ का वेग तो बहुत ही दुर्निवार होता है। उस समय का दृश्य केवल देखा ही जा सकता है उसका वर्णन करना बहुत कठिन है। तीन अथवा चार फीट की लम्बाकार (सीधी) ऊ चाई वाली एक पानी की दीवार, जो खाडी के आरपार जहाँ तक दृष्टि जा सके वहाँ तक फैली हुई होती है, एक घण्टे में लगभग बारह मील की गति से आगे बढती हुई दिखाई देती है, इसके घोर रव (शब्द) का सुनकर भी जो जहाज नहीं चेतता है उसके नष्ट भ्रष्ट अ ग ही अपने अनजानपन अथवा दुराग्रह का फल भोगते हुए इसमें बहते चले आते हैं।[१] गोगो और पीरम के बीच मे चलने वाली नावें, इस तरग समूह का शिकार होने से बचने के लिए, इस प्रकार सीधी चलने लगती हैं मानों उन्हें नर्मदा के मुख में देहेबाड़ा को ही जाना हो। समुद्र के उछ-लते हुए तरगसमूह के सपाटे मे आ जाने का भय इनको प्रतिक्षण बना रहता है और कितनी ही बार तो बहुत सी नावें इस तरग जाल में फॅस भी जाती हैं। इसके अतिरिक्त शकु के आकार में उठ नेवाली

(१) देखो फार्बस कृत Oriental Memoirs, vol II, p 221 और Journal of the Bombay Branch of the Royal Asiatic Society के प्रथम खण्ड में On the Island of Perum नामक लेख।

तरंगों के नीचे बहुत सी चट्टानें छुपी रहती हैं उनसे भी इनको बचाने की सावधानी रखनी पड़ती है। मोखड़ाजी गोहिल के पालिया (चबूतरे) के आगे ही एक टेकरी पर सफेद निशान बना हुआ है उसीके नीचे द्वीप के उत्तरी रेतीले किनारे पर नावों के यात्री आकर उतरते हैं। पीरम की गद्दी के खण्डहर अब तक मौजूद हैं जो द्वीप के बीच में आरपार फैले हुए हैं। कुछ टूटी-फूटी बुर्जें और पश्चिम की ओर का दरवाजा अब भी स्पष्ट दिखाई पड़ते हैं। पहले एक दरवाजे पर एक ही पत्थर में खोदे हुए दो हाथी बने हुए थे। ये हाथी यहां के खण्डहरों में सर्वोत्तम दर्शनीय वस्तु हैं। प्राचीन किले के घेरे में ही एक कुआ और एक कुए के अवशेष मौजूद हैं, हिन्दू कारीगरों द्वारा बनाई हुई मूर्तियों के टुकड़े चौक में यत्र तत्र फैले हुए हैं इसी चौक में दस बारह खंभे किर्मों से बनी हुई हैं। किले के नैऋत्य कोण में एक ऊंचासा ढेर लगा हुआ है सम्भवतः यहीं पर मुख्य महल बने हुए होंगे परन्तु अब तो इस पर एक दीपस्तूप [लाइट हाउस] बना हुआ है। इन बातों से अनुमान लगाया जा सकता है कि प्राचीन काल में जहाजी अथवा मल्लाही कामों के लिए पीरम कितने महत्त्व की जगह रहा होगा। एक ओर तो गोहिलवाड़ का किनारा गोगो बन्दर और सघन वृक्षों से घिरे हुए बहुत से गांव तथा खोखरा की पहाड़ियों की ओर ऊंचा चढ़ता हुआ प्रदेश दिखाई देता है दूसरी ओर नर्मदा और टैम्परिया नदी के मुहाने स्पष्ट दृष्टिगत होते हैं। उधर उत्तर व दक्षिण की ओर पीरम के गढ़ पर बैठे हुए चौकीदार के आगे खम्भात का नजारा इस प्रकार आ जाता है कि गुजरात के समृद्ध बन्दरगाहों पर जाने वाले किसी भी जहाज का दिन में सफेद मस्तूल और रात में उसकी रोशनी दृष्टि में आए बिना नहीं रह सकती।

इस स्थान पर अन्त में मोखड़ाजी गोहिल ने अपने कदम जमा लिए। राणा के कुंअर शक्तिशाली राजाधिराज ने अपने रहने के लिए एक नया शहर बसाया और एक पहाड़ी पर किला बनवाया। समुद्र की उत्ताल तरंगें चारों ओर से इसके किनारे को प्रक्षालित करती थी। वहाँ

के कोली शासकों से इस द्वीप को अपने अधिकार में लेकर इसको पीरम नाम से प्रसिद्ध किया। उस समय पीरम और गोगो दोनों ही का स्वामी वारैया (कोली) था। सात सौ मल्लाहों और समस्त कोलियों को मार कर मोखडाजी ने पीरम और गोगो को अपने कब्जे में ले लिया। पूर्व जन्म के तपस्वी ने इन दोनों शहरों को अपने आधीन करके पीरम की गादी को प्रतापवान् बनाया। पीरम से कितने ही देशों को रास्ता जाता था इसलिए उसने वहाँ पर बहुत से जहाज रखे, वह कितने ही जहाजों को लूट लेता था, आस-पास के सभी बन्दरगाहों पर उसकी धाक जम गई थी। उधर से निकलने वाले सभी जहाजों से पीरम का राजा कर वसूल करता था। मोखडाजी अपने बाजूबन्ध में हनुमानजी की मूर्ति बाँधता था और कालिका माता का हाथ उसके शिर पर था।"

पीरम का राजा कर लेता था और जहाजी बेडा रखता था इसलिए अन्त में बादशाही शक्ति ने उसे अपने चगुल में फँसा लिया। हिन्दू वृत्तान्तों में तुगलकशाह को उसका शत्रु लिखा है, परन्तु मुसलमान इतिहासकारों ने पीरम के नाश के विषय में कुछ भी नहीं लिखा इसी-लिए गयासुद्दीन के शाहजादे मुहम्मद को, जिसके विषय में गुजरात सम्बन्धिनी कथा हम पहले लिख चुके हैं, और हिन्दू वृत्तान्त के तुगलक शाह को यदि हम एक ही मान लें तो कोई हानि नहीं होगी।

इसमें सन्देह नहीं कि जिस समय मुहम्मद तुगलक शाह अपने राज्य के इस विभाग की व्यवस्था कर रहा था उसी समय उसने मोखडाजी गोहिल के विरुद्ध शस्त्र उठाया होगा। हिन्दू वृत्तान्तों में तो झगड़े का तात्कालिक कारण यह बताया है कि दिल्ली का एक व्यापारी सोने का चूरा भर कर चौदह जहाज पीरम लाया था। मोखडाजी ने समुद्र के देवता वरुण की साक्षी में उसकी रक्षा करने का वचन दिया था, परन्तु इस वचन को भग करके उसने व्यापारी का सामान लूट लिया।

"गजनी की भारी सेना पीरम और गोगो पर चढ आई, नक्कारे

और रणसिंगे बजने लगे और ऐसा मालूम होने लगा मानों समुद्र ने ही अपनी मर्य्यादा छोड़ दी है। अलग अलग जाति के मुसलमान वहां पर इकट्ठे हुए थे जिनमें से कुछ पैदल थे कुछ घुड़सवार थे और कुछ हाथियों पर चढ़े हुए थे। सागर के स्वामी से लड़ने के लिए उन लोगों ने सागर के किनारे पर ही डेरा डाला। पीरम की गुफा में से अकेले शेर गोहिल ने गर्जन किया। उसे अपने इष्टदेव पर पूर्ण भरोसा था इसलिए वह विचलित नहीं हुआ। सेनाएं तैयार हुई बाण पर बाण चलने लगे पर मोखड़ा के नगर पर कोई असर नहीं हुआ। कितने ही दिनों तक तुगलक शाह अपनी चालाकियां चलाता रहा और लड़ता रहा परन्तु उसकी लाख लाख कोशिशें बेकार हुई। शाह प्रयत्न करते करते थक गया समुद्र के पानी में देखने के लिए उसकी दृष्टि विफल हो गई परन्तु मोखड़ाजी राजाओं की प्रतिष्ठा रखने के लिए हाथ में तलवार लेकर डटा रहा'।

पानी में होकर रास्ता न मिलने के कारण शत्रु मोखड़ा के पास तक पीरम में न पहुँच सके इसलिए दुखी व्यापारी ने उपवास करना शुरू कर दिया और अपने और मोखड़ाजी के बीच व्यवधान बने हुए समुद्र देवता से पानी समेट कर मुसलमानों को रास्ता दे देने लिए प्रार्थना करने लगा।

मुहम्मद शाह ने अपनी सेना पीछे हटा ली और आशा करने लगा कि ऐसा करने से मोखड़ाजी अपने दुर्जय किले से बाहर आ जावेगा। मुसलमान लोग प्रायः ऐसी चालाकियां खेलते आये हैं और भोले राजपूत सरदार उनसे धोखा खाते आये हैं।

गोगा और गुण्डी के बीच में डरे हुए मुसलमान रह रहे थे। एक दिन राजा ने सोचा 'मौत तो एक दिन आयेगी ही इसलिए वह एक वाहन (नाव) पर बैठ कर रात में पीरम से गोगो चला आया और लड़ने के लिए तैयार हुआ। हाथ में तलवार लेकर उसने माथे पर मौत का मकुट बांध लिया। दरवाजा खुलवा कर उत्साही वीर सेना सहित बाहर

निकला और अपने योद्धाओं की हिम्मत बढाने लगा। मोखड़ा मरु ने बादशाह की सेना पर आक्रमण किया और मुसलमानों को कीचड़ मे कुचल दिया। रणभेरी और रणसिंगे बजने लगे, निशान हवा में फहराने लगे और खून की नदिया बह चलीं। जब दोनों सेनाओं की मुठभेड़ हुई तो मोखडा ने बादशाह के भानजे को देखा और उस पर एक ही ऐसा वार किया कि वह हाथी पर से लडखडा कर नीचे आ गिरा। मोखडाजी के आक्रमण से घबरा कर मुसलमान 'अल्लाह,अल्लाह' की पुकार करने लगे। असुर सेना पर उसके बाणों की वर्षा होने लगी और राणजी के पुत्र ने तुगलक शाह के आधे सिपाहियों को तलवार के घाट पार उतार दिया। राजा की तलवार से छिन्न भिन्न शत्रु-सेना बिजली गिरने से टूटे फूटे पर्वत के समान दिखाई पड़ती थी। फिर, मोखड़ा गिर गया, उसका मुण्ड तो कट कर गोगो के दरवाजे मे गिर गया और और रुण्ड हाथ में तलवार लिए हुए शत्रुवर्ग को काटता चला जा रहा था, नीचे पडे हुए मुण्ड से 'मारो मारो' की आवाज निकल रही थी। शत्रु की सेना इकट्ठी होकर भागने लगी, बहुत से यवन मारे गये, स्वयं बादशाह बहुत कठिनाई से बच पाया। जब एक मन्त्रित नीला डोरा लाकर जमीन पर रख गया तब रुण्ड गिर गया और तलवार चलाना बन्द हो गया। इसके बाद दूसरे मुसलमान योद्धा भी लौट आये। पीरम सरदार अपने प्रण को पूर्ण रूप से पूरा करके पृथ्वी पर पडा हुआ था (१३४७)। सेजक का पौत्र देवकोटि मे गिना जाने लगा, उसका श्वास श्वास मे समा गया और बादशाह की मुसलमान सेना भी कह उठी 'हिन्दू धन्य हैं, हिन्दू धन्य हैं।'[1]

---

(१) मोखडाजी ने इतनी शूरवीरता दिखलाई और लड़ाई में अन्त तक डटे रहे इसलिए उनकी याद में यह स्थान ही मोखडा कहलाने लगा है। गोघा में अब भी उनका चबूतरा मौजूद है। भावनगर के दरबार जब कभी वहाँ जाते हैं तो पहले मोखडाजी के चबूतरे का दर्शन करते हैं और फिर दूसरा काम करते हैं। इस चबूतरे के पुजारी को अब तक राज्य की ओर से गुजारा मिलता है।

मुसलमानों ने पीरम के किले को उसके बनाने वाले के मर जाने के बाद नष्ट कर दिया और फिर उसका पुनरुद्धार कभी न हुआ। मोखड़ाजी के नाम के साथ इसका सम्बन्ध आज तक बना हुआ है। अब भी हिन्दू लोग मोखड़ाजी के स्मारक पर कुसुम्बा के प्याले के नाम से अफीम चढ़ाते हैं और प्रसन्न होते हैं तथा पीरम के आगे से निकलने वाले जहाजों के मल्लाह भी मोखड़ाजी के नाम पर कुछ मोम समुद्र डालना शायद ही भूलते हैं।[1]

(१) Indian Gazzetteer 1908 में 'गोगो' और 'पीमर' विषयक लेख देखिए। यह दोनों अहमदाबाद जिले में हैं। रेलवे स्टेशन पर स्थित होने के कारण भावनगर अब बढ़ चला है और गोगो का उतना व्यापारिक महत्त्व नहीं रह गया है। सन् १८९६ में पीरम में बड़े-बड़े जानवरों की हड्डियाँ पाई गई थीं और यह अब भी हड्डियाँ प्राप्त करने के लिए मुख्य स्थान समझा जाता है।

प्रकरण तीसरा

गुजरात के राजपूत सुल्तान[1]

सुल्तान	राज्यकाल	वर्ष	महिने	दिन
(१) मुजफ्फरशाह (प्रथम)	१४०७–१४१०	३		
(२) अहमदशाह	१४१०–१४४२	३२	६	२०
(३) मुहम्मदशाह (प्रथम)	१४४२–१४५१	६	०	०

(१) सहारन नाम का एक टाँक (तक्षक) जातीय राजपूत था। वह जमींदार था। सूर्यवंशी रामचन्द्र जी से कितनी ही पीढी बाद मुहुस हुआ उसीके कुल में क्रम से दुर्लभ, नाक्त, भूक्त, मडन, मुलाहन, शीलासन, त्रिलोक, कुँवर, ढरसप, ढरीमन, कुँअरपाल, ढरीन्द्र, हरपाल, किन्द्रपाल, हरपाल और हरचन्द हुए। हरचन्द का पुत्र सहारन था। वह स्थानेश्वर में रहता था। एक बार फीरोजशाह, जब वह शाहजादा ही था, शिकार को निकला और अपने साथियों से बिछुड कर सहारन के गांव के पास जा निकला। उस समय सहारन, उसका भाई साधु और दूसरे राजपूत बैठे हुए थे। फीरोजशाह के पैर में राजचिन्ह देख कर वे उसे अपने घर ले गए और उसका आगत स्वागत किया। साधु की बहन ने उसे शराब पिलाई और उसकी लहर में फीरोज शाह ने अपना परिचय दिया। इसके बाद साधु की बहन और फीरोज शाह की शादी हो गई।

सहारन और साधु भी फीरोज के साथ दिल्ली चले गए और उन्होंने मुसलमानी धर्म स्वीकार कर लिया। बादशाह ने सहारन को वजीर उल्मुल्क का खिताब दिया। इसके दो लडके हुए, जफर खाँ और समशेर खाँ। इस जफरखाँ को ही मुजफ्फर खाँ का खिताब मिला था। (मीराते सिकन्दरी)

इस लेख से विदित होता है कि मुजफ्फर खाँ तक्षक कुल का राजपूत था इसीलिए इस वंश के सुल्तानों को 'राजपूत सुल्तान' लिखा गया है।

(४) कुतुबुद्दीन	१४५१–१४५९	८	०	०
(५) दाऊद	१४५९–१४५९		१	०
(६) महमूद बेगड़ा (द्वितीय)	१४५९–१५११	५२	०	०
(७) मुजफ्फर (द्वितीय)	१५११–१५२६	१५	०	०
(८) सिकंदर	१५२६–१५२६	०	२	१६
(९) महमूद (तृतीय)	१५२६–१५२६	०	०	०
(१०) बहादुर शाह	१५२६–१५३७	११	०	०
(११) महमूद फारूकी	१५३७–१५३७	०	०	०
(१२) मुहम्मद शाह (चौथा)	१५३७–१५५४	१७	०	०
(१३) अहमद शाह (दूसरा)	१५५४–१५६१	०	०	०
(१४) मुजफ्फर (तृतीय)	१५६१–१५७२	२१	०	०

मुजफ्फर शाह प्रथम (१४०७–१४१०) शाह अहमद प्रथम (१४१०–१४४२)

मुजफ्फर खाँ ने गद्दी पर बैठते ही हिन्दू सरदारों को अपने आधीन करने का कार्य आरम्भ किया और सबसे पहले ईडर पर चढ़ाई की।

राव सोनंगजी के बाद क्रमश: पंजाजी, भाणमलजी, लूणकरणजी और भरतजी हुए। इनके विषय में कोई विशेष वृत्तान्त नहीं मिलता है केवल इतना ही लिखा है कि 'राव भरतजी के समय तक न तो राज्य की कोई बढ़ोतरी हुई और न कमी। भरतजी का पुत्र रणमल्ल खूब प्रसिद्ध हुआ है। ईडरगढ़ पर इसी ने अपनी बैठक बनाई थी जो 'रणमल्ल की चौकी' के नाम से प्रसिद्ध है। इसके साथ ग्यारह सामन्त रहते थे और वे भी रणमल्ल कहलाते थे। इन सरदारों और रणमल्ल सम्बन्धी चरित्र के आधार पर चारणों ने बहुत सी चमत्कारिक कथाओं की रचना की है। 'राव रणमल्ल ने ईडर और मेवाड़ के बीच का

भागुर प्रदेश यादवों से छीन लिया था और उसी की राजधानी झारड-गढ को कितने ही दिनों तक अपना निवास स्थान बनाए रखा । फिर वह वहाँ से पानोरे चला गया और भागुर को उसने एक सोलकी पटा-वत को दे दिया । मुसलमानों ने सोनगरा चोहानों के ठाकुर को निकाल बाहर किया था इसलिए वह जालोर से ईडर चला आया । राव ने उसको रखा और जोरा मीरपुर का पट्टा कर दिया । इस चौहान वश का राय के वश के साथ कुछ दिनों तक बेटी व्यवहार रहा परन्तु बाद में चौहानों ने भील स्त्रियों के साथ सम्बन्ध कर लिया इसलिए वे जाति-च्युत कर दिए गए ।"

फरिस्ता कहता है कि, 'सन् १३६३ ई० मे ईडर के राव ने कर देने से इनकार किया इसलिए जबरदस्ती कर वसूल करने के लिए मुजफ्फर खा ने उस पर चढाई की । कई छोटी छोटी लडाइयाँ और मुठभेडें हुई जिनमे मुजफ्फर विजयी हुआ और अन्त मे उसने ईडर के चारों तरफ घेरा डाल दिया । वह बहुत दिनों तक घेरा डाले पड़ा रहा और कहते हैं कि किलेदार खुराक के लिए इतने परेशान हो गए कि उन्होंने कुत्ते बिल्लियों तक को न छोडा । अन्त, मे राव ने अपने पुत्र को मुजफ्फर खां के पास भेजा । उसने आकर नमस्कार किया और अपने मनुष्यों के प्राण बचाने के लिए प्रार्थना की । बहुत सा सोना, चादी और जवा-हरात देने की शर्त पर मुजफ्फर ने उसकी प्रार्थना स्वीकार की ।"

खानदेश में सुलतानपुर और नन्दुरबार परगने है, इन पर कब्जा करने के लिए आदिल खॉ[1] प्रयत्न कर रहा था इसलिए अब मुजफ्फरखॉ

---

(१) आदिल खाँ जो मलिक राजा कहलाता था, बुरहानपुर के सुल्तान का दादा था । इसने विद्रोह करके थानेर के किले पर कब्जा करना चाहा, यह बात मालूम होते ही मुजफ्फर ने उस पर चढाई कर दी । उसने आदमी भेज कर अगवानी की और सन्धि की सलाह की । सौगन्द शपथ ले कर दोनों मित्र बन गए । मलिक राज खलीफा फारुकी की औलाद था, यह बात मुजफ्फर को पहले ही से मालूम थी ।

इन परगनों पर सिद्धराज के समय से चले आए गुजरात के राजाओं के दावों को स्थापित करने में लगा। अब वह लौट कर राजधानी आया तो उसने सुना कि पश्चिमी पट्टण के परगने में जेहरेन्द (जहरन्द) के राव ने मुसलमानी सत्ता को मानने से इन्कार कर दिया इसलिए उसने तुरन्त ही राव पर चढ़ाई कर दी और उससे कर वसूल करके सोमनाथ की ओर आगे बढ़ा। वहाँ पर उसने एक बार फिर हिन्दू देवालय को तोड़ तोड़ कर उनको मसजिदों में बदल दिया [१] (१३९४ ई०)। इसके बाद वह मांडलगढ़ (चित्तौड़) गया और उस पर अपना कब्जा कर लिया वहाँ से अजमेर की जियारत करता हुआ मंडावाड़ के रास्ते से वहाँ मन्दिरों को तोड़ता फोड़ता हुआ वापस आया। [२]

सन् १३९८ ई० में उसने ईडर के राव रणमल्ल पर फिर चढ़ाई की और पहले की तरह बड़ी भारी रकम लेकर उसका पिंड छोड़ा। इसी समय भारतवर्ष पर तैमूर का भयङ्कर आक्रमण हुआ था इसलिए दिल्ली के दरबार की व्यवस्था डाँवाँडोल हो रही थी बहुत से प्रतिस्पर्द्धी गद्दी प्राप्त करने के लिए आपस में कट मर रहे थे। मुजफ्फरखाँ और उसके पुत्र ने भी राजगद्दी प्राप्त करने के बड़े बड़े मनसूबे बाँधे परन्तु वे सीमा से बाहर नहीं हुए और मुजफ्फर खाँ तो गुजरात का वास्तविक बादशाह था ही इसलिए उसने वहीं का राजपद धारण करके सन्तोष किया। उसने अपने आपको बादशाह घोषित किया और मुजफ्फरशाह

(१) जब तक वह वहाँ रहा तब तक उसने लूटपाट और मारकाट में कोई कसर न छोड़ी। बाद ब्राह्मणों की स्त्रियों लड़कियों और घर के पुरुषों को कैदी बना कर ले गया। कन्दरगाह पर जो जहाज थे उनको लूट ले गया और प्रभास पट्टण में अपना थाना कायम कर गया।

(२) बाप्पा अथवा राव दुर्गा ने घेरे से बहुत बचाव किया। वह मुसलमानों की पकड़ में न आया और वे परथरों की वर्षा करके थक गए। इसके बाद उन्होंने सुरंग [illegible] शहर में आग लगा दी जिससे लोगों का धन बल गया जब इतना [illegible] गया तब बाप्पा झुक गया और सुलह की।

का पद धारण किया, अपने नाम का सिक्का चलाया और खुतबा पढवाया।[1]

सन् १४०१ ई० मे कर वसूल करने के लिए मुजफ्फर शाह ने फिर ईडर पर चढाई की। इस बार राव रणमल्ल राजधानी छोड़कर वीसल-नगर चला गया और शत्रु ने उस पर कब्जा कर लिया। दूसरे ही वर्ष शाह ने दीव नामक नगर के राजा पर सोमनाथ के स्थान पर विजय प्राप्त की। इस लडाई मे भारी मारकाट मची, अन्त मे राजा और उसके बहुत से सिपाहियों पर अचानक हमला करके उनको कत्ल कर दिया।

मुजफ्फर शाह ने मालवा पर आक्रमण करके अपने अन्तिम परा-क्रम का परिचय दिया। उसने धार के पास ही वहाँ के शासक हुशग से मोर्चा लिया और उसको हरा कर कैद कर लिया। इसके बाद तारीख २७ जनवरी सन् १४११ ई० को मुजफ्फर शाह मर गया।[2]

मुजफ्फर शाह के बाद उसका पोता अहमदखान गद्दी पर बैठा, परन्तु फिरोज खाँ नामक उसके चचेरे भाई ने गद्दी पर अपना हक प्रकट किया। उसने भड़ौंच मे अपने आपको बादशाह घोषित किया और आठ दस हजार मनुष्यों की सेना लेकर नर्मदा के किनारे आ

(१) सन् १३९६ ई० में उसने सुल्तान का पद धारण किया। मुजफरशाह के नाम का सिक्का चलाया तथा खुतबा पढवाया। जुम्मा अथवा ईद के दिन जब मुसलमान लोग मसजिद में नमाज पढते हैं तो पहले खुदा की इबादत करते हैं फिर नबी (मुहम्मद) का बखान करते हैं और इनके बाद सीढी से नीचे उतर कर जो सुल्तान होता है उसके नाम की दुआ मागते हैं इसको खुतबा पढना कहते हैं।

(२) हिजरी सन् ८१३ ता० १४ रमजान के महीने में (१४१० ई०) सुल्तान अहमद नासिरुद्दीन अबुलफरा अहमदशाह का पद धारण करके गद्दी पर बैठा। उसके बापका नाम तातार खाँ था। इसका जन्म यहीं पर हि० स० ७९३ (१३९० ई०) में हुआ था। गद्दी पर बैठने के समय इसकी अवस्था २१ वर्ष की थी। (मीरते अहमदी)

पड़ा। कुछ समय के लिए यह विद्रोह सहज ही में शान्त कर दिया गया। इसके बाद में अहमदशाह ने साबरमती के किनारे पर आशावल नाम की बस्ती को अपने अनुकूल मानते हुए एक नये नगर की स्थापना की और उसी को अपनी राजधानी बनाया। आशावल भी इस नये नगर का एक भाग बन गया और उसी समय से यह नगर गुजरात के बादशाहों की राजधानी रहता चला आया है। इस नगर का नाम इसके संस्थापक के नाम पर अहमदाबाद [1] पड़ा। (१४१२ ई०)

उसी वर्ष के अन्त में फिरोज खाँ ने राजगद्दी के लिए फिर दावा किया और एक बड़ी भारी सेना लेकर मोड़ासा के स्थान पर अपना मरडा खड़ा किया। ईडर का राव रणमल्ल भी पाँच छः हजार घुड़सवार और पैदल साथ लेकर तुरन्त ही उससे आ मिला। अहमदशाह भी आ पहुँचा। फीरोजखाँ और राव दोनों थोड़ी सी सेना मोड़ासा में छोड़ कर वहाँ से करीब १० मील की दूरी पर रूपनगर चले गए। शाह ने वहाँ पहुँच कर घेरा डाल दिया और धावा करके नगर पर कब्जा कर लिया। अन्त में राव और फीरोज खाँ दोनों प्राण बचाने के लिए पहाड़ियों में भाग कर चल गए। कहते हैं कि थोड़े दिनों बाद राव में और फीरोज खाँ में अनबन हो गई। राठोड़ सरदार ने अपने पुराने मित्र के हाथी घोड़े छीन लिए और उनको शाह की भेंट करके फिर उसकी कृपा प्राप्त कर ली।

मालवा के सुल्तान हुशंग ने शाह के विरोधियों का आश्रय दिया था इसलिए उसके साथ भी लड़ाई करनी पड़ी। इस लड़ाई में अहमदशाह विजयी हुआ और उसके शत्रु तितर बितर हो गए (शत्रुओं) में

(१) ऐसा प्रतीत होता है कि यह नगर कर्ण सोलंकी की कर्णावती के स्थान पर [illegible]।

इस समय से चार शताब्दी (पहले) अल्बेरूनी नामक प्रवासी ने आशावल (आशापल्ल) नगर का जिक्र किया है।

से एक ने गिरिनार जाकर सोरठ के राव की शरण ली इसलिए अब शाह का ध्यान इस हिन्दू राज्य की ओर भी आकृष्ट हुआ।

सोरठ सदा से हिन्दुओं का प्यारा देश रहा है। यह उनके लिए पृथ्वी पर स्वर्ग के समान है। इस भूमि पर स्वच्छ नदिया बहती हैं, उत्तम जाति के घोड़े पैदा होते हैं और सुन्दर स्त्रिया प्राप्त होती हैं। इसके अतिरिक्त यह एक पवित्र क्षेत्र है। जैनों के आदिनाथ अरिष्टनेमि और हिन्दुओं के महादेव तथा श्रीकृष्ण का निवासस्थान भी यही है। तीर्थङ्करों को माननेवाले अपने मन को गिरनार और शत्रुञ्जय की पवित्र यात्रा के प्रेरित करते है, विष्णु के उपासक नित्य प्रात काल गोपीचन्दन का तिलक करते समय सोरठ का ध्यान करते हैं और शिव के उपासक शखनाद करके विजयी शङ्कर का गुणानुवाद करते हैं।[1] उधर, राजपूत और चारण कभी राव खॅगार के पराक्रम का वर्णन करके गर्व करते हैं तो कभी राणक-देवड़ी के मन्द भाग्य पर आँसू बहाते हैं। किसी गॉव में सन्ध्या समय किसी वृक्ष के नीचे बैठ कर लोग जब किसी विदेशी से और-और देशों की बातें करते हैं तो ये इस पद्य को अवश्य दोहराते हैं –

---

(१) सोरठ के किनारे पर वेरावल नामक बन्दर है जो हिन्दुओं में 'शोक का स्थान' कहलाता है क्योंकि श्रीकृष्ण और उनके कुटुम्बी यादवों के मरण के बाद रुक्मिणी व अन्य यादव स्त्रियाँ यहीं पर अपने अपने पतियों के साथ सतियाँ हुई थी। वेरावल के पास ही एक कुण्ड है जो श्रीकृष्ण की प्रेमिकाओं, ब्रज की गोपियों की याद में 'गोपी कुण्ड' कहलाता है। इस कुण्ड के पैंदे की मिट्टी सफेद है, वही गोपीचन्दन कहलाती है। वैष्णव लोग और मुख्यत रामानन्दी साधु इस मिट्टी का तिलक करते हैं।

शिवालयों में जो बजाने के शङ्ख रखे जाते हैं वे द्वारका के आस पास सोरठ के किनारे पाए जाते हैं।

सौराष्ट्र पञ्च रत्नानि, नदी नारी तुरंगम ।
चतुर्थ सोमनाथश्च पञ्चमं हरिदर्शम् ॥

सोरठ की प्रशंसा करने में मुसलमान भी पीछे नहीं रहे हैं। मीराते सिकन्दरी में लिखा है, 'ऐसा मालूम होता है कि प्रकृति ने मालवा खानदेश और गुजरात प्रान्त में पाई जाने वाली सभी वस्तुओं का दृश्य एक जगह दिखाने के लिए [सोरठ] को चुना है। इन प्रान्तों की धरती में जो कुछ उपजता है वह तो यहाँ पैदा होता ही है परन्तु इसके अतिरिक्त सोरठ को अपने बन्दरगाहों से जो लाभ प्राप्त है उसका वे गर्व नहीं कर सकते हैं। इन्हीं बन्दरगाहों के कारण यहाँ के व्यापारी अटूट धन पैदा करते हैं और देश के लोगों में आराम व विलास की चीजें पहुँचाते हैं।

खेद है कि गिरिनार के हरिवंशीय यादव राजाओं का इतिहास कुछ भी नहीं मिलता है।[1] हम राजधानी का वर्णन कर चुके हैं, राव खंगार की कथा भी लिख चुके हैं और यह भी बतला चुके हैं कि किस प्रकार गोहिल राजपूतों ने रावों की आधीनता स्वीकार करके सोरठ में प्रवेश किया तथा किस प्रकार इस प्रान्त के छोटे छोटे विभाग हो गये। अब तो हमें केवल यह बताना है कि मुसलमानों ने अपने लम्बे

(१) Transactions of the Royal Asiatic Society (Bombay Branch) के पहले भाग में गिरनार पर बने हुए राव खँगार के महलों के दरवाजे पर एक लेख का कुछ भाग दिया हुआ है जिसमें नवघन खँगार और मण्डलिक के नाम दिये हुए हैं और सिद्धराज जयसिंहदेव के विषय में लिखा है कि—'पृथ्वी से मिलने वाले भोगों के प्रभाव के कारण उसकी आँखों में रस और मद भरा रहता था। उसकी कीर्ति के प्रकाश में शत्रुओं की आँखें चौंधिया जाती थी। जो राजा लोग उसका पदवन्दन करने आते थे उनके मुकुटों के रत्नों से प्रवाहित होने वाले कान्ति रूपी जल से उसके चरणों का प्रक्षालन होता था। दुर्भाग्य से इस लेख के नीचे कोई तारीख नहीं दी हुई है।

प्रयत्न के बाद इस प्रान्त पर किस प्रकार विजय प्राप्त की, चूडासमा राजपूतों ने अपने ग्रास के लिए, खङ्गार के मूल वंशज होने के कारण, राज्य पर अपना हक बताया तथा अन्त मे किस प्रकार सोरठ में एक-मात्र मुसलमानी झण्डा फहराने लगा।

मुसलमान इतिहासकार लिखता है, "अहमदशाह को गिरनार का किला देखने की प्रवल इच्छा हुई इसलिए उसने विद्रोहियों को उसी दिशा में दौड़ाया और उनका पीछा किया। उस समय तक किसी भी राजा ने मुसलमानों के आगे सिर नहीं झुकाया था इसलिए सोरठ के राजा पर शेर मलिक को आश्रय देने का अपराध लगा कर शाह ने उस पर आक्रमण करने का कारण ढूढ निकाला। पहाडियों के पास पहुचते ही हिन्दू राजा ने उसका सामना किया परन्तु मुसलमानों की युद्ध-प्रणाली से अनभिज्ञ होने के कारण वह तुरन्त ही हार गया और शाह ने गिरनार के किले तक, जो आजकल जूनागढ कहलाता है, उसका पीछा किया। कुछ समय बाद राजा ने कुछ वार्षिक कर देना स्वीकार किया और उस समय भी बादशाह को बहुमूल्य भेंट दी। बची हुई रकम वसूल करने के लिए अपने कुछ अधिकारियों को वहां छोड़ कर अहमद शाह अहमदाबाद लौटा। रास्ते में उसने सिद्धपुर के देवालयों का विनाश किया। वहाँ पर उसको बहुमूल्य जवाहरात और बहुत सा धन मिला।

गुजरात के बलशाली राजाओं को दबाने के साथ साथ अहमदशाह को प्रान्त के विभिन्न भागों मे और भी छोटे-मोटे सरदारों को वश मे करने का प्रयत्न करना पड़ा। इनमे से कुछ ने तो पर्वतों और जगलों के प्राकृतिक दुर्गम किलों मे जाकर शरण ली। इन पर वार्षिक कर ... करने मे बड़ी-बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। फिर उन लोगो कर दे चुकने के बाद जब तक बादशाह की फौज इन पर में न हो और न आती तब तक ये लोग दुबारा कर न देते थे। तक कि उनमें से ✶

के पास ही धन्ध नामक परगने में भीलड़ी और सरधार नाम के दो गाँव हैं। इन्हीं दोनों गाँवों में बरसोजी और वैसोजी अपने कुटुम्ब सहित रहते थे इसीलिए इनके वंशज क्रमशः भीलड़िया और सरधारा बाघेला कहलाए। ये दोनों भाई अपने कुटुम्ब को उक्त गांवों में छोड़ कर करीब १२० सवारों के साथ अहमदाबाद तक छापा मार आते थे। कभी रात में तो कभी दिन दहाड़े ही ये अहमदाबाद के आसपास के गाँवों पर हमला कर देते और लूट में बहुत सा धन व मनुष्य ले जाते। अहमदशाह ने भी इनको वश में करने की बहुत सी युक्तियाँ कीं परन्तु सफल न हुआ। अन्त में उनके पास खर्चा बीत गया और उनके बहुत से घुड़सवार कम हो गए। अहमदाबाद और कड़ी के बीच की सड़क पर सांतज गांव के पास नासमभ नामक गाँव है। एक बार रात के समय ये

★प्रधान प्रधान लोग उसके साथ समझौता न कर लें अथवा वे बिलकुल नष्ट न हो जावें। देश में बहुत सी छोटी छोटी गढ़ियाँ [छोटे किले] हैं उनमें यह लोग (बाहरवटिया) जाकर रहने लगते हैं। उनको शिक्षा देने वालों के पास पर्याप्त तोप गोले नहीं होते और यदि हों भी तो उनका प्रबन्ध ठीक नहीं होता। इन्हीं कारणों से बाहरवटिया अपना स्थान पकड़ कर बैठा रहता है और उसके शत्रु की दाल नहीं गल पाती। उपर्युक्त साधनों के कारण उसका लूटपाट करने का साहस बहुत बढ़ जाता है। यदि ऐसा न हो तो उसकी हिम्मत कभी न बढ़े।

ईडर के पहाड़ी प्रान्त व गुजरात के ईशान कोण में ऐसे बाहरवटियों के लिए कहते हैं कि 'वे विखे (तकलीफ) में हैं। ऐसे बहुत से उदाहरण आगे चल कर लिखे जावेंगे। बाहरवटियों के कामों से मिलता जुलता हाल सेम्युअल (Samuel) के दूसरे भाग के चौदहवें प्रकरण में इस प्रकार लिखा है— इस-लिए अबसेलम (Absalom) ने जाब (Jaob) को राजा के पास भेजने के लिए बुलवाया परन्तु वह नहीं आया। फिर दुबारा आदमी भेजे गए परन्तु वह नहीं आया। अन्त में अबसेलम ने अपने नौकरों से कहा 'मेरे खेतों के पास ही जाब के खेत हैं उनमें जौ की फसल खड़ी है उसमें आग लगा दो। इसके अनुसार अबसेलम के नौकरों ने उसमें आग लगा दी।

दोनों भाई उस गांव के तालाब पर जाकर ठहरे। प्रात काल के समय अखो भण्डारी नामक राजपूत खाद की गाडी भरवा कर अपने खेत मे से जा रहा था। उसको आते देख कर वाघेलों का एक साथी छुप गया। गाड़ीवान ने अखो से कहा, "ठाकुर, वाहरवाट तालाव आ गए मालूम होते हैं, अपने को जल्दी जल्दी चलना चाहिये।" अखो ने उत्तर दिया, "तू डर मत, उनमे मेरे जैसा एक भी राजपूत नहीं है, वरना वे तीन दिन में अपना ग्रास (जमीन) वापस ले लेते।" बाघेलों के साथी ने जाकर यह बात अनेप सरदारों से कही। उन्होंने उसी आदमी को अखो को बुलाने भेजा। जब अखो आया तो वाघेलों ने पूछा, "तुमने अभी क्या कहा ?' अखो ने जो कुछ कहा था वह हँसी मे कहा था परन्तु अब वह इनकार नहीं कर सकता था इसलिए उसने कहा, 'हाँ ठाकुरो, यदि तुम्हारे साथ मेरा जैसा राजपूत होता तो तुम तीन ही दिन मे अपना ग्रास वापस ले लेते।" यह सुनकर दोनों भाइयों ने कहा, 'अच्छा, हम तुम्हें एक हजार रुपये का घोड़ा चढ़ने को देंगे और जो कुछ तुम्हें चहिए यह सब देंगे।' यह कह कर वे उसे भी आपने साथ ले गए।

बादशाह की हुरम और दूसरे मुसलमान सरदारों की बेगमे पॉच सौ रथों व दूसरे लवाजमे सहित प्रति शुक्रवार सरखेज के पास मुकरबा (मकबरा) के रोजे पर जाया करती थीं। नौकर चाकर तो कुछ दूर पर ठहर जाया करते थे और बेगमें अकेली ही पीर की कब्र पर चली जाती थी। अखा भण्डारी ने बाघेला बन्धुओं से कहा, "जब तक तुम इन बेगमों को न पकड लोगे तब तक तुम्हारा ग्रास वापस नहीं मिल सकता।' जब बेगमों की सवारी (मकबरे के) अहाते मे पहुँची तो अचानक राजपूतों ने आकर उनको घेर लिया। हुरम ने पूछा, "तुम कौन हो ?" उन्होंने उत्तर दिया, "हम वरसों और जैतो हैं, हमारा ग्रास छीन लिया गया है और हम मरने पर तुले हुए हैं। अब हमारा इरादा तुम को पकड कर ले जाने का है।" हुरम ने कहा, "यदि तुम मेरी

इज्जत लोगे तो मैं मर जाऊंगी और अगर छोड़ दोगे तो शहर लौट कर मैं तुम्हारी जागीर तुमको तुरन्त वापस लौटवा दूंगी । इसके लिए उसने पक्की सौगन्द खाई और राजपूत वापस लौट गए । इतने ही में हुरम के नौकर चाकर भी आ पहुँचे और वाघेलों को पकड़ने की तैयारी करने लगे परन्तु हुरम ने उन्हें ऐसा करने से रोक दिया। जब हुरम शहर में पहुँची तो उसने चरागें नहीं जलवाईं और अपने अंधेरे महल में शोक भरी सी बैठ गई। जब बादशाह को इसकी खबर मिली तो दौड़े आए और पूछ ताछ शुरू की। हुरम ने सारी कहानी कह सुनाई और बादशाह से याचना की मैं सौगन्द खा चुकी हूँ आप तुरन्त उन दोनों भाइयों को बुलाकर उनका ग्रास लौटा दीजिए । यदि वे मेरी गाड़ी हाँक ले जाते तो बादशाह की क्या इज्जत रहती ?

बादशाह ने दोनों भाइयों को आदर सहित अहमदाबाद आने का निमन्त्रण भेजा और सिरोपाव देने का वचन दिया । हुरम ने उनको पालड़ी के पास ही धोरी कुए (सफेद कुए) के पास ठहरने के लिए तथा प्रातःकाल उनके लिए चौढ़मर (अगवानी) भेजने के लिए कहला भेजा। वाघेलों ने ऐसा ही किया और सुबह होते ही बादशाह ने मानिकचन्द और मोतीचन्द नामक अपने मन्त्रियों को उन्हें लिवा लाने को भेजा। दोनों मन्त्री गाजे बाजे के साथ जा पहुँचे और परसोजी तथा जैतोजी को चलने के लिए कहा। वाघेलों ने पूछा "तुम हमें पकड़कर कैद में तो न डाल दोगे इसका क्या विश्वास दिलाते हो?" मन्त्रियों ने सौगन्द खाकर विश्वास दिलाया 'हम के हम जिम्मेदार हैं आप हमारा विश्वास कीजिए। ऐसा कह कर वे उन दोनों भाइयों को नगर की ओर लिवा ले चले । नगर के द्वार तक पहुँचते पहुँचते शाम हो गई थी। उसी समय उन्होंने सड़क पर एक स्त्री को अनुचित वेष में निलज्जता से बैठे हुए देखा। वाघेलोंने पूछा 'यह स्त्री कौन है ? मन्त्रियों ने कहा, यह ब्राह्मणी अथवा बनियानी (वैश्य) होगी। फिर राजपूतों ने मन्त्रियों से पूछा 'तुम कौन जाति के हो ? उत्तर मिला हम बनिये हैं। यह सुनकर भाइयों ने

जैतो से कहा, "भाई, जिस जाति की स्त्रियाँ दिन में इस तरह निर्लज्ज होकर बैठती हैं उसी जाति के ये मन्त्री भी हैं, यदि बादशाह हमें पकड़ कर कैद में डाल दे तो इन्हें क्या शर्म आवेगी, और ये उसका बिगाड़ भी क्या सकते हैं ?" इसके बाद वे मन्त्रियों से यह कह कर कि 'हम तुम पर विश्वास नहीं कर सकते' वापस धोरी कुए को लौट गए। मन्त्रियों ने जाकर जैसा हुआ वैसा बादशाह को निवेदन किया। इस पर बादशाह ने बाघेलों से अविश्वास का कारण पुछवाया। उन्होंने जवाब दिया, 'जब तक पक्की जमानत हमे न मिल जावेगी तब तक हम शहर में न आवेंगे'। अब की बार बादशाह ने अपने दरबार के अमीरों को बॉहधर के रूप में भेजा और उनके साथ वे दोनों राजपूत फिर शहर की ओर रवाना हुए। शाम हो चुकी थी और वे एक सॅकडे रास्ते से जा रहे थे। इतने ही में उन्हें एक पठान स्त्री मिली जो बुर्का ओढे जा रही थी। उस स्त्री ने घुडसवारों को अपनी ओर आते देख कर छुपने का बहुत प्रयत्न किया परन्तु उसे कोई जगह न मिली। उसने अपने मन में सोचा कि मैं मुगल की लड़की हूँ, यदि कोई मेरा मुह देख लेगा तो बहुत ही अनुचित होगा। इस तरह विचार करने के बाद जब उसे और कोई चारा न सूझा तो वह तुरन्त ही एक पास वाले कुए में कूद पड़ी। उसके कूदने का शब्द सुनकर बहुत से आदमी वहाँ इकट्ठे हो गए और राजपूत भी वहीं ठहर गए। जब उस स्त्री को कुए से बाहर निकाला गया और पूछताछ की गई तो सब को मालूम हुआ कि वह कौन थी और कुए में क्यों कूद पडी थी। अब वरसो और जैतो को विश्वास हो गया कि ऐसी स्त्रियों की सतानें ही उनके बॉहधर होने लायक थी। इस प्रकार वे बादशाह के दरबार में हाजिर हुए। शाह ने उनके पुराने कपडे उतरवा दिए और नई पोशाकें प्रदान की। कहते हैं,उनके पुराने कपडों में से चार सेर लीखें निकली थीं। उन बेचारों ने जगल में ऐसा ही सकट भोगा था।

अब दोनों भाइयों ने सोचा कि कोई ऐसा काम करना चाहिए जिस से

बादशाह इन पर खुश हो इसलिए उन्होंने अपनी बहन खासा का विवाह उसके साथ कर दिया। इसके बाद अहमदशाह ने उनको कलोल परगने के पाँच सौ गाँव देकर पूछा 'तुम इनका बंटवारा किस तरह करोगे ?' वरसो और जैतो ने कहा कि बड़े भाई को बड़ा भाग मिलता है। बादशाह ने इसका कारण पूछा तो छोटे ने उत्तर दिया कि इसका कारण 'बलात्कार' है। तब अहमदशाह ने कहा कि तुम दोनों ने वन में साथ साथ बराबर मुसीबतें झेली हैं इसलिए इन गाँवों को आपस में बराबर ही बाँट लो। इसके अनुसार वरसो ने कलोल और दो सौ पचास दूसरे गाँव अपने हिस्से में लिए। उसके वंश का प्रधान आजकल अम्भोर में राजा है और दूसरे पेथापुर व पैंढारिया के ठाकुर हैं जिनके अधिकार में बारह-बारह गाँव हैं। बाकी गाँवों में से कोलियों ने इन लोगों को निकाल कर अपना कब्जा कर लिया। छोटे भाई जैतो के हिस्से में सायन्द परगने के २५० गाँव आये। गाँवों का बंटवारा करते समय दोनों भाइयों ने छोटे बड़े का इतना सा भेद कर लिया था कि अच्छी अच्छी जमीन तो बड़े भाई के भाग में आई और साधारण जमीन छोटे के हिस्से में। धीरे धीरे छोटे भाई की जमीन में गेहूँ की अच्छी पैदावार होने लगी और बड़े की जमीन में बाजरा भी मुश्किल से उगने लगा।

इस घटना के बाद की बात है कि एक दिन बीहोला सामन्तसिंह जो १४० गाँवों का ठाकुर था बादशाह के महल के नीचे होकर जाने वाली सड़क से घोड़े पर बैठ कर जा रहा था। गरमी का मौसम था इसलिए कड़ी धूप से बचाव करने के लिए ठाकुर ने सिर पर कपड़ा डाल रखा था क्योंकि उन दिनों छतरियों का रिवाज तो था नहीं और आफ्ताबगीरी लगाने की इजाजत भी बड़े मुसलमान उमरावों के सिवाय और लोगों को न थी। जब ठाकुर सामन्तसिंह उधर से जा रहे थे तो वरसो और जैतो भी महल की खिड़की के पास बैठे हुए थे। उन्होंने हंसी में कहा 'यह मुँह छुपाये कौन जा रहा है ?' यह सुन

कर सामन्तसिंह ने कहा, "मैं मुह क्यों छिपाने लगा ? मुह तो वे छुपाए जिनकी बहन बेटियां मुसलमानों को दी गई हैं ।" यह सुन कर वरसो और जैतो को क्रोध आ गया और उन्होंने निश्चय किया किसी तरह इसकी लडकी को मुसलमान को न दिलावे तो हमारा नाम वरसो और जैतो नहीं, और हमारे जीने को धिक्कार है। वीहोला तो अपने डेरे पर चला गया और मौका पाते ही वाघेलों ने वादशाह के कान भरना शुरू किया । उन्होंने कहा 'वीहोला ने हमारा अपमान किया है, इसका वदला चुकाने का सब से अच्छा ढग यही है कि आप उसकी चौदह वर्षीया सुन्दरी कन्या के साथ विवाह करलें ।' वादशाह ने इस वात को स्वीकार कर लिया और अपने मुगल सरदारों को आज्ञा दी, 'जव सामन्तसिंह दरवार मे आवे तो उसकी लडकी को हमारे लिए माग लो ।' सरदारों ने उत्तर दिया, 'वन्दानवाज, यह सामन्तसिंह जगली है, हमारा कहना आसानी से न मानेगा, और फिर हमारे लिए उससे इस मुआमले मे वात करना वहुत मुश्किल है ।" तव वादशाह ने कहा, "अच्छी वात है, जव वह आए तो हमे याद दिलाना, हम खुद व खुद उससे कहेंगे ।"

इसके वाद सामन्तसिंह एक दिन दरवार मे आया। मुगल सरदारों के याद दिलाने पर वादशाह ने उससे पूछा, 'सामन्तसिंह, तुम्हारे कितने वाल बच्चे है ?' उसने उत्तर दिया, 'हुजूर, मेरे एक लडका और एक लड़की हैं ।' अहमदशाह ने फिर पूछा, "लडकी की उम्र क्या है ?" ठाकुर ने उत्तर दिया, 'वह सात वरस की है' वादशाह ने प्रश्न किया, "राजपूत लोग अपनी लड़कियों की शादी इतनी देर से क्यों करते हैं ?" सामन्तसिंह ने कहा, "हमारे यहा एक लड़की की शादी में कम से कम दो तीन हजार रुपये खर्च हो जाते हैं। एक तो, इतना रुपया ही इकट्ठा करना कठिन काम है, फिर यदि छोटी अवस्था मे शादी कर दी जावे और लड़की मर जावे तो इतना धन व्यर्थ चला जावे ।" अब वादशाह ने कहा, 'अच्छा, सामन्तसिंह तुम अपनी लड़की की शादी

घुसने की किसी की हिम्मत नहीं पड़ती। यहाँ से दो मील परे केदारेश्वर महादेव हैं जो पाण्डवों के समय के बतलाए जाते हैं और यहाँ से सात मील दूरी पर कुटेश्वर महादेव हैं जो पाण्डवों के समय से भी बहुत पहले के हैं।

बादशाह अपना लश्कर लेकर सीहोस्र की तरफ रवाना हुआ और वहाँ पहुँच कर गाँव से चार मील दूर अपना डेरा जमाया। सामन्तसिंह ने अपने भाई भतीजों को बादशाह के पास यह पूछने के लिए भेजा

*प्रकार मौरों और मधुमक्खियों ने, जो ईश्वर की सेना के आगे चलने वाले हैं उन्हीं शत्रुओं को उन (Ismlites) के आगे से भगा दिया था। कर्नल टॉड ने अपनी 'वेस्टर्न इन्डिया' नामक पुस्तक में अहमदाबाद के सुल्तान महमूद बेगड़ा की बात लिखी है जिसमें उसने सुल्तान द्वारा आबू पर्वत पर अचलेश्वर के मन्दिर में स्थित विशाल नन्दी (बैल) की पीतल की मूर्ति के तोड़ने के प्रयत्न का वर्णन किया है। अचलगढ़ का नाश करके आबू पर्वत से नीचे उतरते समय उसका विजयी झण्डा फहरा रहा था परन्तु किसी अनाशङ्कित कारण से पैदा होने वाला विघ्न उनकी बाट जोह रहा था। शिखर में लगे हुए छत्तों से रवाना होकर मधु मक्खियों की एक विशाल सेना ने उन पर आक्रमण किया और जालोर तक उनके पीछे पड़ी रहीं। मूर्तिनाशक पर विजय प्राप्त करने का स्मरण बना रहे इस कारण इस स्थान का नाम तभी से 'भ्रमर-स्थल' पड़ गया। इसी स्थल पर एक मन्दिर बनवाया गया और शत्रु-सेना के छोड़े हुए हथियारों के लोहे से एक विशाल त्रिशूल बनवाकर महादेव के सामने स्थापित किया गया। इस प्रकार नन्दी के अपमान का बदला लिया गया। (टॉड कृत वेस्टर्न इण्डिया पृ ८)।

अभी बीस वर्षों पहले की बात है कि गुजरात में खेडा नामक स्थान पर ब्रिटिश अफसर के शव को भूमिदाह देने के लिए ले जा रहे थे मार्ग में ही मधुमक्खियों ने आक्रमण कर दिया इससे बड़ी भगदड़ मची।

कि वह मुसलमानी तरीके से निकाह पढेगा अथवा हिन्दू विधिसे विवाह कराएगा। बादशाह ने कहा, "हमने हिन्दू तरीके का विवाह कभी नहीं देखा इसलिए इस मौके पर हम हिन्दू विधि से ही विवाह करेंगे।" राजपूतों ने फिर कहा, "स्वय बादशाह हमारे यहां विवाह के लिए पधारे हैं इसलिए हम खूब धूम-धाम से विवाह करेंगे, हम तोपे चलाएँगे, महताब जलाएँगे, गुलाल उड़ाएँगे और हमारे हिन्दू रिवाज के अनुसार बरातियों से हँसी मजाक भी करेंगे तथा [उन पर नमक व मिट्टी आदि भी डालेंगे। यदि कोई बाराती इससे नाराज हो जाएगा और किसी के दे मारेगा तो शादी लड़ाई में बदल जाएगी। इसलिए आप अपने साथियों को अच्छी तरह समझा दें कि उनमें से कोई भी बीहोल के आदमियों के मजाक करने पर बुरा न मानें।" बादशाहने तुरन्त ही अपने बरातियों को आज्ञा दे दी कि बीहोल के आदमी यदि उनसे हंसी दिल्लगी करें तो वे बुरा न मानें। इसके बाद सामन्तसिंह के भाई ने कहा, "हुजूर, बीहोल में आपकी बरात के ठहरने के लिए पर्याप्त जगह नहीं है, इसलिए आप ऐसा करें कि अपने खास खास सरदारों को तो आगे भेज दें, फिर आप पधारें और आपके पीछे पीछे सेना आजावे।" यह सन्देश सुनाकर राजपूत लोग तो अपने गाव में चले गए और बादशाह ने उनके कहने के अनुसार आगे आगे अपने सरदारों को रवाना किया, फिर खुद चला और सेना उसके पीछे पीछे चली। जब वे बीहोल के पास पहुँचे तो पाच हजार राजपूत भरी हुई बन्दूकें लेकर उसका सामना करने लिए तैयार खडे थे। उन्होंने दरवाजा बन्द कर लिया और कोट पर से बन्दूकें छोड़ने लगे जिससे बादशाह की फौज के बहुत से आदमी मारे गए। बहुत देर तक तो अहमदशाह यही समझता रहा कि उसके आने की खुशी में बन्दूकें चलाई जा रही हैं और तमाशा हो रहा है, परन्तु जब उसने देखा कि बहुत से आदमी मरे जा रहे हैं तो उसे मालूम हुआ कि उसके साथ धोखा हुआ। सात दिन तक निरन्तर लड़ाई चलती रही अन्त में

शाही वस्त्र के साथ कर दो। ठाकुर ने उत्तर दिया, बन्दानवाज, आप ठीक फरमाते हैं। मैं जानता हूँ कि बहुत से हिन्दू राजाओं की लड़कियाँ शाही हरम में मौजूद हैं–जैसे झलोड़ राजा की ईडर के राजा की इत्यादि और इसलिए अगर मेरी लड़की भी वहाँ चली आवे तो कोई बड़ी बात नहीं है परन्तु वह अभी बिल्कुल बच्ची है और सूरत शक्ल में भी शाही हरम के लायक नहीं है इसलिए यदि मेरे भाई बन्धुओं में से किसी के बड़ी लड़की हुई तो मैं उसको आपकी खिदमत में हाजिर करूंगा'। बादशाह ने कुछ कठोर होकर कहा "कुछ भी हो तुम अपनी लड़की की शादी मेरे साथ करो। सामन्तसिंह ने अपनी लड़की की छोटी उम्र बता कर कितनी ही तरह के बहाने किए परन्तु बादशाह ने एक न सुनी और अन्त में उससे कुबूल करवा के छोड़ा। इसके बाद जब सामन्तसिंह अपने घर चला गया तो बादशाह ने बरसो और बैतो को बुला कर कहा तुम तो कहते थे वह ना कर देगा सामन्तसिंह ने अपनी लड़की की शादी मेरे साथ करना कुबूल कर लिया है। उन्होंने कहा उसने स्वीकार तो कर लिया है परन्तु राजपूतों में एक रिवाज होता है जिसको 'बसन्त' कहते हैं, इसके अनुसार वर अपनी भावी वधू के लिए पोशाक भेजता है, यदि सामन्तसिंह 'बसन्त' स्वीकार कर लेगा तो हम बात पक्की समझेंगे।

कुछ दिन बाद सामन्तसिंह फिर दरबार में आया तब अहमदशाह ने उसे कहा सामन्तसिंह अपनी लड़की का बसंत ले जाओ। उसने गांव लौटते समय 'बसंत' ले आने के लिए प्रार्थना की परन्तु बादशाह ने कहा 'नहीं इसे अभी अपने डेरे पर ले जाओ। बेचारे ठाकुर को मजबूर होकर बसंत ले आना पड़ा। अब बादशाह ने बामेला बन्धुओं से कहा 'जैसे तुम्हारी पहली बात झूठ निकली वैसे ही बीड़ाला का बसन्त स्वीकार न करने की बात भी गलत निकली। उन्होंने कहा 'उसने बसन्त तो स्वीकार कर लिया परन्तु लग्न पक्का नहीं करेगा। इस पर जब सामन्तसिंह फिर आया तो बादशाह ने कहा

"अब तुम्हें विवाह का लग्न पक्का करना चाहिए।" उसने उत्तर दिया "मैं तो दश महीने से यहीं पर हूँ, घर जाकर जब अपनी उपज निपज को सम्हालू गा तब विवाह की तय्यारियां करूं गा, इसमें एक वर्ष के लगभग लग जावेगा। इस समय बादशाह की बरात का आगत स्वागत करने योग्य मेरी बिसात नहीं है, इसलिए कुछ दिन और ठहरें।" बाद-शाह ने कहा, "तुम्हें जितना धन चाहिए उतना हमारे खजाने से ले जाओ परन्तु लग्न जल्दी पक्का करो।" उसने कहा, "बन्देनवाज़ यदि इस काम के लिए मैं आपसे धन लूं गा तो मेरी शोभा न होगी।" परन्तु बादशाह ने उसकी एक भी न सुनी और एक ऊंट धन का भरवा कर बीहोल भेजे जाने की आज्ञा दे ही तो डाली। इस धन से सामन्तसिंह ने बुर्जोंवाला बीहोल का किला बनवाया, गोला बारूद इकट्ठा किया तथा सेना संघटन किया। इसके बाद उसने बादशाह सलामत को कहला भेजा कि, अब आप विवाह के लिए पधारने की कृपा करें।

बीहोल से लगभग १४ मील की दूरी पर एक पहाड़ी है जो बड़ी भयकर है। वहीं पर एक 'धोरी पावटी' नामकी छोटी सी गढ़ी है। इसी स्थान पर सामन्तसिंह ने एक बड़ा भारी महल बनवाया और उसके नीचे एक तहखाना भी इसलिए बनवाया कि कभी बीहोल से भागना भी पड़े तो वहा जाकर छुप रहे। इस विशाल महल और तहखाने के खण्डहर अब भी मौजूद हैं और लोग कहते हैं कि उनमे बहुत सा धन गड़ा पड़ा है परन्तु मधुमक्खियों [1] के डर के मारे उनमें

(१) पूर्वीय देशों तथा अन्य स्थानों में मधुमक्खियों का शत्रु हो जाना कोई साधारण बात नहीं है। ड्यूटैरोनॉमी (Deurteronomy) में मोजज़ (Moses) ने इसरायलों (Israelites) को याद दिलाया है कि किस प्रकार आमेराइट (Amorites) उन पर 'मधु मक्खियों की तरह टूट पडे थे और उनका पीछा किया था। जोशुआ (Joshua) ने वर्णन किया है कि किस★

घुसने की किसी की हिम्मत नहीं पड़ती। यहाँ से दो मील परे केदारेश्वर महादेव हैं जो पाण्डवों के समय के बतलाए जाते हैं और वहाँ से सात मील दूरी पर ऊटकिया महादेव हैं जो पाण्डवों के समय से भी बहुत पहले के हैं।

बादशाह अपना लश्कर लेकर चीहोल की तरफ रवाना हुआ और वहाँ पहुँच कर गाँव से चार मील दूर अपना डेरा जमाया। मानसिंह ने अपने भाई भतीजों को बादशाह के पास यह पूछने के लिए भेजा

*मक्खर मौरीं और मियरटबियों ने, जो ईश्वर की सेना के आगे चलने वाले हैं उन्हीं शत्रुओं को उन (Israelites) के आगे से भगा दिया था। कर्नल टॉड ने अपनी 'वेस्टर्न इण्डिया' नामक पुस्तक में अहमदाबाद के सुल्तान महमूद बेगड़ा की बात लिखी है जिसमें उसने सुल्तान द्वारा आबू पर्वत पर अचलेश्वर के मन्दिर में स्थित विशाल नन्दी (बैल) की पीतल की मूर्ति के तोड़ने के प्रयत्न का वर्णन किया है। अचलगढ़ का नाश करके आबू पर्वत से नीचे उतरते समय उसका विजयी झण्डा फहरा रहा था परन्तु किसी अनाशंकित कारण से पैदा होने वाला विघ्न उनकी बाट जोह रहा था। शिखर में लगे हुए छत्तों से रवाना होकर मधु मक्खियों की एक विशाल सेना ने उन पर आक्रमण किया और जालोर तक उनके पीछे पड़ी रहीं। मूर्तिनाशक पर विजय प्राप्त करने का स्मरण बना रहे इस कारण इस स्थान का नाम तभी से 'भ्रमर-स्थल' पड़ गया। इसी स्थल पर एक मन्दिर बनवाया गया और शत्रु-सेना के फटके हुए हथियारों के लोहे से एक विशाल त्रिशूल बनवाकर महादेव के सामने स्थापित किया गया। इस प्रकार नन्दी के अपमान का बदला लिया गया। (टॉड कृत वेस्टर्न इण्डिया पृ ८७)।

अभी थोड़े वर्षों पहले की बात है कि गुजरात में खेड़ा नामक स्थान पर ब्रिटिश अफसर के शव को भूमिदाह देने के लिए ले जा रहे थे मार्ग में ही मधुमक्खियों ने आक्रमण कर दिया इससे बड़ी भगदड़ मची।

कि वह मुसलमानी तरीके से निकाह पढेगा अथवा हिन्दू विधिसे विवाह कराएगा। बादशाह ने कहा, "हमने हिन्दू तरीके का विवाह कभी नहीं देखा इसलिए इस मौके पर हम हिन्दू विधि से ही विवाह करेंगे।" राजपूतों ने फिर कहा, "स्वय बादशाह हमारे यहा विवाह के लिए पधारे हैं इसलिए हम खूब धूम-धाम से विवाह करेंगे, हम तोपे चलाएँगे, महताब जलाएँगे, गुलाल उड़ाएँगे और हमारे हिन्दू रिवाज के अनुसार बरातियों से हँसी मजाक भी करेंगे तथा [उन पर नमक व मिट्टी आदि भी डालेंगे। यदि कोई बाराती इससे नाराज हो जाएगा और किसी के दे मारेगा तो शादी लड़ाई में वदल जाएगी। इसलिए आप अपने साथियों को अच्छी तरह समझा दें कि उनमें से कोई भी बीहोल के आदमियों के मजाक करने पर बुरा न मानें।" बादशाहने तुरन्त ही अपने बरातियों को आज्ञा दे दी कि बीहोल के आदमी यदि उनसे हंसी दिल्लगी करें तो वे बुरा न मानें। इसके बाद सामन्तसिंह के भाई ने कहा, "हुजूर, बीहोल में आपकी बरात के ठहरने के लिए पर्याप्त जगह नहीं है, इसलिए आप ऐसा करें कि अपने खास खास सरदारों को तो आगे भेज दें, फिर आप पधारें और आपके पीछे पीछे सेना आजावे।" यह सन्देश सुनाकर राजपूत लोग तो अपने गाव में चले गए और बादशाह ने उनके कहने के अनुसार आगे आगे अपने सरदारों को रवाना किया, फिर खुद चला और सेना उसके पीछे पीछे चली। जब वे बीहोल के पास पहुँचे तो पाच हजार राजपूत भरी हुई बन्दूकें लेकर उसका सामना करने लिए तैयार खडे थे। उन्होंने दरवाजा बन्द कर लिया और कोट पर से बन्दूकें छोड़ने लगे जिससे बादशाह की फौज के बहुत से आदमी मारे गए। बहुत देर तक तो अहमदशाह यही समझता रहा कि उसके आने की खुशी में बन्दूकें चलाई जा रही हैं और तमाशा हो रहा है, परन्तु जब उसने देखा कि बहुत से आदमी मरे जा रहे हैं तो उसे मालूम हुआ कि उसके साथ धोखा हुआ। सात दिन तक निरन्तर लडाई चलती रही अन्त मे

सामन्तसिंह का बड़ा भारी नुकसान हुआ और उसे अपने परिवार को लेकर 'घोरी पावटी' भाग जाना पड़ा। शाही सेना ने बीहोल में प्रवेश किया और खूब लूटमार की। अहमदशाह ने तीन महीने तक अपना पड़ाव वहीं पर रखा और घायल सिपाहियों की मरहम पट्टी व सेना का पुनः संगठन करता रहा। अन्त में वह घोरी पावटी' की ओर रवाना हुआ उसने बहुत से पेड़ कटवा डाले और लगातार दो महीनों तक इसको करता रहा। कहते हैं कि सामन्तसिंह के पास सामान बीत गया और अन्त में उसने बन्दूक की गोलियों की एवज सोने और चांदी तक मुसलमानों पर चलाए। अन्त में घोरी पावटी छोड़कर उसने पुनवाना पर्वत पर आकर शरण ली और ईडर के राव के साथ अपनी पुत्री का विवाह कर दिया। बादशाह ने उसके १२० गांव खालसे कर लिए।

सामन्तसिंह बारह वर्ष तक बाहरवाट रहा और मुसलमानों को खूब तंग करता रहा। अन्त में बादशाह ने उसके पास बांहधर (अमानत) भेजकर झगड़ा निपटा देना चाहा। उसने कहा 'मुझे मेरा मास (जागीर) लौटा दो मैं शांति से रहने लगूं गा। इस पर बादशाह ने उसको वैगांव परगने के ८४ गांवों में वांटा देकर झगड़ा निपटाया। सामन्त सिंह बीहोल लौट आया और वहीं पर रहने लगा। अब तक उसके वंशज वहीं रहते हैं और बीहोला राजपूत कहलाते हैं तथा वेगांव के गांवों में वांटा[1] लेते हैं।

इन्हीं दिनों बरसों बाद जैतो की बहन लाला का देहान्त हो गया कुछ लोगों का कहना है कि गरम गरम दूध पीने से उसकी आंतें जल गई इसलिए वह मर गई। बादशाह उसके रूप और गुण पर अत्यन्त मोहित था इसलिए उसकी मृत्यु से वह बहुत ही दुःखी हुआ। उसने अपने मन्त्रियों को अपने लिए लाला के समान ही हिन्दू स्त्री खोजने के लिए विभिन्न देशों में भेजा परन्तु उनको हिन्दुओं में व मुसलमानों में वैसी लड़की कहीं भी न मिली उन्होंने वापस आकर

[1] बांट-हिस्सा या लगान।

समाचार कहे जिससे बादशाह पहले की अपेक्षा और भी अधिक शोकातुर हो गया। उसने राजकाज छोड दिया और शोकमग्न होकर बैठा रहने लगा। अब, मन्त्रियो ने सोचा कि लाला के समान दूसरी स्त्री आए बिना बादशाह की तबीयत ठीक नही हो सकती इसलिए उन्होने उसी कार्य के लिए एक ब्राह्मण को नियुक्त करके भेजा। बहुत से देशो मे घूमता हुआ वह ब्राह्मण मातर नामक नगर मे जा पहुँचा। वहाँ पर चित्तौड के राणाओ का वशज सीसोदिया राजपूत सत्रसालजी राज्य करता था और रावल पदवी को धारण करता था। उसके अधिकार मे ६६ गाँव थे और वह रानीबा नाम की एक पुत्री तथा भाणजी व भोजजी नाम के दो पुत्रो का पिता था। रानीबा अत्यन्त सुन्दरी थी। ब्राह्मण उसको देख कर बहुत ही आनन्दित हुआ क्योकि उसने सोचा कि इस लडकी को ढूँढ लेने के समाचार जब वह बादशाह के दरबार मे सुनावेगा तो अवश्य ही उसे शिरोपाव मिलेगा। वहाँ से विदा होकर वह सीधा मन्त्रियो के पास जा पहुँचा और लाला बाघेलानी के समान सुन्दरी कन्या मिल जाने का शुभ समाचार कह सुनाया। मन्त्रियो ने उसे आदर सहित शिरोपाव प्रदान किया और विस्तारपूर्वक सब हाल कह सुनाने के लिए कहा। उसने कहा, कि चारुतर मातर नगर के रावल सत्रसालजी की रूपवती कन्या को मैने सबसे अधिक सुन्दरी पाया है। अब, मन्त्रियो ने बहुत ही आदर सत्कार के साथ रावल सत्रसालजी को अहमदाबाद बुला भेजा और अपनी पुत्री का विवाह बादशाह के साथ कर देने के लिए अनुनय विनय की परन्तु सत्रसालजी ने उत्तर दिया, 'एक हिन्दू की लडकी का विवाह मुसलमान के साथ नही हो सकता।' मन्त्रियो ने फिर कहा, "बादशाह के हरम मे बहुत से हिन्दू राजाओ की लडकियाँ मौजूद हैं।" इसका सत्रसालजी ने केवल इतना ही उत्तर दिया कि, 'मुझमे और उनमे अन्तर है।' इस पर दीवानो ने धमकी दी कि यदि वह राजीखुशी स्वीकार न करेगा तो उसके साथ सख्ती का बर्ताव किया जावेगा, परन्तु रावल अपनी बात पर दृढ रहा और अन्त मे कैद कर दिया गया। उसकी ठकुरानी ने जब यह बात सुनी तो अपने मन मे सोचा, "मै यही

समझूंगी कि मेरी यह लड़की मर गई थी परन्तु किसी तरह मेरे स्वामी और प्राण की तो रक्षा होनी ही चाहिए। यह सोच विचार कर उसने अपनी लड़की को अहमदाबाद भेज दिया। जब राणीबा को वस्त्राभूषण से सजा कर बादशाह के सामने भेजा गया तो वह आश्चर्यचकित होकर बोला 'क्या माला वापस आ गई? तब राणीबा ने कहा 'वह माला तो गई। अब बादशाह को होश आया। दूसरे दिन बादशाह ने दरबार किया और सत्रसालजी को बुलवा कर उनकी बेड़ियाँ कटवा दी तथा उनको आदर सहित सिरोपाव देकर बिदा किया। सत्रसालजी ने उस समय सोचा कि चलो जेलखाना तो भोगना ही पड़ा परन्तु मुसलमान को लड़की तो न देनी पड़ी इसलिए वह खुशी-खुशी घर लौटे। उन्हें राणीबा के अहमदाबाद जाने का हाल मालूम न था।

अपने गाँव पहुँच कर जब सत्रसालजी शाम को भोजन करने बैठे तो राणीबा को आवाज दी। राणी झूठमूठ ही उसे बुलाने के लिए बाहर गई और वापस आकर कहा कि 'राणीबा अभी खेल रही है बादमें आवेगी। सत्रसालजी ने कहा 'जब तक राणीबा नहीं आवेगी मैं भोजन नहीं करूंगा। तब राणी ने उनसे कहा 'नाथ राणीबा को अहमदाबाद भेजा गया तो आप कैदखाने से छूट कर आये हैं। यह सुन कर सत्रसालजी बहुत दुःखी हुए और कहने लगे यदि मैं वहीं मर भी जाता तो क्या होता? मैं चित्तौड़ के राणा का वंशज हूँ अब तक निष्कलङ्क कहलाता रहा हूँ सीसोदियों की प्रतिष्ठा पर ऐसा कलङ्क कभी नहीं लग पाया था तुम्हें धिक्कार है कि तुमने इस निष्कलङ्क वंश को इस प्रकार कलङ्कित किया। राणी ने कहा 'यदि मैं ऐसा न करती तो आपके प्राण चले जाते अब जो कुछ हुआ सो हुआ आप यही समझिये कि आपकी एक पुत्री मर गई थी। परन्तु राजपूत इसे सहन न कर सका वह तुरन्त खड़ा हो गया और तलवार अपने हाथ में ले ली। यह देख कर ठकुराणी उससे लिपट गई परन्तु उसने धक्का देकर उसे जमीन पर गिरा दिया और तलवार को अपने पेट में भोंक ली तथा तुरन्त ही मुर्दा होकर जमीन पर गिर पड़ा।

सत्रसालजी के पुत्र भाणजी व भोजजी ने उनका सम्यक् रीति से क्रियाकर्म किया और फिर मातर पर राज्य करने लगे। जब यह समाचार अहमदाबाद पहुँचा तो राणीबा बहुत दुखित हुई और हिन्दू रीति से स्नान आदि किया। उसको दुखी देख कर बादशाह ने दयार्द्र होकर कहा, "जब कोई हिन्दू राजा मरता है और उसका पुत्र गद्दी पर बैठता है तो उसके सम्बन्धियो को उस परिवार की सहायता के रूप मे क्या-क्या करना पडता है?" राणीबा ने उत्तर दिया, "जो धनवान सम्बन्धी होता है वह शिरोपाव भेज कर उनकी शोकसूचक सफेद पोशाक बदलवाता है।" बादशाह ने कहा, 'तो तुम्हारे भाइयो को शोक खुलवाने के लिए मै यहाँ बुलाता हूँ।" यह कह कर उसने उनको बुला भेजा। दोनो ठाकुर अहमदाबाद पहुँच कर अपने ही डेरे मे ठहरे। बादशाह ने उनके घोडो के लिए घास दाना आदि भेज दिया और सब यथोचित प्रबन्ध कर दिया। फिर, उसने राणीबा से कहा, "मै आज तुम्हारे भाइयो को शिरोपाव भेट करूँगा।" राणीबा ने कहा, "कौन भाई, और कौन बहिन, उनका मुझ से अब क्या नाता है?" बादशाह ने फिर कहा, "तो, क्या वे तुम्हार भाई नही है?" उसने उत्तर दिया, "मैं अब मुसलमान हूँ और वे हिन्दू हैं, हम साथ-साथ भोजन नही कर मकते है, एक पात्र मे पानी नही पी सकते है, तब हम भाई बहिन कैसे हो सकते हैं?" बादशाह बोला, "अच्छा, आज तुम उनके लिए भोजन तैयार करो।" यह सुन कर राणीवा ने अपने मन मे कहा, "मैंने तो और ही कुछ सोचा था, यह तो बात ही उलटी पड गई।" जब बादशाह ने भाणजी और भोजजी को बुलावा भेजा तो वे शिरोपाव लेने के लिए तैयार होकर आए और अपनी बहिन के महल मे जाकर बैठे। जब वहाँ पर और कोई न रहा तो एकान्त देख कर उनकी बहिन कहने लगी, "भाइयो, तुम्हे धिक्कार है कि मुझे मुसलमान को दे देने के अपमान से दुखी होकर तुम्हारे पिता ने तो प्राण दे दिये और अब तुम यहाँ पर जातिच्युत होने के लिए आए हो।" यह कह कर उसने बादशाह की जो कुछ मन्शा थी वह सब कह सुनाई। यह सुन कर छोटा भाई भोजजी तो

तुरन्त ही खिड़की से कूद कर निकल भागा और बड़ा भाई माणजी वहीं रहा। जब बादशाह आया तो उसे कहने लगा 'अपनी बहिन का बनाया हुआ भोजन खाओ। उसने कहा 'साहब मैं यह भोजन नहीं खा सकता। बादशाह ने फिर कहा 'तुम यों दूर-दूर क्यों हटते हो? माणजी ने कहा 'साहब यदि मैं यहाँ पर भोजन करूँ तो कोई भी राजपूत मुझे कन्या न देगा। तब बादशाह ने कहा इसकी चिन्ता न करो मैं तुम कहोगे उतने ही राजपूतों को तुम्हारे साथ भोजन करने के लिए ले आऊँगा। यों कह सुन कर उसने अन्त में ठाकुर को खाने के लिए मजबूर कर ही लिया। माणजी को इससे अत्यन्त दुःख हुआ। उनका दुःख दूर करने के लिए महमदशाह ने ५२ गाँवों के राजपूतों को अहमदाबाद में बुलवा लिया। इस अवसर पर जब उनको मालूम हुआ कि बादशाह बलपूर्वक उनका धर्म बदलवाना चाहता है तो बहुत से राजपूत तो अपने गाँव और ग्रास छोड़कर दूसरे देशों को चले गए और रहे सहे जो बादशाह के हाथ पड़ गए उनको अपना धर्म खोना पड़ा। इसी प्रकार बहुत दिनों तक गड़बड़ी चलती रही कितनी ही लड़ाइयाँ हुईं और बहुत से राजपूतों को अपने प्राणों से हाथ धोने पड़े।

चम्पानेर के पास ही राजपीपला है। यह १२ गाँवों की राजधानी है। उस समय यहाँ पर राजा हरिसिंहजी गोहिल राज्य करते थे। एक बार किसी ने उनको बहुत से बहुमूल्य मोती भेंट किए। उन्होंने उन मोतियों का हार बनवा कर रानी को पहनाया और कहा इन मोतियों में खरा पानी है। जब बादशाह से झगड़ा हुआ तो दूसरे राजपूतों की तरह राजपीपला के राजा को भी जङ्गल में भागना पड़ा। एक बार जब वे प्यास से व्याकुल हो रहे थे तो रानी ने अपने हार की तरफ देखा और दुःखी होकर कहा 'ठाकुर साहब आपने एक बार मुझे कहा था कि इन मोतियों में पानी है वह कहाँ है? इस अवसर पर चारण ने यह कवित्त लिखा है —

शाह जहाँ सुलतान कोपि चढ्यो जब, तब
शेष ना सहानो भार धरनी हलानी है,
मारे रजपूत शूर महा पूर रेवाहू के
आसपास धूर लाल रङ्ग सो रङ्गानी है।
सुलतान तेरे त्रास बायन मे छाले परे,
कन्दमूल खान लगी भोमियो की रानी है,
तोर तोर हार अपसरा ले निचोवे मुख,
"तुमें ज्यो कहत कत मुकता मे पानी है।" ॥

हरिसिंहजी गोहिल १२ वर्ष तक बाहरवाट रहे। इसके बाद सुलतान ने उनका ग्रास लौटा दिया। उनके वशज अब भी राजपीपला मे राज्य करते हैं।

अपनी बात को समाप्त करते हुए भाट ने लिखा है कि, इस प्रकार जातिच्युत हुए राजपूतो की एक अलग ही जाति बन गई जो 'मोहले सलाम' कहलाए क्योकि उन्होने बादशाह के मोहाल (महल) के आगे सलाम किया (झुक गए)। ये लोग अब भी हिन्दुओं की सी पोशाक पहनते है, इनमे से कुछ हिन्दू धर्म को मानते है और कुछ मुसलमानी धर्म को, परन्तु इन लोगो मे मुर्दों को गाडते ही है, जलाते नही। इनकी स्त्रियाँ भी हिन्दुओ की सी पोशाक ही पहनती हैं। अन्य हिन्दू इनको मुसलमान मानते हैं परन्तु ये लोग पहले जिस खाँप (शाखा) के थे उसका नाम अब भी अपने नाम के साथ लगाते है और अपनी वशावली पढने के लिए बहीवचा अथवा भाट भी रखते हैं। विवाह के अवसर पर ये लोग हवन नही करते वरन् कलमा पढते हैं परन्तु गणेश-पूजा तथा अन्य रिवाज हिन्दुओ के समान ही मानते है। कुछ राजपूत ऐसे थे जिन पर गरीब होने के कारण बादशाह की दृष्टि नही पडी इसलिए उनका धर्म बच गया। ये कारडिया राजपूत कहलाए। दूसरे राजपूत जो बहुत बलवान् थे, वे धार्मिक मामलो मे नही दबाए जा सके परन्तु कर (खिराज) देना तो उनको भी स्वीकार करना ही पडा। ये लोग अपने-अपने राज्यो के राजा बने रहे। अब तक इनके नाम के साथ सम्मान

सूचक 'जी'-पद लगाया जाता है। कुछ और गरीब राजपूत जो अपनी गरीबी के कारण बच रहे जिनको अपने 'नरवा' (निर्वाह) के लिए जमीन जोतने की परवानगी (अनुमति) के सिवाय और कुछ न मिला वे नारोड़ा (माडोदा) राजपूत कहलाए। इनके अतिरिक्त जिन बनियों और ब्राह्मणों का धर्म बिगाड़ा गया वे बोहरा[1] की जाति में मिल गए।

---

[1] 'परन्तु इस जिले [भड़ौच] मे एक और मुसलमान जाति है। इस जाति के लोग खेती-बाड़ी का काम करते हैं और बोहरा कहलाते हैं। ये लोग व्यापारी बोहरो से भिन्न हैं। यद्यपि कभी-कभी ये लोग किराये पर गाड़ी चलाने का काम भी करते हैं परन्तु इनका निश्चित व्यवसाय खेती करना ही है। इनके खेतों को देखने से पता चलता है कि इस जिले के किसानो मे ये लोग ही सब से अधिक चंचल उद्यमी और अपने व्यवसाय मे परम कुशल हैं। इन लोगो की पोशाक रीति-रिवाज और भाषा यह सब कुनबियों तथा अन्य हिन्दू कृषकों की सी ही हैं और वास्तव मे ये लोग मूल में तो हिन्दू ही हैं। इनके पूर्वज प्राय कोली राजपूत तथा कुछ कुनबी थे इन लोगो का कहना है कि इनका धर्मपरिवर्तन गुजरात के मुसलमान सुल्तान महमूद बेगड़ा के समय मे हुआ था। इन किसान बोहरो की भाषा अन्य मस्जिद व जाम इत्यादि कहलाने वाले मुसलमान कृषकों की भाषा के समान हिन्दुस्तानी नहीं है वरन् गुजराती है। खेती-बाड़ी का काम करने वाले समस्त बोहरे सुन्नी मुसलमान हैं। [भड़ौच जिला सम्बन्धी कर्नल विलियम्स के संस्मरण पृ ११]।

एशियाटिक सोसायटी [बंगाल] के जर्नल भाग ९ के पृ ८४२ में उज्जैन के विषय मे कोनाली [Connoly] महाशय का लिखा हुआ लेख छपा है उसी में से बोहरों की उत्पत्ति के सम्बन्ध मे निम्नलिखित वृत्तान्त उद्धृत किया जाता है —

'याकूब नामक किसी मनुष्य को अपने घरेलू अथवा धन-सम्बन्धी झगड़ो के कारण घर छोड़ना पड़ा। वह ईजिप्ट [मिस्र] छोड़कर हि स ४१२ [१११७ ई] में आकर खम्भात उतरा। इन जाति के लोगो मे से पहले पहल इसी व्यक्ति ने आकर हिन्दुस्तान मे पैर रक्खा था। उस समय इस सम्प्रदाय

इसके थोडे ही दिनो बाद वाघेलो की बडी शाखा खतम हो गई।

का प्रधान मुल्ला [जो कुछ वर्षो से इमन [Yemen] मे आकर बस गया था] जोहरबिन मूसा था। ईजिप्ट मे उस समय खलीफा मोरत-एमसिर बिल्लाह की हुकूमत थी और 'पिरान-पट्टण' के हिन्दू राज्य पर सद्रासिंह का अधिकार था। बहुत से प्रामाणिक पुरुषो का कथन है कि मौरत-एमसिर हि० स० ४८७ मे मर गया और उसके पौत्र हदेफ ने जो ११वाँ खलीफा था, हि० स० ५२४ से ५४४ तक राज्य किया। यद्यपि उस समय का गुजरात का इतिहासक्रम बहुत कुछ गडबडी मे पडा हुआ है परन्तु ऊपर दी हुई तारीखो से उसका सामजस्य बिलकुल ठीक-ठीक मिल जाता है क्योकि 'सद्रास' सिद्धा [अथवा जयसिंह] का अपभ्रष्ट रूप हो सकता है। १०६४ ई० मे वही अणहिलवाडा पट्टण पर राज्य करता था।

अस्तु, अब आगे का हाल देखिये। ऐसा मालूम होता है कि खम्भात मे उतर कर याकूब किसी माली के यहाँ ठहरा और उसको अपने धर्म मे परिवर्तित कर लिया। इसके बाद उसने एक ब्राह्मण के लडके को भी मुसलमान बना लिया। राजा सद्रास और उसके मन्त्री तारमल व भारमल जो आपस मे सगे भाई थे, प्राय खम्भात के एक देव मन्दिर मे आया करते थे। इस मन्दिर मे लोहे का बना हुआ एक हाथी चुम्बक पत्थर के आधार पर अधर लटका करता था। याकूब ने उस चुम्बक पत्थर को हटा दिया और ब्राह्मणो को विवाद मे परास्त कर दिया। इस चमत्कार का देख कर सदरासिंह व उसके मन्त्रियो ने भी उसका धर्म ग्रहण कर लिया। दूसरे लोगो ने भी इनका अनुकरण किया। इन लोगो ने अरबिस्तान से आने-जाने व बेच-खरीद का व्यवहार जारी रक्खा इसलिए ये 'व्यवहरिया' अथवा बोहरा कहलाने लगे।

नामो व घटनाओ की सचाई का इस लेख मे विचित्र झमेला है। सिद्धराज जयसिंह को प्राय गुजरात मे 'सिद्धराज जैसिंह' कहते है। सद्रासिंह इसी नाम का अपभ्रंश हो सकता है। तारमल और भारमल दोनो भाई वीरधवल वाघेला के मन्त्री तेजपाल और वस्तुपाल हो सकते हैं। फिर, अन्यत्र उल्लिखित वृत्तान्तो के आधार पर धर्म-परिवर्तन की बात कुमारपाल अथवा अजयपाल के चरित्र पर लागू हो सकती है।

बड़े ठाकुर का पौत्र आनन्ददेव था। उसके समय तक कलोल के ठिकाने मे बँटवारा नही हुआ परन्तु उसके बाद उसके छोटे पुत्र राणकदेव को पैतृक सम्पत्ति म से रूपाल और ४२ गाँव मिले। १४६६ ई० में अहमद शाह का पौत्र महमूद बेगड़ा राज्य करता था उसके समय मे कलोल के ठाकुर वीरसिंह वाघेला की स्त्री रूडा राणी ने पाँच लाख खर्च करके अडालज गाँव में एक विशाल कुआ बनवाया था अब तक मौजूद है।

वीरसिंह और उसके भाई अजेयसिंह (जैतसिंह) दोनों का मुसलमानों से झगड़ा हो गया। इस झगड़े म बड़ा भाई वीरसिंह मारा गया और उसके वंशपरम्परागत नगर पर मुसलमानों ने अधिकार कर लिया। किसी तरह फिर भी कलोल वीरसिंह के बाद कुछ पीढ़िया तक उसके वंशजों के हाथ मे रहा परन्तु अन्त म १७२८ ई मे भगतसिंह ने उसे बिलकुल ही खो दिया। भगतसिंह सम्भोदरा नामक गाँव मे जा बसा। यह गाँव उसने आंजणा कुनबियो से लिया था। अब भी उसके वंशजों का अधिकार इस गाँव पर चला आता है और वे लोग वाघेला शाखा के प्रधान होने की प्रतिष्ठा का जो दावा करते है वह सामान्य रूप से मान्य ही है।

आनन्ददेव के छोटे कुँवर राणकदेव की मृत्यु के दो तीन पीढ़ी बाद सामन्तसिंह ठाकुर हुआ। सामन्तसिंह के पुत्रों मे रूपाल के ठिकाने का फिर बँटवारा हुआ। सब म बड़े लड़के विजयराजजी को रूपाल मिला छोटे लड़के के नाम के लिए खानवाड़ा म एक महल बनवाया गया और उस भाई ने पिता के गाँवों में से चान्दु गाँव भी लिए। ऐसा मालूम होता है कि विजयराजजी ने रूपाल खो दिया क्योंकि उनका बड़ा लड़का सामतजी ईडर चला गया और वहीं पर उसने पालीना तथा टरवा के ठिकाने कायम किए। ये शाखा ही पुराने समय मे ईडर के राव के प्रगायत (सरदार) हो गए थे। छोटा लड़का वनोजी साबरमती के किनारे मापूवा म जा बसा। उसके वंशज अभी तक वहाँ पर रह रहे हैं।

सोमेश्वर के पौत्र चाँदाजी के अधिकार मे कोलवाडा अभी तक चला ता था। उनके हिमालोजी नामक पुत्र था जिसके मामा पीथा गोल के धकार मे साबरमती के किनारे पर सोखडा नामक ग्राम था। था गोल किसी असाध्य रोग मे पीडित था और क्योंकि उसके कोई तान न थी इसलिये वह मन ही मन मे हिमालोजी से बहुत डरता था। ट का कहना है कि, उन दिनो मामा को मार कर उसके ग्रास पर धिकार कर लेना कोई असाधारण बात न थी इसलिए पीथा का डर र्मूल नही था, परन्तु वह बहुत सावधानी से रहता था इसलिए उसके नजे को उस पर खुला आक्रमण करने का अवसर नही मिलता था। र भी अन्त मे हिमालोजी ने सोखडिया महादेव की यात्रा के मिष से त्रयो के बैठने के पर्देदार रथो मे बैठकर अपने साथियो सहित सोखडा प्रवेश किया। योद्धा लोग ठाकुर के महल मे जा पहुँचे और उसका ध कर दिया। इस पर राणी को सत् चढ गया और उसने हिमालोजी ो शाप दिया कि, "तेरी पुत्री की सन्तान भी अकाल मृत्यु को प्राप्त ोगी।" हिमालोजी ने उससे क्षमा माँगी और कहा, "माता, आपके ोई सन्तान नही है इसलिए मै ही आपका पुत्र हूँ, जो कुछ होना था सो ो चुका, मुझ पर दया करो—मुझे आप जो कुछ आज्ञा देगी, मै उसी ा पालन करूँगा। इस पर सती ने आज्ञा दी कि, "तुम्हारे मामा के ाम पर एक गाँव बसाओ उसी से तुम्हारा पुरुषवश चलेगा परन्तु मेरा कहा हुआ असत्य नही हो सकता इसलिए तुम्हारे वश की पुत्रियो की सन्तान नही चलेगी।" पीथापुर की स्थापना का यही मूल कारण है। यह सुन्दर नगर अब भी साबरमती के किनारे पर स्थित है, यहाँ पर बन्दूके बनाने का कारखाना है और यह आज तक यहाँ के वेतनभोगी निवासियो की वीरता व स्वामीभक्ति के लिए प्रख्यात है। सती का शाप भी सफल ही हुआ प्रतीत होता है क्योंकि पीथापुर के ठाकुरो की किसी भी कन्या ने अभी तक बच्चा नही खिलाया।

इस वश की कलोल वाली शाखा की अपेक्षा सानन्द वाली शाखा अधिक भाग्य शाली निकली। इस शाखा के लोग अभी तक अपने ग्रास

पर अधिकार बनाए हुए है। अब इस जायदाद के दो विभाग हो गए हैं— एक सानन्द (अथवा कोट) का ठिकाना और दूसरा गांगड़ का।[1]

---

1 वाघेला वंश का जो वृत्तान्त भाट से प्राप्त हुआ है उसमें बहुत गड़बड़ी है और अब इस गड़बड़ी को दूर करना असंभव है। एक वृत्तान्त में लिखा है कि कलोल और सानन्द के ग्रास पहले पहल कर्ण वाघेला के कुँवरों को मिले थे। इस वृत्तान्त में इन कुँवरों की माताओं के नाम भी दिए हैं। वृत्तान्त इस प्रकार है — कर्ण के पुत्र सारंग और वरसंग दोनों का जन्म एक साथ हुआ था इसलिए दोनों ही पाटवी पुत्र थे। सारंग की माता का नाम लाछ कुँवरिजी था और वह जैसलमेर के अर्जुनसिंहजी भाटी की पुत्री थी। वरसंग की माता का नाम अमर कुँवरबा था और वह केरोकोट के बेसलजी जाड़ेजा की लड़की थी। अपने जीवनकाल में ही पिता ने वरसंग को उरमार व १२ गाँव दे दिये थे और इसी प्रमाण से सारंग को भोलड़ी व १२ गाँव मिले थे। भोलड़ी के स्थान पर दोनों भाइयों ने मिल कर मुसलमानों से कड़ी का परगना जीत लिया परन्तु इन्होंने बेगम * को गद्दी पर कायम रहने दिया और बाहुबर लिए बिना ही पाटण जाकर बादशाह से मिले। उसने प्रसन्न होकर इनको ५ गाँव दिए। इसी के अनुसार सारंगदेव को कलोल और २५ गाँव मिले तथा वरसंग को सानन्द व २५ गाँव प्राप्त हुए।

अडालज की बावड़ी में खुदे हुए लेख में वंशवृक्ष इस प्रकार दिया हुआ है —[१] मोकलसिंह [२] कर्ण [३] मूलराज [४] महीप इसी के पुत्र वीरसिंह और नयणसिंह थे। वीरसिंह रूडाराणी का पति था। आगे ने इस वंश में जिन वरसंग और जैता का जिक्र किया है वे यही वीरसिंह और नयणसिंह थे इसमें कोई सन्देह नहीं है।

एक दूसरा लेख माणसा की बावड़ी में खुदा हुआ है जिसमें निम्नलिखित

---

* मूल बात यह है कि कड़ी परगना पर अधिकार करके फिर उन्होंने ही बेगमों का कब्ज़ा कर लिया और बाहुबर लेकर फिर दिल्ली गए और बादशाह अलाउद्दीन से मिले। वहीं उसने इनसे प्रसन्न होकर ५ गाँव प्रदान किए।]

क्रम दिया हुआ है —[१] मूलराज [२] विजयानन्द [३] वेलो [४] धवल [५] वाँको [६] चम्पक, जिसका विवाह सारगदेवजो के पुत्र लु का की पुत्री चम्पादेवी के साथ हुआ था। इसीसे उसके धारा नामक एक पुत्र हुआ जिसने १५२६ ई० मे बावडी बँधवाई थी। कलोल के पास ओगाणज मे वाघेलो की यह शाखा रही थी।

उपर्युक्त वृत्तान्त मे जो लिखा है कि सारग और वरसग कर्ण के पुत्र थे, यह गलत है। हम पहले पढ चुके हैं कि कर्ण के तो कोई पुत्र था ही नही। फिर, जैसलमेर के भाटी गजसिहजी और केरोकोट के देसलजी जाडेचा की वात भी ठीक नही है, क्योकि इन दोनो ही स्थानो पर उस समय इस नाम का कोई राजा नही था। उस समय जैसलमेर के भाटी रावल चाचकदेव के पौत्र कर्ण ने १२५१ ई० से १२७६ ई० तक राज्य किया। इसके वाद रावल लघुसेन [लखन] १२७६ ई० से १२८३ ई० तक रहा। फिर, उसके पुत्र पपल [पुण्यपाल] ने १२८३ ई० से १२८५ ई० तक राज्य किया। इसके भाई-बन्धुओ ने इसको गद्दी से उतार कर इसी के भाई जैतसी को गद्दी पर विठाया। उसने १३०३ ई० तक राज्य किया। कर्ण बाघेला १३०४ ई० तक था। इस प्रकार ज्ञात होता है कि उसके समय मे गजसिहजी नाम वाला कोई राजा ही नही हुआ। हाँ, आगे चल कर गजसिहजी राजा हुआ था जिसने १८२० ई० से १८४६ ई० तक राज्य किया। ऐसा विदित होता है कि दोनो का नाम एक [कर्ण, करण] ही होने से यह भूल हो गई है। उस समय कच्छ मे भी राजा इस प्रकार हुए हैं —

जाम गावजी १२५५ ई० से १२८५ ई० तक,

जाम वेणजी १२८५ ई० से १३२१ ई० तक,

इस प्रकार मालूम होता है कि उस समय देसलजी नाम का भी कोई जाम नही हुआ। आगे चलकर अवश्य देसलजी प्रथम ने १७१९ ई० से १७५२ ई० तक राज्य किया, परन्तु इस समय मे वहुत अन्तर है।

इन बातो को देखते हुए जो ऊपर लिखा है कि 'भाटो के वृत्तान्त मे वहुत

प्रकरण चौथा

अहमदशाह (प्रथम)–मुहम्मदशाह (प्रथम)–कुतुबशाह

ईस्वीय सन् १४१८ मे अहमदशाह को नन्दुरबार और सुल्तानपुर के परगनो का रक्षण करने के लिए जाना पडा क्योकि मालवा[1] का सुलतान हुशग और आशीर का शासक दोनो इन परगनो को ले लेने की धमकियाँ दे रहे थे। बरसात शुरू होते ही शाह को खबर मिली कि ईडर

---

१ सन् १४०१ में दिलावर खाँ गोरी नामक एक पठान ने माँडूगढ पर (जो आजकल मध्यप्रान्त की धार रियासत मे है) अधिकार कर लिया था। उसके पुत्र अलफखाँ के समय (१४०५–३१) मे माँडू भारतवर्ष के सुदृढ किलो में गिना जाने लगा था। अब भी इसके विशाल खण्डहरो को देखकर दर्शक आश्चर्य किये विना नही रह सक्ते। हुशग ने १४१५ ई० मे गुजरात के ठाकुरो और छोटे-छोटे राजाओ मे सुल्तान के विरुद्ध एक प्रबल विद्रोह खडा कर दिया था। अहमदशाह ने तीन बार इस गढ (माँडू) पर आक्रमण किया परन्तु उसे ले न सका। हुशग के वशज, जो मालवा के सुल्तान कहलाते थे, १५३१ ई० तक मालवा पर राज्य करते रहे। इसी समय यह राज्य (मालव) गुजरात के सूबे में मिला लिया गया था। दिल्ली के बादशाह हुमायूँ ने भी इस राज्य पर १५३५ ई० मे विजय प्राप्त करके कुछ समय के लिए अधिकार जमा लिया था परन्तु दूसरे ही वर्ष उसे बाहर निकाल दिया गया। शेरशाह के अधिकारी शुजाअत खाँ ने इस देश पर १५५४ ई० तक शासन किया। उसके बाद उसका पुत्र बाजिद अथवा बाजबहादुर इस प्रान्त का स्वामी हुआ और बादशाह कहलाने लगा। १५६१ ई० में बादशाह अकबर ने उसे गद्दी से उतार दिया परन्तु शीघ्र

के राव चम्पानेर[1] के रावल और मण्डलगढ़ तथा मांडोद के सरदारों ने उसकी अनुपस्थिति में सुल्तान हुशंग को गुजरात पर चढ़ा लाने का मनसूबा कर लिया है और इसी आक्रमण का समाचार सुनकर सोरठ के राव ने भी कर देना बन्द कर दिया है। बरसात के मौसम का विचार न करके वह तुरन्त ही नर्मदा को पार कर गया और माही के किनारे जाकर छावनी डाल दी। वहाँ से थोड़ी सी फौज साथ लेकर वह अहमदाबाद गया और फिर तावड़तोड़ मोडासा जा पहुँचा। वहाँ से शाह ने सोरठ के राव और मण्डलगढ़ के राजा आदि विद्रोहियों के विरुद्ध फौजें भेजी और बरसात खतम होते ही स्वयं मालवे में आगे बढ़ा। वहाँ पर हुशंग से उसकी मुठभेड़ हुई जिसको उसने हरा दिया और मांडू गढ़ से कुछ मील दूर तक उस का पीछा भी किया। दूसरे ही वर्ष गुजरात और मालवा के

ही उसने पुनः अधिकार प्राप्त कर लिया और १५७०-७१ ई० तक राज्य किया। इसके बाद उसने बादशाह की अधीनता स्वीकार करली और दरबार में रहने लगा। उन दिनों बाजबहादुर और उसकी प्रेयसी रूपमती का प्रेम बहुत सी प्रेमगाथाओं और किंवदन्तियों का विषय बना हुआ था। अकबर के सेनापति आदमखाँ की चंगुल से बचने के लिए रूपमती ने जहर खा लिया था। उसका प्रेमी भी उज्जैन की एक झील के पास उसकी बगल ही में दफनाया गया था।

[1] पंचमहल जिला बम्बई में बड़ोदा से उत्तरपूर्व की ओर २५ मील की दूरी पर चम्पानेर का पुराना नगर है जो अब बिलकुल खण्डहर के रूप में है। इसके पास ही पावागढ़ की प्रसिद्ध गढ़ी है जिस पर अलाउद्दीन खिलजी से हार कर भगे हुए चौहान राजपूतों ने १३   ई० में कब्जा कर लिया था। इस पर १४१   ई० में अहमदशाह ने और १४४८ ई० में मुहम्मदशाह ने हमले किए परन्तु अन्त में १४८४ ई० में रावल जयसिंह के समय में महमूद बेगड़ा ने इस पर पूर्ण अधिकार कर लिया। इस घेरे का वर्णन आगे महमूद बेगड़ा के प्रकरण में लिखा जायेगा। गुजरात के सुल्तानों के समय में (१४८४–१५३६) चम्पानेर गुजरात की राजधानी बन गया और अहमदाबाद से भी आगे बढ़ गया था परन्तु मुगल सूबेदारों के अधिकार में इसकी कोई पूछ न रही और अब यह एक विशाल खण्डहर के रूप में पड़ा हुआ है।

सुल्तानो मे सन्धि हो गई और इसके फलस्वरूप गुजरात के बादशाह को अपने पडौसी विद्रोही राजाओ से वैर लेने का अच्छा अवसर मिल गया। उसने ईडर पर कब्जा कर लिया और चम्पानेर पर चढाई करके वहाँ के रावल से वार्षिक कर देने की प्रतिज्ञा करा ली। इसके बाद, वह अपने देश की सीमा सुदृढ करने मे लग गया, उसने विद्रोहियो को तितर-बितर कर दिया, हिन्दू-देवालयो को तुडवा-तुडवा कर उनके स्थान पर मसजिदे बनवा दी। उसने कितने ही स्थानो पर किले बनवाए और वहाँ पर छावनियाँ डाल दी। ऐसे स्थानो में बारिया और शिवपुर के परगनो मे जिनोर के किले का उल्लेख किया जा सकता है। इसके बाद उसने पर्वतो मे किला बँधवाकर दहमोद का व्यापारी नगर बसाया और फिर, अलाउद्दीन खिलजी की ओर से नियुक्त अलफखाँ नाम के शासक द्वारा १३०४ ई० मे बँधाये हुए करीह (खेडा अथवा कडी) के किले का जीर्णोद्धार कराकर उसका नाम सुल्तानाबाद रक्खा।'

इसके बाद भी बहुत दिनो तक अहमदशाह की लडाई मालवे के साथ चलती रही जिसमे अन्त मे जीत उसी की हुई। इस लडाई से उसकी फौज को इतना धक्का लगा कि कितने ही वर्षों तक वह विदेशी राज्यो पर आक्रमरण न कर सका। सन् १४२६ ई० मे उसने ईडर का पुनर्विजय करने के लिए प्रस्थान किया, परन्तु वह जानता था कि उस राज्य पर अधिकार रखना उसके काबू से बाहर की बात थी। यहाँ का किला वह कभी भी न ले सका था इसलिए रावो पर अपना आतक जमाने के लिए उसने हाथमती नदी के किनारे पर एक विशाल किला बनवाना शुरू किया। यह विशाल और सुन्दर किला ऐसे स्थान पर बनवाया गया कि ईडरगढ पर झुके हुए पर्वत शिखरो से स्पष्ट दिखाई पडता था। बादशाह ने इसका नाम अहमदनगर रक्खा। यह भी दन्तकथा प्रचलित है कि अहमदनगर और अपनी राजधानी के बीच मे साबरमती के किनारे पर गहरी-गहरी गुफाओ द्वारा सुरक्षित सादरा का किला भी उसीने बनवाया था। ईडर के तत्कालीन राव पूँजा ने रात-बिरात अहमदनगर पर हमले करके व अन्य मुसलमानी शहरो मे उपद्रव करके बादशाह के काम मे

वृत्तान्त नही मिलता, तथा इस विषय मे यह भी नही कहा जा सकता कि गुजरात के सुल्तानो अथवा सूबेदारो मे से किसी को अब तक अवकाश ही न मिला था अथवा इस सुदूर एव पृथक् प्रदेश तक अपना राज्य बढाने के लिए उनके पास पर्य्याप्त साधन ही न जुट पाये थे। हम पहले पढ चुके हैं कि अणहिलवाडा के राजा अपनी फौजो को सुदूर दक्षिण तक ले गए थे और उत्तरी खानदेश तक भी उनका अधिकार फैला हुआ था जहाँ गुजरात पर चढाई हो जाने के बाद भी बहुत दिनो तक कर्ण गैला ने अपना अधिकार बनाये रक्खा था, इतना ही नही, उन्होने सम्पूर्ण कोकन भी ले लिया था और कोल्हापुर राज्य को ले लेने की धमकी भी दी थी। इस आधार पर हम कह सकते हैं कि बम्बई और उत्तरी कोकन, ये दोनो ही अणहिलवाडा के राजाओ के कब्जे मे थे और जब बाघेला वश के नाश के बाद यह राज्य मुसलमानो के हाथ मे आया तो इन पर भी अपने आप उनका अधिकार हो गया। कही-कही पर हमको अणहिलवाडा के राजाओ का यह वृत्तान्त भी पढने को मिला है कि समुद्र पर भी उनको सत्ता चलती थी, इससे भी उपर्युक्त बात की सिद्धि होती है, जो सिद्धराज के सुप्रसिद्ध वश की कीर्ति बढाने मे थोडा महत्त्व नही रखती है।

अहमदशाह की ओर से कुतुब खाँ माहिम का सूबेदार था। उसके मरते ही बहमनी सुल्तान ने सुअवसर देखकर इस द्वीप पर सहज ही मे कब्जा कर लिया और सालसिट में भी 'थाना' पर अधिकार जमा लिया। अहमदशाह ने भी तुरन्त ही डिउ, गोगो और खम्भात मे सत्रह जहाजो का बेडा तैयार कर लिया और इनकी सहायता से ही एक फौज के साथ उत्तरी कोकन तक बढ गया तथा हमला करके 'थाणा' पर वापस अधिकार कर लिया। बहमनी सरदार माहिम को भाग गया और वहाँ पर द्वीप का आगे का भाग खुला होने के कारण एक लकडी का किला बनवाकर उसमें रहने लगा। अपनी फौज का थोडा सा नुकसान भोग कर भी अहमदशाह ने इसको ले लिया और अब उसने देखा कि दक्षिण की पूरी सेना उसका सामना करने के लिए तैयार खडी

थी। रात पड़े तक भयकर लड़ाई होती रही परन्तु किस पक्ष की विजय हुई यह नहीं कहा जा सका। परन्तु जब खूब अन्धकार फैल गया तो दक्षिण का सूबेदार अपनी फौज लेकर पास ही में मुम्बादेवी के द्वीप में चला गया। गुजरात के जहाजी बेड़े ने द्वीप के चारों ओर घेरा डाल दिया और फौज उतारने के लिए सीढ़ियाँ डाल दी। यह देखकर बहमनी शाह के सूबेदार को द्वीप छोड़ कर महाद्वीप को भाग जाना पड़ा। इसके बाद थाणा के किले के नीचे फिर लड़ाई हुई जिसमें दक्षिणी फौज बिलकुल हार कर तितर-बितर हो गई और गुजरात की विजयिनी सेना माहिम द्वीप से प्राप्त कितने ही सोने चाँदी के काम के सुन्दर जरकसी कपड़े लेकर घर लौटी।

सन् १४३१ ई० में बहमनी शाह ने अपनी पहली हार का बदला लेने के लिए गुजरात के अधीनस्थ खानदेश प्रान्त पर अचानक हमला कर दिया परन्तु जब स्वयं महमदशाह ने जाकर उसका सामना किया तो उसको पहले की तरह हार खानी पड़ी।

दूसरे वर्ष महमदशाह ने राजपूताना पर चढ़ाई की और डूंगरपुर के रावल से कर वसूल किया। इसके बाद वह मेवाड़ के राणा मोकलजी के भीलों वाले प्रान्त में होता हुआ कोटा बूंदी और मदूला पहुँचा तथा वहाँ के रावों से भी कर वसूल किया। उसके राज्यकाल के अन्तिम वर्ष उसके पुराने शत्रु हुशंग के वंशजों से मालवा का राज्य लेने के प्रयत्न में बीते परन्तु वह सफल न हुआ। अन्त में ४ जुलाई सन् १४४३ ई० को वह अहमदाबाद में मर गया और जुमा मसजिद के सामने एक सुन्दर कब्र में दफना दिया गया।

महमदशाह के बाद उसका पुत्र मुहम्मदशाह[1] सुल्तान हुआ। उसने गद्दी पर बैठते ही ईडर के राव पर चढ़ाई की। पहले तो राव कुछ दिन पहाड़ियों में छुपा रहा परन्तु बाद में एक दूत भेजकर अपने अपराधों के

---

१ ई० स० १४४३ से १४५१ तक।

लिए क्षमा माँग ली और सुल्तान ने भी उसको माफ कर दिया । इसके वाद राव ने अपनी कन्या भी सुल्तान को व्याह दी । मुहम्मदशाह ने अपनी चढाई भागुर तक जारी रक्खी और वहाँ से कर वसूल करके वापस अहमदाबाद लौट गया । १४४६ ई० मे उसने चम्पानेर के रावल गगादास[1] पर चढाई की और उसको हराकर किले मे भाग जाने के लिए वाध्य कर दिया । परन्तु गगादास ने मालवा के खिलजी बादशाह को अपनी मदद करने के लिए राजी कर लिया और महमूदशाह को चढा लाया । इस नवीन शत्रु के सामने मुहम्मदशाह न टिक सका और बुरी तरह हार खाकर भग गया ।

अब, मालवा के सुल्तान महमूद ने गुजरात को अपने आधीन कर लेने की धमकी दी । इसी बीच मे मुहम्मदशाह मर गया अथवा उसको जहर दे दिया गया और उसका पुत्र कुतुबशाह[2] बादशाह हुआ । उसने देखा कि उसकी राजधानी से कुछ मील की दूरी पर ही शत्रु की सेना आ पहुँची है इसलिए आगे बढकर सरखेज व बटवा के बीच में उसका सामना किया, घमासान युद्ध हुआ और मालवा के सुल्तान की लगभग जीत हो ही चुकी थी कि उसको वापस लौटना पडा । दोनो सुल्तानो मे सन्धि हो गई और दोनो ही ने तब से हिन्दुओ के विरुद्ध युद्ध-योजना करते रहने की प्रतिज्ञा की । इसी के फलस्वरूप उन दोनो ने मिलकर मेवाड के राणा कुम्भा पर चढाई की ।

मेवाड मे एक के बाद एक शूरवीर और पराक्रमी राजा होते आये हैं, राणा कुम्भा[3] भी इन्ही मे से था । इसी के पौत्र राणा साँगा की

---

१ रावल गगादास और मुहम्मदशाह के इस युद्ध पर आधारित 'गगादास प्रताप विलास' नामक नाटक वडौदा अरियण्टल ईस्टीट्यूट के ह० लि० ग्रन्थ सग्रह में सुरक्षित है । [देखिए-वडौदा ओ० रि० इ० जर्नल, वॉ० ४, पृ० १९३-२०४] स०

२ १४५६ ई० से १४५९ ई० ।

३ ईडर के अन्तिम गुहिल राजा ग्रहादित्य अथवा नागादित्य द्वितीय को भीलो ने धोखे मे मार डाला था । उसकी विधवा रानी अपने तीन वर्षीय बाल कुँअर बप्पा अथवा बप्प को छुपी रीति से लेकर जारोल से नैर्ऋत्यकोण की

शूरवीरता के बल पर मेवाड़ ने मुसलमानों की भारी शक्ति का सामना

ओर एक मील की दूरी पर नागौर के किले में बसी गई और वहाँ पर एक भील ने उसकी रक्षा की। फिर कुछ दिनों बप्पा आधुनिक उदयपुर से उत्तर की ओर दस मील पर पाराशर नामक जंगल में भी रहा। उस समय चित्तौड़ पर मोरी वंश का परमार राजा राज्य करता था—वह बप्पा के मातृपक्ष में था इसलिए वह उसको १५ वर्ष की अवस्था में ही सरदार की पदवी देकर अपने पास रखने लगा। सन् ७२६ ई. में गजनी के मुसलमान शासकों ने चित्तौड़ पर चढ़ाई की। बप्पा ने उनको वापस हटा दिया और ठेठ गजनी तक उनका पीछा किया और वहाँ के गढ़ को अपने अधिकार में लेकर वहाँ पर एक चावड़ा राजपूत को अपनी ओर से नियुक्त कर दिया। इसके बाद वह वापस चित्तौड़ चला आया और वहाँ के सरदारों की अनुमति से मोरीवंश के राजा को मार कर ७२८ ई. में चित्तौड़ की गद्दी पर बैठ गया और 'रावल' की पदवी धारण की। इसको हिन्दू-सूर्य 'राजगुरु' और 'चक्रवर्ती' उपनाम भी प्राप्त हुए। वृद्धावस्था में इसने चित्तौड़ का राज्य अपने पुत्र अपराजित अथवा गुहिल को सौंप दिया और स्वयं गजनी चला गया। वहाँ से फौज लेकर ईरान पर चढ़ाई की और उस देश के राजा को पराजित करके उसकी कन्या से विवाह किया। इसीके वंशज गजनी की गद्दी के मालिक हुए और जब जाबुलिस्तान के अल-मामून ने चित्तौड़ के रावल खुमाण (८१२ ई.–८३६ ई.) पर चढ़ाई की तो वे उसकी (रावल की) सहायता करने आए थे।

चित्तौड़ की गद्दी पर (२) अपराजित के बाद निम्नलिखित राजा हुए—इनमें सब एक दूसरे के पुत्र ही थे ऐसी बात नहीं है वरन् भाई भतीजे भी थे जो एक के बाद एक गद्दी पर बैठे हैं—(३) भोज (४) शील (५) कालभोज (६) भर्तृभट्ट (७) सिंह (८) महायिक (९) खुम्माण (१) अल्लट (११) नरवाहन (१२) शक्तिकुमार (१३) शुचिवर्मा (१४) नरवर्मा (१५) कीर्तिवर्मा (१६) योगराज (१७) वैरट (१८) वंशपाल (१९) वैरिसिंह (२) वीरसिंह (२१) अरिसिंह (२२) चोडसिंह (२३) विक्रमसिंह (२४) रणसिंह (२५) क्षेमसिंह (२६) सामंतसिंह (२७) कुमारसिंह (२८) मथनसिंह (२९) पद्मसिंह (३) जैत्रसिंह (३१) तेजसिंह अथवा तेजस्वीसिंह (३२) समरसिंह, यह दिल्ली के

किया था। मेवाड की रक्षा के लिए जो चौरासी किले बने हुए है उनमे

चौहान राजा पृथ्वीराज का बहनोई तथा मित्र था। सन् ११९३ ई० मे शाहबुद्दीन गोरी ने पृथ्वीराज पर चढाई की। पृथ्वीराज पकडा गया और कैद हुआ—इसी लडाई मे समरसिंह और उसका बडा पुत्र काम आया। दूसरे पुत्र को बीदड की जागीर मिली, तीसरे कुँअर ने नेपाल जाकर गुरखावश की स्थापना की और चौथा कुँअर कर्ण मेवाड का ३३ वाँ राजा हुआ जिसको बाल्यावस्था ही मे सरदारो ने गद्दी पर बिठाया था और इसकी वीर माता राज का काम चलाती थी। कर्ण बहुत बहादुर था, इसी के समय मे दिल्ली के बादशाह कुतुबुद्दीन (१२०६ ई० से १२१० ई० तक) ने अपना लश्कर लेकर चित्तौड पर चढाई की थी। कर्ण ने भी लश्कर के सामने जाकर अम्बर नामक स्थान के आगे बडी बहादुरी से युद्ध किया और बहुत से मुसलमानो को मार गिराया। इस युद्ध मे स्वय कुतुबुद्दीन भी घायल हुआ। रावल कर्ण ने ११९३ ई० से १२१० ई० तक राज्य किया, उसकी मृत्यु के समय उसका पुत्र महीप अपने मामा के घर था इसलिए उसके जँवाई ने, जो जालोर का राजा था, अपने पुत्र को गद्दी पर बिठा दिया। जब यह समाचार कर्ण के भतीजे (३४) रहप ने, जो सिन्ध मे राज्य करता था, सुना तो तुरन्त फौज लेकर चित्तौड पर चढ आया और स्वयं गद्दी पर बैठा। इसने रावल के बदले राणा की पदवी धारण की, इसीलिए उदयपुर के राजा आज तक राणा कहलाते हैं। इसीने अपने कुल की शाखा का नाम भी बदल कर गेहलोत से सीसोदिया रख लिया। इसने १२११ ई० से १२३९ ई० तक राज्य किया। इसके बाद (३५) भुवनसिंह (३६) जयसिंह (३७) लक्ष्मीसिंह अथवा लक्षसी राजा हुए। इन्होंने १२७५ ई० से १३०३ ई० तक राज्य किया। इन पर दिल्ली के बादशाह (१२९५-१३१५ ई) ने चढ़ाई की परन्तु हार खाकर वापस लौटा, फिर लक्ष्मीसिंह के काका (३७) भीमसिंह की रानी लका की पद्मिनी के लिए १३०३ ई० मे दुबारा चढ कर आया। इस लडाई मे राणा के बारह कुँअरो मे से एक अजयसिंह बचा क्योंकि वह केलवाडे था। बाकी सब मारे गए, रानियाँ भी महल मे जल मरी। इसके बाद (३८) अजयसिंह राणा हुआ और उसने १३०३ से १३१० ई० तक राज्य किया। इसके दो पुत्र हुए जिनमे से बडा तो राणा के बताए हुए किसी काम को

से बत्तीस किले राणा कुम्भा के बनवाये हुए बताए जाते हैं। इनमें से

न कर सका इसलिए आत्मघात करके मर गया और छोटा भू नरपुर चला गया—इसकी तेरहवीं पीढ़ी में सज्जनसिंह हुआ जो दक्षिण में बीजापुर चला गया और वहाँ के बादशाह की सेवा में रहने लगा। बादशाह ने उसकी नौकरी से प्रसन्न होकर उसको ८४ गाँव प्रदान किए और राजा की पदवी भी दी। इसीके वंश में मराठा राज्य की स्थापना करने वाले प्रसिद्ध शिवाजी पैदा हुए थे और आज भी इसके वंशज कोल्हापुर में राज्य करते हैं।

मेवाड़ के राणा लक्ष्मसिंह के बाद उसके भाई अरिसिंह का पुत्र (११) हम्मीर गद्दी पर बैठा। इसने १३१ ई से १३६४ ई तक राज्य किया। लक्ष्मसी के समय में खोया हुआ चित्तौड़ इसीने वापस लिया और दिल्ली के तुगलक बादशाह महमूद (प्रथम) (१३२५ से १३५१ ई तक) को पराजित करके उससे अजमेर, रणथम्भोर, नागौर और सूसोपुर ले लिये। हम्मीर के बाद उसके पुत्र (४) क्षेत्रसिंह ने १३६४ से १३८२ ई तक राज्य किया। इसने माँडलगढ़ बदनोर और छप्पन के परगने मेवाड़ राज्य में सम्मिलित कर लिए। एक बार दिल्ली के बादशाह की तरफ से हुमायूं नामक सरदार ने चित्तौड़ पर चढ़ाई की—बाकरोल के पास गहरी लड़ाई हुई जिसमें मुसलमानों की हार हुई। इसके बाद (४१) लक्ष अथवा लाखा राणा हुआ जिसने मेवाड़ के पहाड़ी भाग को जीतकर बैराठ को तोड़फोड़ कर उसके पास ही बदनोर का किला बनवाया। राणा लाखा की वृद्धावस्था में मारवाड़ के राजा रणमल ने उसके बड़े पुत्र चूंडसिंह अथवा चूण्ड के लिए नारियल भेजा। जब नारियल राजसभा में लाया गया तो वृद्ध राणा ने हँसी में कहा 'क्या तुम यह नारियल इस सफेद दाढ़ी वाले के लिए लाए हो? पिता के मुँह से यह बात सुन कर चूण्ड ने कहा पिताजी इस कन्या से आप ही विवाह करें। राणा ने बहुत कुछ कहा सुना पर चूण्ड ने कहा 'वह तो मेरी माता के बराबर हो चुकी इसलिए अब आप ही को इससे विवाह करना उचित है। इससे जो पुत्र हो वही गद्दी पर भी बैठे, मैं अपना हक छोड़ता हूँ। अन्त में लाखा राणा को यह बात स्वीकार करनी पड़ी। नई राठौड़ रानी से मोकलसिंह नामक पुत्र हुआ। जब मोकल पाँच वर्ष का होगया तो राणा लाखा ने प्रयाग जाकर रहने का

सबसे वडा और सुदृढ कुम्भमेर अथवा कुम्भलमेर का किला है जिसकी चातुर्यपूर्ण बनावट और स्वाभाविक स्थिति ने इसको किसी भी सेना के लिए अजेय बना दिया है। आबूगढ पर परमारो का किला है, इस किले का कोट भी इसी ने वधवाया था और वह प्राय यही पर रहता भी था। यहाँ के तोपखाने और गढी की बुर्ज पर अब भी कुम्भा का नाम मौजूद है। यही पर एक बेढगा सा मन्दिर बना हुआ है जिसमे उसकी पीतल की बनी हुई मूर्ति स्थापित है—इस मूर्ति का आज तक

विचार किया। कुँअर चण्ड ने गद्दी पर बैठना स्वीकार नही किया इसलिए मोकलसिंह को गद्दी पर विठाया और राज्य की बागडोर चण्ड के हाथो मे सौंप दी। यह भी निश्चित किया कि दरबार मे पहली पदवी चण्ड की रहेगी और यदि राज्य की ओर से किसी को जागीर दी जावेगी तो पट्टे पर चण्ड व उसके वशजो के भाले की निशानी अवश्य होगी। अब, बालक राजा की ओर से चण्ड राजकाज चलाने लगा परन्तु उसकी माता को कुछ भ्रम होने लगा इसलिए वह मेवाड छोड कर माण्डु राज्य मे चला गया। इसके बाद मोकलसिंह के नाना रणमल्ल ने आकर काम सम्हाला परन्तु बाद मे उसकी नीयत की खराबी प्रमाणित हो गई और राणी ने सम्पूर्ण वृत्तान्त चण्ड को कहला भेजा। चण्ड ने आकर रणमल्ल को मार डाला और सब राठौडो को निकाल बाहर किया।

मोकलसिंह के बाद (४३) कुम्भकर्ण अथवा कुम्भाजी हुआ, जिसने १४१९ ई० से १४६९ ई० तक राज्य किया। मेवाड के ८४ किलो मे से ३२ इसके बनवाये हुए हैं। यह बहादुर भी था और कवि भी। काठियावाड मे झाडावाड के राजा जैतसिंह (१४२०–१४४१ ई०) की कन्या की सगाई मारवाड के राजा के साथ हुई थी उसी कन्या को कुम्भाजी हर लाया था। इस पर राठौडो ने मेवाड परचढ़ाई की परन्तु उनकी हार हुई। १४४० ई० मे राणा कुम्भाजी ने गुजरात और मालवा दोनो ही देशो के मिले हुए सुल्तानो को हराया था, यही नही मालवा के महापराक्रमी बादशाह को तो कैद करके भी रक्खा था। इस महाविजय के स्मारक स्वरूप कुम्भाजी ने चित्तौडगढ पर एक बहुत सुन्दर और विशाल कीर्तिस्तम्भ अथवा जयस्तम्भ स्थापित किया था जो आज तक विद्यमान है।

पूजन होता है। राणा कुम्भा ने पश्चिमी सीमा और आबू के बीच की घाटियों को भी किलों की तरह ही बनवा दिया था। सिरोही के पास जो बसंती नामक किला है वह उसी का बनवाया हुआ है। अम्बाजी के पास कुम्भारिया में एक और किला है जो उसी ने बनवाया था और इनके अतिरिक्त बहुत से किले उसने अरावली के मेरों तथा जालोर और पनोरा के भीलों से अपने देश की रक्षा करने के लिए बनवाए थे। आबू पर्वत पर बना हुआ कुम्भा स्याम का मन्दिर इस सीसोदिया सरदार का एक और कीर्ति-चिह्न है। इसके उपरान्त ऋषभदेव के प्रख्यात मन्दिर के बनवाने में भी उसने बड़ी भारी रकम देकर सहायता की थी। यह मन्दिर, उसके प्रिय किले कुम्भलमेर के नीचे अरावली की पश्चिमी ढाल पर दौड़ने वाली सादड़ी घाटी पर बना हुआ है।[1] वह स्वयं भी कवि था और सुप्रसिद्ध कवयित्री राठौड़ राजकुमारी मीरा बाई का पति था।[2]

मुजफ्फरशाह के भाई का वंशज शम्सखाँ उस समय नागौर का स्वामी था इसलिए उसने राणा के विरुद्ध कुतुबखाँ को अपनी सहायता करने के लिए बुलाया। पहली लड़ाई में स्वयं शाह मौजूद नहीं था

१ इस मन्दिर में एक लेख खुदा हुआ है जिसमें राणा कुम्भा को 'राणा श्री कुम्भकर्ण' लिखा है और श्री बप्पा अथवा बप्प (जिसका वृत्तान्त पीछे पृष्ठ ६६ में आ चुका है) से उसका उद्गम बतलाया है। इस लेख में (जिसकी तिथि सन् १४४० ई० है) राणा के अन्यान्य विशेषणों के अतिरिक्त यह भी लिखा है 'सारी जैसे जंगली राजाओं का नष्ट करने वाला गरुड़ असत्य रूपी जंगल को जला डालने वाला दावानल'। मेवाड़ में सादी अथवा सादड़ी शहर से लगभग पाँच मील की दूरी पर राणपुर नामक गाँव है वहाँ पर एक मन्दिर है—इसके चित्र व वर्णन देखने के लिए फर्ग्युसन की Illustrated Hand Book of Architecture vol 1 p 70 अथवा उसीकी Illustrations of Indian Architecture देखें।

२ उदयपुर के कवि श्यामलदास का अभिप्राय है कि मीराबाई राणा कुम्भा की स्त्री न थी वरन् उनके पुत्र राणा साँगा के कुँवर भोजराजजी की

अत गुजरात की फौजो को राणा ने बुरी तरह हरा दिया। यह समाचार सुनकर कुतुबसाह स्वय आगे वढा और सिरोही के राजपूतो को, जो उस समय मेवाड के सरक्षण मे थे, हरा दिया, फिर, वह पहाडी मार्ग से कुम्भलमेर के किले की ओर आगे वढा। वीच ही मे राणा ने उस पर आक्रमण कर दिया परन्तु असफल हुआ और सन्धि की वातचीत शुरू हुई।

अब, मालवा के सुल्तान महमूद ने कुतुबशाह को अपना यह अभि-प्राय प्रकट किया कि हम दोनो मिलकर राणा कुम्भा के राज्य को आपस मे बाँट ले। इस विपय के सन्धिपत्र पर सहमत होकर दोनो सुल्तानो के प्रतिनिधियो ने चम्पानेर के स्थान पर हस्ताक्षर कर दिये दूसरे ही वर्ष कुतुबशाह ने चित्तौड पर फिर चढाई की और आबूगढ को जीत लिया। वहाँ पर कुछ फौज छोडकर वह सिरोही पहुँचा और पहाडियो मे एक बार फिर राणा को हार मान लेने के लिए बाध्यो किया। दूसरे वर्ष १४५८ ई० म नागौर को नष्ट करने के लिए राणा कुम्भा ने फिर शस्त्र ग्रहण किए। बहुत देर करके कुतुबशाह उसका सामना करने के लिए रवाना हुआ और जय प्राप्त करता हुआ दुर्जय कुम्भलमेर के किले तक चला आया जहाँ पर उसको रुकना पडा। इसके

स्त्री थी। यह भोजराजजी कुँअरपदवी मे ही मर गए थे इसलिए मीराबाई बालविधवा थी। यह मेडता के ठाकुर वीरमदेव की पुत्री और अकबर क सामना करने वाले चित्तौड के जयमल्ल की बहिन थी। (गु०अ०)

[फार्बस साहब ने मीराबाई का महाराणा कुम्भा की रानी होना कर्नल टॉड की भ्रान्त धारणा के आधार पर लिखा है। वास्तव मे, मीराबाई महा-राणा कुम्भा के पौत्र महाराणा सग्रामसिह (राणा सागा) के ज्येष्ठ राजकुमार भोजराज की पत्नी थी और जोधपुर बसाने वाले राव जोधा के पुत्र राव दूदा की पौत्री थी। वीरमदेव दूदा का बडा पुत्र था और मीरा वीरम के छोटे भाई रत्नसिह की कन्या थी। इनका जन्म वि० स० १५५५ मे कुडकी ग्राम मे हुआ था। [गो० ही० ओझा, उदयपुर का इतिहास, पृ० ३५८-५९] ॐ

प्रकरण पांचवां

महमूद बेगडा (१४५६ ई० से १५११ ई० तक)

कुतुब शाह के बाद उसका काका दाऊद गद्दी पर बैठा, परन्तु वह बहुत थोडे दिन राज्य कर सका क्योंकि वह बिलकुल ही अयोग्य प्रमाणित हुआ। उसके बाद उसका (कुतुब का) छोटा भाई बेगडा उपनामधारी महमूद[1] जो गुजरात के सुलतानो मे सबसे अधिक प्रतापी हुआ है, गद्दी पर बैठा। यद्यपि गद्दी पर बैठने के समय उसकी अवस्था चौदह वर्ष की ही थी, परन्तु उसने उस छोटी सी उम्र मे ही अपनी उस शक्ति और साहस का परिचय दिया जिनके बल पर आगे चल कर उसने इतनी ख्याति प्राप्त की। उसका एक स्वामीभक्त वजीर था जिसको मार डालने के लिए शत्रु पीछे पडे हुए थे, और वास्तव मे यदि वह मारा जाता तो तुरन्त ही महमूद का भी नाश हो जाता। परन्तु, उसने उस वजीर का पक्ष लिया और उसकी रक्षा की इसलिए लगभग तीस हजार विद्रोहियो ने उसके महल पर चढाई करदी। उसके मित्रो ने उसे किले का दरवाजा बन्द कर देने और शाही खजाना लेकर भाग निकलने की सलाह दी परन्तु महमूद दूसरे ही विचारो का मनुष्य था। उसने किले का दरवाजा खुलवा दिया और ज्यो ही वह बालक राजा पीठ पर भाथा बांधे हाथ मे धनुष लिए हुए शत्रुओ के बीच मे होता हुआ राजमार्ग से धीरे-धीरे सवारी लगाकर निकला उसके सभी स्वामिभक्त सरदार झण्डे के नीचे आकर इकट्ठे हो गए। इसके बाद उसने धीरज और चतुराई से ऐसी व्यवस्था की कि शीघ्र ही सारा विद्रोह शान्त हो गया।

---

१ महमूद बेगडा सम्बन्धी विस्तृत जानकारी के लिए अनुवादक द्वारा सम्पादित एव "राजस्थान प्राच्यविद्याप्रतिष्ठान, जोधपुर द्वारा प्रकाशित कवि उदयराज प्रणीत "राजविनोद महाकाव्यम्' की भूमिका देखिए।

राज्य के इस उज्ज्वल प्रारम्भ के तीन वर्ष बाद महमूद ने स्वयं अपनी सेना का नेतृत्व ग्रहण किया और खानदेश के उत्तर में जाकर मालवा के सुल्तान के विरुद्ध दक्षिण के बहमनी शाह की रक्षा की।

१४६८ ई. में मुहम्मद साहब पैगम्बर ने उसको स्वप्न में दर्शन दिए और स्वादिष्ट पकवानों का थाल उसके सामने रख कर काफिरों अथवा मूर्तिपूजकों को जीतने की आज्ञा प्रदान की। इसके अनुसार महमूदशाह ने सोरठ को जीतने की तैयारियाँ शुरू की। पहले मुहम्मद तुगलक व उसके पूर्वज अहमदशाह ने इस देश को जीतने के लिए प्रयत्न किए थे परन्तु वे सफल न हुए। अस्तु, इस चढ़ाई की विशेष तैयारियाँ की गईं पाँच करोड़ मोहरों की पेटी साथ ली गई। मिश्र अरब और खुरासान में बनी हुई अठारह सौ सोने की मूठवाली तलवारें व इनके[1] साथ ही तीन हजार आठ सौ अहमदाबाद की बनी हुई प्रसिद्ध और मजबूत तलवारें तथा इतनी ही संख्या में सोने चाँदी से मँढी हुई कटारियाँ इकट्ठी करके फौज को दी गईं। घुड़सवारों के अफसर की आज्ञा में दो हजार घुड़सवार उपस्थित थे। महमूद ने अपने मन में सोचा कि उसके साथ लड़ाई में जानेवालों को देने के लिए जो कुछ उसके पास था वह कम था इसलिए उनको शूरवीरता के बदले में सोरठ की लूट का माल भी उन्हीं लोगों में बाँट देने की उसने प्रतिज्ञा की।

जब चलते चलते वह गिरनार से ८ मील की दूरी पर आ पहुँचा तब उसने सत्रह सौ सिपाही साथ देकर अपने काका तुगलक खाँ को आगे रवाना किया और मोहाविला नामक दो बाहरी स्थानों को उसके पहुँचने से पहले-पहले अधिकार में कर लेने की आज्ञा दी। तुगलक खाँ ने उस स्थान पर जिन राजपूतों का पहरा था उन पर अचानक छापा मारा और उनको मार डाला। जब यह समाचार सोरठ के राव को विदित हुआ तो उसने तुरन्त गढ़ से नीचे उतर तुगलक खाँ पर हमला किया। तुगलक खाँ हारकर भागने ही वाला था कि उसी समय स्वयं महमूदशाह (द्वितीय) आ पहुँचा और पासा पलट गया। घमासान युद्ध

के बाद राव को बुरी तरह घायल होकर भागना पडा। महमूदशाह ने आसपास के देश को साफ करवा दिया और घास दाना आदि सामान लाने के लिए बहुत सी सिपाहियो की टोलियाँ रवाना की। बात की बात में बहुत सा सामान इकट्ठा होकर आ गया। अब, उसने घेरा डालने की तैयारियाँ की परन्तु इसमें उसको अपनी सम्भावित कठिनाइयो से भी अधिक का सामना करना पडा। अन्त मे, बहुत से जवाहिरात और नकदी की भेट लेकर उसने राव मे शत्रुता बन्द कर देने की आज्ञा दे दी। (१४६७ ई०)

महमूद गिरनार पर फिर चढाई करने का बहाना ढूँढ ही रहा था कि दूसरे ही वर्ष वह उसको मिल भी गया। वह यह कि, राव माण्डलिक राजचिन्हो को धारण किए हुए किसी मन्दिर मे गया। यह समाचार मिलते ही महमूद ने चालीस हजार फौज लेकर राव को शिक्षा देने के लिए गिरनार पर चढाई कर दी। राव न तो मुसलमानो का सामना ही करना चाहता था और न उसमे इतनी शक्ति ही थी इसलिए उससे जितना कर माँगा गया उतना ही दे दिया और छत्र आदि राज-चिन्हो को भी सुल्तान की सेवा मे भेट कर दियाँ। परन्तु यह सब व्यर्थ हुआ और शूरवीर पृथ्वीराज चौहान का यह कथन कि, 'एक बार उडाई हुई मक्खी की तरह शत्रु भी फिर-फिर कर वापस आता है,' उस पर अक्षरश लागू हो गया। उसी वर्ष के अन्त मे स्वय महमूद ने सोरठ पर फिर चढाई कर दी। राव ने अपनी प्रजा को लडाई के सकट से बचाने के लिए फिर भी मुँह माँगा धन देने की इच्छा प्रकट की परन्तु महमूद ने उत्तर दिया, "काफिर होने से बढकर कोई अपराध नही है, यदि तुम शाति चाहते हो तो खुदा की एकता पर विश्वास करो।' इसका राव ने कोई उत्तर न दिया और जूनागढ के किवाड बन्द करके बैठ गया। महमूद ने घेरा डाल दिया। राव ने जब देखा कि स्थिति उसके वश मे नही है तो वह जूनागढ छोडकर गिरनार के ऊपर की पहाडियो मे बने हुए किले में चला गया परन्तु शीघ्र ही उसके किलेदार भूखो मरने लगे। इस प्रकार जब राव ने देखा कि उसके दु खो का अन्त नही है तो उसने किले

को छोड़ दिया और चाबियाँ सुल्तान को दे दी तथा विजेता के कहने के अनुसार कलमा पढ़ लिया। (१४७२ ई०)[1]

मीराते सिकन्दरी के लेखक का कहना है कि वह सुल्तान के कहने से मुसलमान नहीं हुआ वरन् जब उसका पतन हो गया तब एक फ़क़ीर के चमत्कार को देख कर उसने इस्लाम धर्म स्वीकार किया था। ग्रन्थकार ने लिखा है कि 'राव को क़ैद करके अहमदाबाद भेज दिया गया। एक दिन जब उसने बहुत से आदमियों को शाहआलम के मेले में रसूलाबाद आते हुए देखा तो पूछा 'शाहआलम कौन है और किसकी सेवा करता है? उत्तर मिला यह पीर सर्वशक्तिमान् परमात्मा के अतिरिक्त और किसी की आधीनता स्वीकार नहीं करता। यह उत्तर सुनकर उसने पीर से मिलने का निश्चय किया और जब वह मिला तो उसी पीर ने उसको

---

१ राव माण्डलिक सोरठ का १ वाँ चूड़ासमा राजा था। उसने १४५१ ई० से १४७१ ई० तक राज्य किया। इसके पिता ने इसकी शिक्षा-दीक्षा बहुत ध्यान से कराई थी। वह युद्धविद्या और शस्त्र संचालन में अद्वितीय था। अर्जुन गोहिल की पुत्री कुन्तादेवी के साथ उसका विवाह हुआ था। अर्जुन गोहिल मुसलमानों के साथ युद्ध करता हुआ मारा गया था इसलिए कुन्ता का लालन-पालन अरटीला (अर्थीला) के शासक दूदा गोहिल ने किया था। दूदा लूटपाट का धन्धा करता था इसलिए सुल्तान ने राव माण्डलिक को उसे दण्ड देने के लिए लिखा। राव ने पहले तो उसे समझा-बुझा कर यह धन्धा छोड़ने के लिए कहा परन्तु वह न माना तब चढ़ाई करके उसको मार कर दिया।

प्रसिद्ध भक्त नरसी मेहता भी इसी राव के समय में हुए थे। वैष्णवों की मान्यता है कि राव ने भक्त को एक हार के लिए कष्ट दिया था। यह उसके नाश का कारण हुआ।

चारणों का कहना है कि माझिया ग्राम में रहने वाली गंगाबाई उपनाम नागबाई के शाप से ही राव का पतन हुआ था। वह एक सत्यवती एवं पतिव्रता स्त्री थी। राव ने उसके गाँव में जाकर उससे छेड़छाड़ की तब उसने शाप दिया जिस प्रकार मैं तुझ से मुँह फेर कर जा रही हूँ उसी प्रकार तेरी राज्य लक्ष्मी भी तुझ से पराङ्मुख हो जायेगी। इसके बाद ही राव मुसलमानों से पराजित होकर नष्ट हो गया।

मुसलमान होने का बोध दिया था।" सोरठ के अन्तिम राव [1] को मुसलमानो ने 'खाने जहाँ' अथवा 'ससार के स्वामी' की पदवी दी। अन्य पीरजादो की कब्रो की भाँति उसकी कब्र भी उसके जीवन काल मे उसको दु ख पहुँचाने वाले मुसलमानो की सन्तानो द्वारा आज तक अहमदाबाद मे पूजी जाती है।

इस प्रकार जिसकी बहुत दिनो से आशा लगाये बैठा था उस विजय को प्राप्त करके महमूदशाह ने विभिन्न प्रान्तो से सय्यदो तथा अन्य विद्वानो को सोरठ मे बसने के लिए बुलाया। उसने एक नगर भी बनवाया जो बहुत शीघ्र ही तैयार होकर राजधानी की समानता करने लगा, यह नगर मुस्तफाबाद कहलाया। जब सुल्तान इस नवीन नगर के

भाटो का कहना है कि नागबाई के पुत्र नागार्जुन की पत्नी मीनाबई के प्रति अशुद्ध भावना रखने के कारण ही नागबाई ने शाप दिया था इस वश के चारण भी दातराणा ग्राम मे पाये जाते हैं। नागबाई के शाप विषयक बहुत से दोहे अब भी सौराष्ट्र में प्रचलित हैं जिनमे वेद, पुराण और शास्त्रो को छोड कर राव द्वारा कलमा पढने की भविष्यवाणी का वर्णन है।

इस विषय मे एक बात और भी प्रचलित है। कहते हैं कि माडलिक ने अपने प्रधान विमलशाह की पत्नी मनमोहिनी के शील को भग किया था। इसी का वैर लेने के लिए विमलशाह अहमदाबाद गया और वहाँ से सुल्तान महमूद बेगडा को जूनागढ पर चढा लाया।

कुछ भी हो, राव के चरित्र मे नारी विषयक दुर्बलता अवश्य थी, जो उसको ले डूबी।

१ सुल्तान ने राव माडलिक से राज्य छीन लिया और उसके बाद उसके पुत्र भूपतसिह उपनाम मेलिगदेव को जागीरदार बनाया जो १४७३ ई० से १५०५ ई० तक रहा। उसके बाद उसका पुत्र खेंगार (पचम) १५०५ ई० से १५२५ ई० तक रहा। फिर, उसके पुत्र नोघण (पचम) के अधिकार में यह जागीर १५२५ ई० मे १५५१ ई० तक रही। उसका पुत्र श्रीसिह हुआ जो १५५१ ई० से १५८६ ई० तक रहा। श्रीसिह का पुत्र खेंगार (छठा) था—यह १५८६ ई० से १६०८ ई० तक बगसरा का ताल्लुकदार रहा।

भवनों का निरीक्षण कर रहा था उसी समय उसको समाचार मिला कि कच्छ के निवासियों ने गुजरात पर आक्रमण कर दिया है इसलिए १८७२ ई० में वह उनकी ओर चढ़ चला और बहुत जल्दी ही उनको आधीनता स्वीकार करने के लिए बाध्य किया। इसके अनन्तर उसने सिन्ध के जट्टों और बलूचियों के विरुद्ध भी प्रस्थान किया।[1] इस अवसर पर वह सिन्धु नदी तक देश के अन्तरंग में घुस गया था।

हम जिस समय की बात लिख रहे हैं उस के विषय में भाट ने निम्नलिखित वृत्तान्त लिखा है:—

'सारङ्गजी के वंशज भीमजी गोहिल के अधिकार में लाठी और अरटोला थे। उसके तीन पुत्र और एक कुँआरी थी जिसका विवाह सोरठ के राव के साथ हुआ था और इसी सम्बन्ध के कारण उसका कुटुम्ब अधिकतर जूनागढ़ में रहा करता था। जब मुसलमानी सेना मार्ग में हिन्दू मन्दिरों को तोड़ती-फोड़ती लाठी के पास पहुँची तो उस समय घर पर एकमात्र पुरुष भीमजी का छोटा पुत्र हम्मीरजी था। जब यह कुसमाचार हम्मीरजी ने सुना तो उसने अपनी भाभी से कहा 'सोमनाथ का नाश करने के अभिप्राय से मुसलमानी सेना चली आ रही है' यदि इस समय एक भी क्षत्रिय का बीज बचा होता तो म्लेच्छ हिन्दू देवालय का नाश न कर सकते। यह सुनकर उसकी भाभी ने कहा 'यदि और कोई क्षत्रिय-पुत्र नहीं है तो तुम तो मौजूद हो। यह सुनकर हम्मीर का रक्त खौल उठा और वह बिना कुछ कहे सुने ही दो सौ साथियों को लेकर

---

१ यह चढ़ाई कच्छ के तत्कालीन जाम हम्मीरजी के विरुद्ध नहीं की गई थी—वह तो उस समय गद्दी पर बैठा ही था। उसके विरोधी बामड़ में रापर (रायर) के जाम भराजी के पिता ने हम्मीरजी पर संकट लाने के लिए अहमदाबाद के परगने में लूटपाट शुरू कर दी। उस समय सुल्तान गिरनार के राव पर चढ़ाई में व्यस्त था।

जाम हमीरजी सुल्तान के विरुद्ध था इसलिए संधि होते ही उसने अपनी कुँवरी का विवाह कर दिया अत: महमूद वापस लौट गया।

सिहोर के पश्चिम में कुछ मील दूर सरोद की पहाडी पर चला गया। वही पर उसका मित्र वेगडा भील रहता था। वहाँ जाकर जब उसने अपने मित्र को पूरी कथा कह सुनाई तो उसने कहा, "कोई भी बडा राजा इस युद्ध मे आगे नही आता तुम ही क्यो व्यर्थ जान गँवाते हो? वह मुसलमानी सेना बहुत शक्तिशानिनी है—तुम अकेले इसका सामना नही कर सकते।" हम्मीर ने कहा, "मैं इसीलिए उनके सामने जा रहा हूँ कि युद्ध मे प्राण त्याग करूँ परन्तु मुझे केवल यही दु ख है कि मै अभी तक क्वाँरा हूँ।" [1] यह सुनकर बेगडा ने अपनी स्त्री मे सलाह करके अपनी विवाह-योग्य कन्या हम्मीर के साथ व्याह दी। हम्मीर वहाँ पर एक रात ठहरा और उसी रात को उसकी स्त्री ने गर्भ धारण किया। उसके वशज अब भी देव जिले मे नाघेर नामक स्थान पर पाए जाते है और गोहिलकुली कहलाते हैं।

अपने साथ तीन सौ धनुषधारी लेकर वेगडा शीघ्र ही हम्मीर व उसके दोसौ साथियो के साथ सोमनाथ की रक्षा [2] करने के लिए तैयार हो गया। जब घमासान युद्ध हो रहा था तब वेगडा बाहर लड रहा था। हम्मीर ने उसे अन्दर आ जाने के लिये आवाज दी परन्तु भील ने उत्तर दिया, "मै वेगडा (लम्बे सीगडो वाला) हूँ खिडकी मे होकर कैसे आ सकता हूँ?" इस प्रकार वे दोनो अपने-अपने ढग से लडते रहे। अन्त मे वेगडा गिर गया—

सोरठा — बेगड बड जुँझार, गढ बारिये गयो नही।
शिग समारणहार, अम्बर लगी अडावियाँ। [3]

उसी लडाई मे थोडी देर बाद हम्मीर भी काम आया।

---

१ शास्त्र मे लिखा है कि पुत्र के विना मुक्ति नही होती और स्वर्ग की प्राप्ति नही होती।

२ सुल्तान महमूद वेगडा ने १४९० ई० में सोमनाथ पर चढाई की थी।

३ वेगडा बडा लडवैया था—वह बारी (खिडकी) मे होकर गढ मे नही गया—उसके सीग आकाश तक जा लगे थे।

सोरठा— बहेलो आव वीर सखासे सामैया तणी ।
होलोभ्या हम्मीर, भाल अणिए भीमाउत[1] ॥ १ ॥
पाटण[2] आव्यां पूर, खल्हलता[3] खांडातणा ।
मेसे[4] मांही सूर भेंसासण सो[5] भीमउत ॥ २ ॥
वेल्य ताहरी वीर, आवी उभाटी नहीं ।
हाकम तणी हमीर, वेलड हती भीमउत[6] ॥ ३ ॥
अंत आसरणी वाय अगजा अणसारो थयो ।
कम तोय कुम हेवाय भरतो आवे भीमउत[7] ॥ ४ ॥
वन कांटसा वीर, जीवीमे जोया थयां ।
भांगो भलग हमीर, माग्यो मोरी भीमउत[8] ॥ ५ ॥[9]

---

१ हे भाई सामया की सहायता के लिए जल्दी आना। तुम शत्रुओं को अपने भाले की नोक से इस तरह छेद दो जैसे समुद्र तरंगों को हे भीम पुत्र!

२ जिस पटटण ३ खड़खड़ाते हुए।

४ सेल चलाता था ५ मस्त भैंसे के समान।

६ हे वीर, हम्मीर, तुम उस समय प्रबल प्रवाह के समान आगे ही बढ़ते रहे और शत्रु सेना रूपी चट्टान से टकरा कर वापस नहीं लौटे हे भीम पुत्र।

७ यद्यपि तुम्हारे शरीर की हालत जलनी [अनन्त छिद्रो वाली] जैसी हो गई परन्तु फिर भी तुम्हारे कदम तुम्हारे कुल की प्रतिष्ठा के अनुकूल आगे ही बढ़ते थे हे भीम पुत्र!

८ हे भीम पुत्र वीर हम्मीर, जो लोग जीवित रहे उन्होंने कांटों का वन देखा। प्राण के साथ तुम को तो उन्होंने पहले ही खो दिया था।

९ Bombay Gazetteer vol viii Kathiawar p 451. में दो पद्य और दिए हैं —

जोडा पण जोडाविया साजो साज सधीर ।
महेरानो माने नहीं हारे अमाभो हमीर ॥
सांकर भाखर पड रहे, जाहि गयो सब नीर ।
मेरे तेरे मिलणकू हा राही हम्मीर ॥

एभल वाला का पुत्र चाँपा उस समय जूनागढ के पास ही जैतपुर का राजा था। वह भी इसी युद्ध मे मारा गया था। उसके नाम से मुसलमान बहुत डरने लगे थे [१] —

"ऐ बादशाह, तुम नि शक मत रहो कि वह फूल [२] अब नही रहा है, इस फूलो की टोकरी मे फिर कोई चपा निकल सकता है, एभल का पुत्र।"

एक दूसरे भाट का कहना है कि महमूद बेगडा के समय मे राणपुर में राणजी नामक गोहिल राठौर राज्य करता था। वह गोमा और भादर नदी के सगम पर एक किले मे रहता था। उसी स्थान पर अजीम खाँ ऊदाई [3] द्वारा बनाई हुई सुन्दर इमारत अब तक विद्यमान

---

१ बहुत से शक्तिशाली मुसलमान सरदारो ने महमूद गजनवी का अनुकरण करते हुए सोमनाथ पर आक्रमण किये थे। कहते हैं कि अमदाबाद का महमूद बेगडा ही अन्तिम सुल्तान था जिसके बाद सोमनाथ पर किसी ने चढाई नही की। इस अवसर पर लाठी के गोहिल ठाकुर ने सुल्तान के रोकने का निष्फल प्रयत्न किया। महमूद ने उसको मार कर उसका ग्राम अपने अधिकार मे कर लिया और वही एक मन्दिर की जगह मसजिद बनवा दी। बाद में होल्कर राणी अहिल्या बाई ने दूसरा मन्दिर बनवा कर महादेव की स्थापना की। [कर्नल वाकर की रिपोर्ट के आधार पर]

२ यहाँ चपा फूल और चम्पा सरदार मे अभिप्राय है—श्लेष देखने योग्य है।

३ अजीमखाँ मुसलमान सरकार का एक अफसर था। उसने राणपुर का सुन्दर किला बनवाया और इसके अतिरिक्त अहमदाबाद मे उसने महाविद्यालय के निमित्त भी एक विशाल भवन बनवाया था (१६३० ई०) [बाद मे यह इमारत जेल के काम में ली जाने लगी और इस प्रकार इसका अपमान हुआ] उसने और भी इतनी अधिक इमारतें बनवाईं कि उसका उपनाम उदेई पड गया। उदेई एक सफेद चींटी का नाम है जो एक जगह से अपना घर बनाए बिना आगे नही बढ़ती।

सोरठा—वहेला श्राव वीर सलाते सामया तणी ।
होसोलवा हम्मीर, भाल भरणिए भीमाउत [1]॥ १ ॥
पाटण [2] धार्म्यां पूर, खल्हसता [3] खांडातणा ।
सेसे [4] सोही मूर, भैंसायरण सो [5] भीमउत ॥ २ ॥
वेल्य सागरी वीर, धावी ऊवाटी मही ।
हाकम तणी हमीर, भेखड हली भीमउत [6] ॥ ३ ॥
घत घालणी थाय मंगजो भरणसारो थयो ।
कम सोय कुल हेवाय मरतो भावे भीमउत [7] ॥ ४ ॥
वन कांटला वीर, जीवीने जोया थया ।
भांग्यो भसम हमीर, भाम्यो मोरी भीमउत [8]॥ ५ ॥[9]

---

१ हे भाई सामया की सहायता के लिए जल्दी श्राना । तुम शत्रुश्रों को अपने भाले की नोक से इस तरह खदेड दो जैसे वायु तरंगों को हे भीम पुत्र ।

२ शिव पट्टण ३ खड़खड़ाते हुए ।

४ शेष धमाता था ५. मस्त भैंसे के समान ।

६ हे वीर, हम्मीर, तुम उस समय प्रबल प्रवाह के समान आगे ही बढ़ते रहे और शत्रु सेना रूपी चट्टान से टकरा कर वापस नहीं लौटे हे भीम पुत्र ।

७ यद्यपि तुम्हारे शरीर की हालत चलनी [श्रमन्त छिद्रा वाली] जैसी हो गई परन्तु फिर भी तुम्हारे कदम तुम्हारे कुल की प्रतिष्ठा के अनुकूल आगे ही बढ़ते थे हे भीम पुत्र ।

८ हे भीम पुत्र और हम्मीर जो लोग जीवित रहे उन्होंने काँटों का वन देखा । आग में भस्म तुम को तो उन्होंने पहले ही लो दिया था ।

९ Bombay Gazetteer vol. viii Kathiawar p 451. में दो पद्य और दिए हैं —

घोड़ा घणा लोडाविया लावो साम घजैर ।
महेरामो मावे नही हाम श्रवाडी हमीर ॥
कांकर पाथर पर पड़े थाहि गयो सब मीर ।
मेरे मैरे भिमणड़ू हा राखी हम्मीर ॥

सजवाया और सेवक के साथ चलदी। जब वे अहमदाबाद के पास पहुँचे तो राणजी के आदमियो ने रथ को पहचान लिया और उसके पास गए। वह नौकर उनको देखकर नौ दो ग्यारह हो गया और राणजी के मनुष्य रथ को राणजी के डेरे पर लिवा लाए। जब राणजी ने ठकुराणी से वहाँ आने का कारण पूछा तो उसने पूरा विवरण कह सुनाया और निशानियाँ निकाल कर दिखा दी। अब राणजी को जान पडा कि उनके साथ धोखा हुआ।

उसके थोडी ही देर बाद बादशाह ने कहला भेजा कि ठकुराणी को यहाँ भेजो, यदि तुम इसमे आनाकानी करोगे तो मै बलपूर्वक उसको ले आऊँगा। गोहिल सरदार ने अस्वीकार कर दिया और इस पर लडाई शुरू हुई। थोडी ही देर बाद राणजी को यह बात मालूम हो गई कि वह टिक न सकेगा इसलिए उसने चालाकी से काम लिया और एक चारण की लडकी की महायता से, जो ठकुराणी के साथ रहती थी, अपनी स्त्री को सुरक्षित स्थान पर ले आया।

चारण की लडकी कोई साधारण स्त्री न थी वरन् वह स्वय शक्ति का अवतार थी। वह उमेटा के दूदा चारण की लडकी थी। एक बार जब राणजी ने उस प्रदेश पर कर उगाहने के लिए चढाई की थी तब उनको उसकी शक्ति का परिचय मिला था। ऐसा हुआ कि बडे जोर की आँधी और वर्षा आ जाने के कारण राणजी अपने घुडसवारो और अन्य साथियो से बिछुड कर उमेटा जा निकले। वे अकेले ही थे, पानी पीने के लिये कही ठिकाना न था, इतने ही मे उन्हे एक लडकी दिखाई दी और उन्होने उसे पानी पिलाने के लिए कहा। वह लडकी जहाँ खडी थी वही खडी रही और वही से उसने अपना हाथ इतना बढाया कि वह राणजी तक (कुछ दूरी पर) पहुँच गया और उनको पानी का गिलास मिल गया। यह चमत्कार देखकर राणजी घोडे से नीचे उतर गए और उस लडकी की प्रदक्षिणा करके चरणो मे गिर पडे। राजा को चरणो मे पडा देखकर उस लडकी ने, जिसका नाम राजबाई था, कहा, "वरदान

है। कहते है कि मारवाड़ के राजा के दो लड़कियाँ थीं। जिनमें से एक तो राणजी को ब्याही थी और दूसरी बादशाह को। एक बार बेगम और राणजी की ठकुराणी दोना हा अपने पीहर गई हुई थी। वहाँ पर बेगम ने अपनी बहिन को अपने साथ भोजन करने के लिए कहा तब गोहिल राणी ने बहाना करके उत्तर दिया 'तुम्हारा विवाह बादशाह के साथ हुआ है और मेरे स्वामी उनके पटावत हैं इस कारण मैं तुम्हारे साथ बैठकर भोजन करने योग्य नहीं हूँ। इसी प्रकार उसने और भी बहुत से बहाने बनाए परन्तु उसकी बड़ी बहिन ने उसका हाथ पकड़ कर बहुत आग्रह किया तब उसने क्षमा माँगते हुए कहा तुम्हारा विवाह एक मुसलमान के साथ हुआ है इसलिए यदि मैं तुम्हारे साथ भोजन करूँ तो जातिच्युत हो जाऊँ। इस पर बेगम बहुत नाराज हुई और अपने मन में उसको किसी तरह अहमदाबाद बुलवा कर उसके साथ भोजन करने का संकल्प किया।

इसके बाद बेगम राजधानी को लौट गई। जब राणजी गोहिल अपने काम पर अहमदाबाद उपस्थित हुए तो बेगम ने अपने पीहर की कथा बादशाह का कह दी और अपनी बहिन को वहाँ बुलवाने का आग्रह किया। उन्हीं दिनों राणजी ने अपने एक खास नौकर को अप्रसन्न होकर निकाल दिया था। बेगम ने उसको अपनी सेवा में रख लिया और ठकुराणी के पास जाने को कहा। नौकर ने कहा कि ठाकुर के हाथ का पत्र देखे बिना ठकुराणी कभी न आवेगी। इस पर बादशाह ने एक दिन राणजी से उनकी तलवार देखने के लिए माँगी दूसरे दिन साँडा और तीसरे दिन उनका भुजबन्ध। यह सब लेकर उसने राणजी के निकाले हुए नौकर को दे दिये और ठकुराणी के पास जाने को रवाना किया। नौकर ने राणपुर पहुँच कर ठकुराणी से कहा 'आप जानती ही हैं कि मैं ठाकुर साहब का प्रधान सेवक हूँ। राणजी ने मुझे आपको बुलाने भेजा है और यह तीन निशानियाँ भेजी हैं। उन्होंने यह कहा है कि यदि आप उनकी आज्ञा न मानेगी तो वे आपको छोड़ देंगे इसलिए अभी प्रस्थान कर दीजिए। यह सुनकर ठकुराणी ने अपना रथ

सजवाया और सेवक के साथ चलदी । जब वे अहमदाबाद के पास पहुँचे तो राणाजी के आदमियो ने रथ को पहचान लिया और उसके पास गए। वह नौकर उनको देखकर नौ दो ग्यारह हो गया और राणाजी के मनुष्य रथ को राणाजी के डेरे पर लिवा लाए। जब राणाजी ने ठकुराणी से वहाँ आने का कारण पूछा तो उसने पूरा विवरण कह सुनाया और निशानियाँ निकाल कर दिखा दी । अब राणाजी को जान पडा कि उनके साथ धोखा हुआ ।

उसके थोडी ही देर बाद बादशाह ने कहला भेजा कि ठकुराणी को यहाँ भेजो, यदि तुम इसमे आनाकानी करोगे तो मै बलपूर्वक उसको ले आऊँगा । गोहिल सरदार ने अस्वीकार कर दिया और इस पर लडाई शुरू हुई । थोडी ही देर बाद राणाजी को यह बात मालूम हो गई कि वह टिक न सकेगा इसलिए उसने चालाकी से काम लिया और एक चारण की लडकी की महायता से, जो ठकुराणी के साथ रहती थी, अपनी स्त्री को सुरक्षित स्थान पर ले आया ।

चारण की लडकी कोई साधारण स्त्री न थी वरन् वह स्वय शक्ति का अवतार थी । वह उमेटा के दूदा चारण की लडकी थी । एक बार जब राणाजी ने उस प्रदेश पर कर उगाहने के लिए चढाई की थी तब उनको उसकी शक्ति का परिचय मिला था । ऐसा हुआ कि बडे जोर की आँधी और वर्षा आ जाने के कारण राणाजी अपने घुडसवारो और अन्य साथियो से बिछुड कर उमेटा जा निकले । वे अकेले ही थे, पानी पीने के लिये कही ठिकाना न था, इतने ही मे उन्हे एक लडकी दिखाई दी और उन्होने उसे पानी पिलाने के लिए कहा । वह लडकी जहाँ खडी थी वही खडी रही और वही से उसने अपना हाथ इतना बढाया कि वह राणाजी तक (कुछ दूरी पर) पहुँच गया और उनको पानी का गिलास मिल गया । यह चमत्कार देखकर राणाजी घोडे से नीचे उतर गए और उस लडकी की प्रदक्षिणा करके चरणो मे गिर पडे । राजा को चरणो मे पडा देखकर उस लडकी ने, जिसका नाम राजबाई था, कहा, "वरदान

माँगो। राणजी ने कहा मैं यही वरदान माँगता हूँ कि जब कभी मुझ पर आपत्ति आवे और मैं तुमको याद करूँ तो तुम मेरी सहायता करो। राजबाई ने कहा ऐसा ही होगा। इसी के अनुसार जब राणजी महमदाबाद में उपर्युक्त विपत्ति में फँस गए तब उन्होंने शक्ति को याद किया और उस संकट से बच निकले। राणपुर लौटकर उन्होंने राजबाई के लिए अपने किले में एक मन्दिर बनवाया और उन्हें अपनी कुलदेवी मानकर उस मन्दिर में उनकी एक मूर्ति स्थापित की।

इन घटनाओं के बाद ऐसा हुआ कि एक बूढ़ा मुसलमान स्त्री और उसका पुत्र जो मक्का की यात्रा के लिए जा रहे थे एक रात के लिए राणपुर में ठहरे। अपने नित्य के नियमानुसार लड़के में बड़े तड़के ही उठ कर जोर से बाँग लगाई। इस पर कुछ ब्राह्मणों ने गोहिल से जाकर कहा इस समय इस मुसलमान ने जो बाँग लगाई है उसका अर्थ यह है कि इस स्थान पर म्लेच्छों का राज्य हो। यह सुनकर गोहिल क्रोध से लाल हो गया बुढ़ी स्त्री व उसके लड़के को पकड़वा मँगाया और उनसे पूछा कि मेरे दरवाजे पर तड़के ही बाँग मारने से तुम्हारा क्या अभिप्राय है? स्त्री ने बहुत कुछ क्षमा माँगी और प्रार्थना की कि इस बाँग से राजा के किसी प्रकार के अनिष्ट का अभिप्राय न था परन्तु राणजी इससे सन्तुष्ट न हुए और उन्होंने तलवार से मुसलमान लड़के का वध कर डाला। इस पर बुढ़िया यात्रिणी ने महमदाबाद लौट कर सुल्तान से फरियाद की। महमूद बेगड़ा ने बुढ़ी स्त्री का पूरा हाल अपने अमीरों को सुनाया परन्तु वे इससे कुछ भी प्रभावित न हुए और गोहिल से लड़ाई न करना ही उन्होंने उचित समझा। अन्त में स्वयं बादशाह का भानजा मम्मदशाह जिसका उसी दिन विवाह हुआ था राणपुर जाने के लिए तैयार हुआ। बादशाह व उसके दरबारियों ने उसको न जाने के लिए बहुत कुछ समझाया बुझाया परन्तु उसने न मानी और अल्लाह के वास्ते लड़ने का दृढ़ निश्चय प्रकट किया। वह अपनी सेना लेकर धन्धुका तक पहुँचा तो राणजी भी उसको आगे ही तैयार मिला और दोनों दलों में घमासान युद्ध हुआ। लड़ाई बहुत लम्बी चली और

राणजी लगातार पीछे हटता रहा यहाँ तक कि वह ठीक अपने नगर राणपुर के द्वार पर ही जा पहुँचा। वहाँ से उसने ठकुराणियों के पास यह सन्देश भेजा था कि जब वे उसके राजछत्र को गिरता हुआ देखे तो मुसलमानो की चगुल से बचने के लिए अपने आपको नष्ट करले। सयोगवश युद्ध के बीच ही मे छत्रवाहक पानी पीने के लिए नीचे बैठा और ठकुराणियो ने छत्र को नीचा होते देखकर समझा कि उनका स्वामी वीरगति को प्राप्त हो गया है इसलिए वे सब की सब किले के गहरे कुए मे पडकर मर गई। इस दुर्घटना के बाद भी राणजी ने युद्ध चालू रक्खा परन्तु वह अन्त मे राणपुर के द्वार पर ही मारा गया तब अपने वीर और युवा नायक भण्डारी खाँ के निधन के दुःख से दुखी मुसलमानो ने राणपुर के दुर्ग मे प्रवेश किया। इसके पश्चात् महमूद बेगडा ने मूली के हालाजी पँवार को राणपुर प्रदान कर दिया। हालाजी राणजी की बहिन का पुत्र था।

हालाजी की बात इस प्रकार है—जट्टो का प्रधान उस समय सिंध मे रहता था। उसके सुमरोबाई नाम की एक बहुत ही सुन्दरी लडकी थी जिसको सिन्ध का बादशाह बलपूर्वक अपने हरम मे ले जाना चाहता था इसलिए लगभग सत्रह सौ जट्ट सिन्ध से भाग कर मूली आए जहाँ सोढा पँवार वश के लखधीरजी और हालाजी नामक दो भाई राज्य करते थे। जट्टो ने उनसे कहा, "निस्सन्देह सिन्ध का बादशाह हमारा पीछा करेगा, यदि आप लोग हमारी रक्षा कर सके तो हम यहाँ रहे अन्यथा हम लोग आगे चले जावे।" पँवारो ने शपथ लेकर कहा, "जब तक हमारे धड पर शिर है तब तक कोई भी तुम्हे हानि नही पहुँचा सकता।" इसलिए जट्ट मूली मे ही रह गए।

साथ ही सिन्ध के बादशाह की सेना भी आ पहुँची। यह सेना बहुत बडी और बलवती थी इसलिए पँवारो ने सोचा कि हमारे पास किला तो है नही, ऐसी दशा मे पैर टिकना कठिन है अत वे मूली के पश्चिम मे पन्द्रह कोस की दूरी पर माँडव नामक पहाडो पर चले गए और उसी

जंगल में अपना व्यूह रच कर तैयार हो गए। बादशाह की सेना भी उनका पीछा करती रही और कितने ही दिनों तक लड़ाई चालू रही। अन्त में पँवारों का एक भाई शत्रुओं से जा मिला और उनको उस एक मात्र कुए का पता बता दिया जहाँ से लाकर पँवार पानी पीते थे। मुसलमानों ने एक गाय का सिर काट कर उस कुए में डाल दिया। अब पँवारों को सन्धि करने के लिए बाध्य होना पड़ा और बड़े भाई लखधीरजी ने जट्टों की कन्या की एवज जिसकी रक्षा करने का उन्होंने वचन दिया था अपने छोटे भाई हामाजी को मुसलमानों के सिपुर्द कर दिया। वह कन्या वहाँ से भग कर धनोद गई और वहीं पर जीवित ही मिट्टी में गड़ कर शरीर छोड़ दिया। धनोद में अब भी उसकी छतरी मौजूद है।

लखधीरजी ने अहमदाबाद जाकर गुजरात के बादशाह से सहायता माँगी इस पर वहाँ से सेना ने प्रस्थान किया। भुज देश[1] में युद्ध हुआ

---

[1] उस समय कच्छ की गादी पर निम्नलिखित वंशावली का दसवाँ राजा जाम हमीरजी राज्य करता था—उसकी राजधानी हुबाम में थी और भुज उसके बाद में बसा था:—

१ जाम लाखा जाडाणी (लाखाजी) ११४७ ई –११७५ ई
|
२ रायधणजी ११७५ ई –१२१५ ई
|
- देदाजी
- ३ ओठाजी १२१५ ई १२५५ ई (इनके वंशज कच्छ के राजा हैं)
  |
  ४ गाहाजी १२५५ ई –१२८५ ई
  |
  ५ वेहणजी १२८५ ई –१३११ ई
  |
- गजणजी (इनके वंशज जामनगर के राजा हैं)
  |
  हालाजी
  |
  रायधणजी
  |
- होथीजी

जिसमे सिन्धियो की हार हुई और हालाजी मुक्त होकर राजधानी को लौटे।

हालोजी परमार मुसलमानी धर्म मे परिवर्तित हो गये थे इसलिए सुल्तान ने उनको बहुत से परगने देना चाहा परन्तु उन्होने लेने से नाँही करदी और कहा, "मेरे परिवार के लोगो को यह बात विदित नही है कि मेरी क्या दशा हुई है इसलिए मुझे राणपुर शहर जो ऊजड हो गया है, जो मेरे मामा राणजी गोहिल के अधिकार मे था और जिसमे हल चलवा कर बादशाह ने नमक डलवा दिया है—वही नगर मुझे दे दीजिये।" सुल्तान ने यह प्रार्थना स्वीकार करली तब हालोजी ने कहा, "इस नगर का मुझे ताम्रपट्ट मिलना चाहिये।" इस पर बादशाह ने कहा, 'तुम्हारे धर्म-परिवर्तन की बात छुपी नही रह सकती इसलिए पट्टे की कोई आवश्यकता नही है।"

मलधीरजी ने अपने धर्म एवं पूर्वजों की जागीर भूमि की रक्षा की। उनकी मृत्यु के विषय में यह कथा प्रचलित है—

साएद के ठाकुरों ने राणीसर नामक गाँव एक चारण को माफी में दे दिया था। उसी चारण के वंश में गढवी रलिया नाम का पुरुष हुआ जो अपनी बुद्धिमत्ता और हंसोड़पन के लिए प्रसिद्ध था। उन दिनों देश में लूटमार का बड़ा जोर था परन्तु इस चारण के गाँव की ओर कोई आँख भी न उठाता था इसलिए आसपास के गाँवों वाले अपनी अपनी धन-सम्पत्ति इस गाँव में ला ला कर रखने लगे। जब यह बात थोड़ी मुगल नामक एक मुसलमान को ज्ञात हुई तो वह राणीसर को लूटने के लिए आया। गाँव को अच्छी तरह लूटपाट कर आक्रमणकारियों ने गढवी रलिया उसके स्त्री बच्चों व बहुत से अन्य गाँव वालों को बाँध लिया और अपने साथ ले गए। जब उन लोगों ने चल कर पहला मुकाम किया तो आधी रात के समय रलिया रोने पीटने लगा। मुसलमानों ने उसको रोने का कारण पूछा तो उसने कहा मेरे रोने का एक विशेष कारण है और वह मैं तुम्हारे सरदार ही को बता सकता हूँ। जब थोड़ी मुगल के नौकरों ने यह बात उस तक पहुँचाई तो वह स्वयं आया और रलिया से पूछताछ करने लगा। तब गढवी ने कहा यदि आप मुझको और मेरे परिवार को मुक्त करदें तो मैं बदले में आपको मुंह माँगा धन दे सकता हूँ। थोड़ी ने पूछा 'अब तेरे पास धन कहाँ है ?' उसने कहा मेरे ताबीज में एक कागज निकला है जिसमें उस स्थान का पता लिखा है जहाँ मेरे पिता एक बड़ा भारी खजाना गाड़ गए हैं। इस पर मुगल ने उसके साथ पाँच सौ आदमी भेज दिए और उनसे यह कह दिया कि यदि रलिया एक लाख रुपये दे दे तो उसे मुक्त कर दिया जावे। दो तीन दिन की यात्रा के बाद वे हलवद के पास टीकर के रण के किनारे पर पहुँचे तब रलिया ने एक द्वीप की ओर संकेत करके कहा 'उस द्वीप में मेरे बाप का गाड़ा हुआ धन है तुम लोग तुरन्त उस निश्चित स्थान पर आ पहुँचो। यह कह कर उसने अपने टट्टू को सरपट छोड़ दिया और बोझे से लदे हुए सारे घुड़सवार भी उसके पीछे-पीछे हो लिए

अन्त मे वह उनको एक दलदल मे ले गया। जब वे लोग उस दलदल मे अच्छी तरह फँस गए तो वह खुद वहाँ से किसी तरह भाग निकला और सीधा वडवन पहुँचा। वहाँ पहुँच कर उसने राजा से कहा, "मै राजपूतो का चारण हूँ और मेरा परिवार विपत्ति म फँसा हुआ है आप उसका छुटकारा कराइये।" राजा उसकी सहायता के लिए तैयार हो गया और उसके मुसलमानो के विरुद्ध चढाई करते-करते ही उसने मूली के सोढो से भी सहायता के लिए प्रार्थना करने को कहा। इधर यह राजा रवाना हुआ और उधर रलिया ने मूली पहुँच कर लखधीरजी को अपनी दुःख गाथा सुनाई। वे भी तुरन्त ही सेना लेकर रवाना हो गए। नलकाँटा के पास पनगसर तालाव पर वोडी मुगल से उनकी मुठभेड हुई। उस समय तक वडवन का राजा आकर नही पहुँचा था इसलिए उन्ही को पूरा लोहा लेना पडा। अन्त मे बोडी के सब आदमी मारे गए और घोडे से बचे खुचे साथियो के साथ उसको भागना पडा परन्तु भागते समय वह एक ब्राह्मण की लडकी को भी अपने घोडे पर बैठाकर ले गया। लखधीरजी भी उसके पीछे चल दिए और लगभग एक मील तक चले गए। मुगल ने पीछे फिर कर देखा कि लखधीरजी अकेले है तो उसने अपने घोडे को मोडा और लखधीरजी पर वार किया परन्तु निशाना खाली गया। लखधीरजी ने भी निशाना मारा परन्तु चूक गए। दोनो के घोडे भडक कर भाग गए और वे नीचे गिर पडे। फिर उठकर मल्ल-युद्ध करने लगे। पहले तो लखधीरजी नीचे पडे परन्तु ब्राह्मण कन्या की सहायता से उन्होने मुगल को दबा लिया। अब उस लडकी ने लखधीरजी को अपनी कटार को काम मे लेने का सकेत किया। ज्योही उन्होने अपनी कटार निकाल कर मुगल के मारी त्योही उसने (मुगल ने) भी अपना शस्त्र उनके पेट मे घुसेड दिया। इस प्रकार दोनो ही नष्ट हो गए। इसके बाद लखधीरजी के साथियो ने बोडी के डेरे को खूब लूटा और अपने स्वामी के मृत शरीर को ढूँढ कर वही उसका दाह सस्कार करके उसी स्थान पर एक पालिया (स्मृति चिह्न) खडा कर दिया। ब्राह्मण कन्या को राणीसर ले जा कर उसके पिता को सौप दिया।

मूलों के परमार १ मास भी अपनी वीरता और साहस के लिए

१ सोढा परमारों की वंशावली:—

१ लखवीरजी (मूर्जी) सिंध के पारकर से आए

२ रामोजी — वाघजी (मलार)

३ भोजराजजी — मूलजी (मलाड)

४ सामन्तसिंहजी

५. लखवीरजी — हामोजी [बाद में मुसलमान होगए, राधनपुर मिला]
इन दोनों भाइयों ने सिंध के जट्टों को आश्रय दिया।

६ भोजराजजी [द्वितीय] — संतोजी — बीसोजी

७ चाचोजी [इसने सिंधकपुर के भायाजी को मारा था]

८ रतनजी — रामोजी

[रतनजी ने अमीर खाँ गोरी को मार कर उसके राज्य पर अपना थानेदार नियुक्त कर दिया था परन्तु उसके मित्रों ने थानेदार को मार दिया और उसके पुत्र को भी मार दिया परन्तु बाद में भी राज्य पवारों का ही रहा]

९ कर्णजी

१ जगदेवजी

११ रामसिंहजी

प्रख्यात हैं। उन्होने जट्टो का रक्षण किया था इसलिए अब भी वे लोग उनका सम्मान करते हैं। लखधीरजी और हालोजी का एक छोटा भाई और था जो भी हालोजी की तरह मुसलमान हो गया था। उसको वोताद का चौबीस गाँवो का परगना मिला था और यह परगना उसकी कुछ पीढियो तक उन्ही लोगो के अधिकार मे रहा। पिछले दिनो ये लोग गुजरात मे धोलका के तालुकदारो के नाम मे प्रसिद्ध थे।

---

१२ रायसिहजी
|
१३ रतनजी [द्वितीय]
|
१४. कल्याणसिंहजी
|
१५ मु जोजी
|
१६ रतनजी [तृतीय]
१७ कल्याणसिहजो [द्वितीय] उपनाम बापजी
१८ रामोभा [ई० स० १८०७-८ में जबकि कर्नल वाकर काठियावाड़ में कर सम्बन्धी खोज कर रहे थे]
|
१९ वखतसिंहजी [२०] सुरतानजी

मूली का क्षेत्रफल १३४ वर्ग मील है—इसके नीचे १९ ग्राम हैं जिनमें लगभग २० हजार मनुष्य वसते हैं। यहाँ की कुल आय पचास हजार रुपया वार्षिक है जिसमे से अंग्रेज सरकार व जूनागढ के नवाव साहव को कुल मिलाकर रु० ९,३५४) वार्षिक देना पडता है।

प्रकरण छठा

महमूद बेगड़ा (चालू)

सिन्ध की चढ़ाई के बाद महमूद ने जगत (द्वारिका) और बेट द्वीप के सरदारों पर चढ़ाई की इसका कारण यों बतलाते हैं कि उस समय एक महान बड़ा दार्शनिक (मौलाना मुहम्मद समरकंदी) अपने देश ओर्मज जाने के लिए एक जहाज में यात्रा कर रहा था। जब वह जहाज जगत द्वीप के बन्दर पर आकर ठहरा तो दुष्ट ब्राह्मणों ने काफिरों से सलाह करके उसको लूट लिया। बड़ी कठिनता का सामना करने के बाद मुसलमानों ने जगत और बेट के दोनों द्वीपों पर अधिकार कर लिया और वहाँ के राजपूत सरदार राजा भीम को भी कैद कर लिया। इसके बाद उक्त विद्वान् के कहने से उसको (भीम को) अहमदाबाद ले जाया गया और शहर में चारों ओर घुमा कर मार दिया गया जिससे भविष्य में और लोगों को शिक्षा मिल जावे और वे ऐसा कार्य करने का दुःसाहस न करें।[1]

इस घटना के बाद ही कुछ मुसलमान सरदारों में महमूद को पदभ्रष्ट

---

[1] सुल्तान ने द्वारका का मन्दिर तुड़वाकर मसजिद बनवाने के लिए फौज रखी। वह तीन चार मास तक वहीं रही। इसके बाद बेट पर चढ़ाई करने के लिए वाहन (जहाज) तैयार कराए गये। राजा भीम ने बाईस बार जब किया अन्त में महमूद का बेड़ा आ उतरा और बहुत से राजपूत मारे गए। एक छोटी सी नाव में बैठ कर भागता हुआ भीम पकड़ लिया गया।

करने और उसके पुत्र मुजफ्फर को गद्दी पर बैठाने के लिए एक षडयन्त्र रचा।[1] बादशाह ने उन षडयन्त्रकारी उमरावो का ध्यान बटाने और उनको काम मे लगाने के अभिप्राय से उसी समय चम्पानेर पर चढाई करने के विषय में उन से मन्त्रणा की। परन्तु वे उसकी बातो में न आए और न उसके कार्य मे सहायता देने के लिए ही तैयार हुए इसलिए चम्पानेर कीचढाई का विचार कुछ समय के लिए स्थगित करना पडा।

---

१ अपने राज्य को बहुत बढा हुआ देख कर महमूद ने उसके प्रबन्ध की यह व्यवस्था की कि वह स्वय तो मुस्तफाबाद (जूनागढ) मे रहने लगा और राज्य के इस प्रकार विभाग किए —

बेट और द्वारका तो फर्हतउलमुल्क को दिए, सानगढ को ईमादुलमुल्क के आधीन कर दिया, गोधरा किवामुलमुल्क के अधिकार मे और अहमदाबाद खुदावद खान के हाथ मे रहा।

इन चारो सरदारो मे से खुदावद खान शाहजादा मुजफ्फर का उस्ताद था। उसने रायरायान और दूसरे सरदारो से मिलकर रमजान महीने की ईद के दिन ईमादुलमुल्क को सलाह करने के लिए अपने पास बुलाया। उसने अपनी फौज अहमदाबाद भेजी परन्तु शाहजादे का गद्दी पर बैठने मे सफलता न मिली। अन्त मे, केशर खाँ नामक एक घरू नौकर ने सारा भेद सुल्तान को कह सुनाया वह तुरन्त गोघेरा गया और वहाँ से जहाज मे बैठ कर खम्भात आया। षडयन्त्र-कारी भी उसकी अगवानी करने के लिए मुजफ्फर के साथ आ पहुँचे। वही पर दरबार हुआ, दरबार मे महमूद ने कहा, 'अब मुजफ्फर सयाना हो गया है और बहुत से सरदार भी उसको गद्दी पर बिठाना चाहते हैं, इसलिए मुझे अब मक्का चले जाने की इजजात दी जावे।'' परन्तु ईमादउलमुल्क ने उससे अहमदाबाद चलने की प्रार्थना की। वह निधडक अहमदाबाद चला गया परन्तु यह कह दिया कि जब तक सरदार लोग उसके हज (मक्का) जाने का प्रबन्ध न कर देंगे तब तक वह कुछ भी नही खाए-पिएगा। सरदार लोग उसके भेद को समझ गए और ईमादउलमुल्क के कहने से बुढ्ढे निजमउलमुल्क ने सलाह दी कि, चम्पानेर पर चढाई की जावे और वहाँ की लूट का माल हज मे खर्च किया जावे। बाद मे ईमादउलमुल्क ने सुल्तान के आगे सब भेद प्रकट कर दिया।

बाद में १४८२ ई० में उसने इस चढ़ाई की तयारियाँ की परन्तु उसी समय उसका ध्यान सूरत के दक्षिण में बलसाड़ के जहाजियों की ओर गया जिनका प्रभाव समुद्र में इतना अधिक बढ़ गया था कि वे न केवल व्यापार ही मे बाधा उत्पन्न करते थे वरन् उनकी ओर से राज्य पर आक्रमण होने का भी भय होने लगा था। अब महमूद हमारे सामने एक जहाजी कप्तान के रूप मे आता है। उसने खम्भात मे एक बेड़ा इकट्ठा किया जिसमे तीरंदाज बन्दूक चलाने वाले और तोपें चलाने वाले आदि सभी लोग थे। यह बेड़ा जहाजों मे चढ़ कर रवाना हुआ। शत्रुओं के पैर उखड़ गए और वे भाग निकले महमूद के बेड़े ने उनका पीछा किया कुछ घण्टे युद्ध भी हुआ। बहुत से मल्लाह और उनके बाहन पकड़ कर कैद कर लिए गए। इसके बाद उसी वर्ष के अन्त मे आखिर चम्पानेर पर भी चढ़ाई कर ही दी। इस चढ़ाई का वर्णन करने से पूर्व यहाँ पर थोड़ा सा ईडर का वृत्तान्त भी लिख देना आवश्यक है।

नारायणदास का भाई राव भाण था। ऐसा प्रतीत होता है कि इसी राव भाण की पुत्री का विवाह महमूद के पिता मुहम्मदशाह ने अपने साथ कर देने के लिए उसको बाध्य किया था। मुसलमान इतिहासकारों ने उसका नाम बीर अथवा वीरराज लिखा है। ईडरवाड़े मे जैभारा नामक स्थान पर एक बावड़ी है जिसमे एक लेख मिलता है। इस लेख से केवल लिपि आदि का ही पता नहीं चलता वरन् नाम के विषय मे जो गड़बड़ी है वह भी दूर हो जाती है। राव के हाथ से अचानक एक गाय मर गई। इसी पाप के निवारण के अर्थ उसने एक बावड़ी बँधवाई जिसके लेख मे लिखा है 'संवत् १५३२ (ई० १४७६) के फाल्गुन की शुक्ला चतुर्थी सोमवार के दिन कामदुघा माता—जो राम श्रीराम ? पानी पीने के लिए आई थी उसको रावश्री श्री भाण बीरजी ने राम की शरण मे पहुँचा दी। इसी पाप के निवारणार्थ उन्होंने सोने की गाय का दान किया और यह जल पीने का स्थान बनवाया

भाट लोगों का कहना है कि गद्दी पर बैठते ही तुरन्त राव भाण ने अपने राज्य की सीमा को सुदृढ़ करने का कार्य आरम्भ कर दिया।

सबसे पहले उसने सिरोही के लास ग्राम पर कब्जा करके वहाँ एक पत्थर स्थापित किया जिसमे घोडे की तसवीर खुदी हुई थी। यह पत्थर अब भी रोहीडा और पोसीना ग्रामो के बीच मे मौजूद है। इसके बाद उसने नाई नदी पर राव जेठीजी की छतरी के पास दूसरा पत्थर गाड कर अपनी सीमा नियत की। फिर, उसने छप्पनपाल देश को, जो आजकल उदयपुर मे है, अपने अधिकार मे लिया। वहाँ से चलकर थाणे पर पत्थर गाडा, यह थाणा पहले 'राव का थाणा' कहलाता था और सोमा नदी पर डूँगरपुर से लगभग चार मील की दूरी पर स्थित है। वहाँ से सोमा नदी के किनारे-किनारे मालपुर और मगोडी तक आ कर उनको भी ईडर की सीमा मे ही मिला लिया और फिर कपडवणज और साबरमती तक के प्रदेश 'बावन परगनो' को भी अपने अधिकार मे कर लिया। इसके बाद तारिंगा पर कब्जा करके साबरमती को अपने राज्य की सीमा कायम की और वहाँ से फिर इस सीमा को सिरोही वाले घोडे से जा मिलाया।" इस प्रकार उसने अपने राज्य की सीमा कायम की, इससे ज्ञात होता है कि एक वडा भारी प्रदेश उसने स्वाधीन कर लिया था।

यहाँ पर जिस तारिंगा का नाम लिखा गया है वह जैन लोगो के प्रसिद्ध और पवित्र पर्वतो मे से एक है। यद्यपि इस पर्वत मे शत्रुञ्जय की सी विशालता और गम्भीरता तथा तलाजा की सी सुन्दरता नही है फिर भी ऐसा नही है कि यह आकर्षक और मनोहर न हो। कुमारपाल के बनवाए हुए श्रीअजितनाथ के चैत्य ने पर्वतश्रेणी के बीच मे एक उँचे और सपाट भूभाग का बहुत बडा हिस्सा घेर रक्खा है। जीर्णोद्धार सम्बन्धी बहुत कुछ आधुनिक हेरफेर हो जाने के बाद भी यह मन्दिर पालीताना के प्रासादो की अपेक्षा अधिक प्राचीन और पूजनीय दिखाई पडता है। इसके आसपास, बाद में बने हुए और भी छोटे-छोटे देवालय और नियमानुसार उन्ही से सम्बद्ध स्वच्छ पानी के कुंड भी विद्यमान हैं। पर्वत पर देवी तारणमाता का स्थान है। इसी माता के नाम पर इसका नाम तारिंगा पडा है। यह देवी का मन्दिर

वेणीवच्छराज जिसकी राणी नागपुत्री थी के समय का बना हुआ है। यहाँ के दृश्य को देखने से पता चलता है कि कुमारपाल ने श्री अजितनाथ की स्थापना की उससे पहले भी यहाँ पर कई इमारतें मौजूद थी। पर्वत पर चारों ओर इतना घना जङ्गल छाया हुआ है कि यदि कोई मार्ग-दर्शक साथ न हो तो यहाँ तक चढ़ कर आना अत्यन्त कठिन है और विशेषकर आक्रमणकारी शत्रु को तो यह कार्य असम्भव सा ही प्रतीत होता है। दो ही ऐसे मार्ग है जिनके द्वारा सुगमता से उस सपाट भूमि तक चढ़कर पहुँचा जा सकता है जहाँ पर मन्दिर बने हुए हैं। ये दोनों ही रास्ते दोनों ओर से सुरक्षित हैं और जिस प्रकार ईडर के प्राकृतिक कोट में जहाँ कहीं भूमि नीची रह गई है वहाँ पूरी कर दी गई है उसी प्रकार इनकी दीवारों को भी जहाँ-जहाँ पर प्रकृति ने नीची रख दी है वहाँ-वहाँ बाद में चनवा कर पूरी ऊँचाई की कर दी गई है। आसपास के तीनों शिखरों पर तीन सफेद छतरियाँ बनी हुई है। श्री अजितनाथ की यात्रा को जाता हुआ जब कोई यात्री थक कर निराश हो जाता है तो घोर अँधेरी घाटियाँ और घने जङ्गल के बीच में इन छतरियों की एक झलक उसके लिए दिन के दीपक के समान सहायक और आश्वासन देने वाली सिद्ध होती है।

सन् १४७१ ई० में महमूद शाह ने गिरनार के पास बसे हुए नये शहर मुस्तफाबाद में अपनी गद्दी कायम की और अहमदाबाद में अपने प्रतिनिधि के रूप में काम करने के लिए मुहाफिज़ खाँ नाम की उपाधि धारण करने वाले एक सत्तावान अधिकारी को नियुक्त किया। उसके पुत्र शाहज़ादा मलिक खिज़िर ने अपने पिता की अनुपस्थिति में बिना आज्ञा हो बागड़[1] और सिरोही के ठाकुरों तथा ईडर के राव भाण पर चढ़ाई कर दी और उनसे कर वसूल किया।

उस समय राव भाण चम्पानेर के रावल के साथ लड़ाई में लगा हुआ था। इस लड़ाई में राव की विजय हुई थी और उसने रावल को

---

१ यह 'बागड़' कच्छ में नहीं है परन्तु ईडर के पास का है।

कैद करके छ महीने तक ईडर मे रखा था। इस झगडे का कारण विचित्र ही बतलाया जाता है। कहते हैं कि, राव भाण शरीर मे दुबला और रग का काला था इसलिए नाटक मे किसी विदूपक ने उसका हास्य-पूर्ण अभिनय करके रावल की सभा का मनोरजन किया। राव इससे बहुत क्रोधित हुआ। कवि ने निम्नलिखित कविता रावल की स्त्री के मुँह से कहलाई है। इससे राव भाण की शक्ति का उसके शत्रु के हृदय मे कैसा आतङ्क छा गया था, यह विदित होता है—

छप्पय—जब नेवर सचरू, बडे हय खरके घूघर,
जब अलगण अधिक, अगडर सेवे भूभर,
जब ककण खलकत, पेख मन पटापहारह,
जब कु डल झलकत, गणे शत्रु खरा अगारह,
भडकत थोहड राव भाण से, करे वास अवासगर।
क्यम रमू कथ कामनी कहे, सेज सोहता रग भर ॥

अर्थात् जब मैं नेवरी (पैर का आभूषण) पहन कर चलती हूँ तो मेरा पति समझता है कि शस्त्र खडक रहे हैं, जब मैं शरीर पर और आभूषणो को पहनती हूँ तो वह उन्हे जिरह वख्तर समझता है—जब मेरे ककणो का शब्द होता है तो उसे ऐसा भान होता है कि यह तलवारों का शब्द हो रहा है और जब मेरी बालियाँ (कान का आभूषण) चमकती हैं तो उसे युद्धाग्नि सी प्रतीत होती हैं। इस प्रकार सुरक्षित महलो मे रहता हुआ भी मेरा पति राव भाण के डर से चमक उठता है, मैं कैसे उसके साथ रमण करूँ वह तो एक क्षण भी डर से मुक्त नही होता।

ईडर के भाणसर और राणीसर तालाब राव भाण और उसकी राणी के बँधवाए हुए बताए जाते हैं, इसी प्रकार वडाली दधालिया और अन्य स्थानो के तालाब भी इन्ही के बँधाए हुए हैं। भाटो का कहना है कि महमूद बेगडा ने जो चम्पानेर पर विजय प्राप्त की उसका एक मुख्य कारण राव भाण की सहायता प्राप्त होना भी था, यद्यपि किसी मुसल-

मान इतिहासकार ने इस विषय में कुछ नहीं लिखा है फिर भी उपर्युक्त झगड़े को देखते हुए ऐसा सम्भव प्रतीत होता है कि शाह की फौजों के साथ राव की सेना भी रही हो।

चम्पानेर का किला वनराज के साथी चाम्प अथवा चाँपा का बनवाया हुआ था और उसी के नाम पर इसका नाम पड़ा था। यह किला पवनगढ़ अथवा पावागढ़ के नाम से भी प्रसिद्ध है। इसके चारों ओर निरन्तर पवन के सपाटे चलते रहते हैं इसीलिए इसका यह नाम पूर्णतया सार्थक है। कालिका माता ने जिसका मन्दिर इसके शिखर पर बना हुआ है इसको अपना प्रिय निवासस्थान बनाया है और इसीलिए इसकी इतनी प्रसिद्धि है तथा बहुत से राजपूत सरदार इस पूज्य किले के अधिकारी को अपना संरक्षक तथा स्वामी मानकर सरक्षित सरदार की भाँति उसके आगे अपना शिर झुकाते हैं। गुजरात के पूर्वीय प्रान्त की ओर देखती हुई पवनगढ़ की पहाड़ी चट्टानें प्रायः असम सी दिखाई पड़ती हैं इसके किसी-किसी बाजू में सीधी और लम्बी चट्टानें भी दिखाई पड़ती है। इन चट्टानों में होकर जाने वाला इसकी चढ़ाई का मार्ग सब तरह से सुरक्षित है। दूर मदान में खड़े होकर देखने वाले को जो कृत्रिम कोट सा दिखाई पड़ता है वह वास्तव में आश्चर्यजनक गहराई तक खुदी हुई चट्टानों का स्वाभाविक रक्षा-कोट है। इसकी उत्तरी तलहटी में हिन्दू राजाओं के नगर के खण्डहर पड़े हुए हैं। वहीं पर शून्य और रेतीले जंगल में पड़े हुए दूर ही से दिखाई देने वाले गुम्बजों और टूटे फूटे मीनारों से यह भी पता चलता है कि यह नगर कभी मुसलमानों की राजधानी था और महमूदाबाद कहलाता था।

स्काटलैण्ड के प्रसिद्ध मार-वंश[1] के समान चम्पानेर के हिन्दू राजाओं का वंश भी इतना प्राचीन बतलाया जाता है कि इसके मूल का पता लगाना कठिन है। चाँपा का किला चौहानों के हाथ में कब आया

---

१ Aberdeenshire के एक जिले का नाम Mar है। बहुत प्राचीन काल में यहाँ का मर्ल प्रसिद्ध ७ अर्लों में गिना जाता था। [N S. E P 863

२ कहते हैं कि चौहाणों के मूल पुरुष चाहमान को वशिष्ठ मुनि ने अग्नि

इसकी कल्पना व्यर्थ है।[2] हिन्दुस्तान के सभी राजवशो मे से जिन्होने रण-कौशल और शूरवीरता की श्रेष्ठता प्राप्त की है उन्ही की शाखा मे से पावनगढ के पताई भी थे और वे उस श्रेष्ठता के लिए सर्वथा योग्य सिद्ध हुए, यह बात भी निर्विवाद है। हम लिख चुके हैं कि रावल गगादास ने मुहम्मदशाह का सामना किया था, अव जिसके विपय मे लिखा जावेगा वह उसका पुत्र जयसिह था। फरिश्ता ने उसको वेनीराय लिखा है और हिन्दू दन्त-कथाओ मे उसका नाम 'पताई[1] रावल' प्रसिद्ध है।

जव चम्पानेर के रावल ने सुना कि महमूद उस पर चढाई करने की तैयारियाँ कर रहा है तो एक बार क्रोध के आवेश मे आकर वह एकदम निकल पडा और वादशाह के मुल्क मे आग लगाने लगा व तलवार

पर्वत पर अग्निकुड मे से पैदा किया था। उसके वाद अजयपाल ने अजमेर वसाया और वहाँ पर अपनी राजगद्दी कायम की। उसके वशज माणिकराय ने 'साँभर के राय' की पदवी धारण की। उसके वश मे वीसलदेव प्रख्यात हुआ। इसके समय मे राजपूतो की जमीन मुसलमानो ने दवा ली थी जिसको वापस दिलाने के लिए वीसलदेव के नेतृत्व मे हिन्दुस्तान के वहुत से राजपूत इकट्ठे हुए, परन्तु गुजरात का सोलकी राजा भीमदेव (प्रथम) नही आया इसलिए उसने गुजरात पर चढाई कर दी और विजय प्राप्त करके अपने नाम पर वीसलनगर वसाया। इसी के वश मे प्रसिद्ध पृथ्वीराज हुआ था। जब शाहवुद्दीन गोरी ने इनका राज्य दिल्ली मे नष्ट कर दिया तो पृथ्वीराज के वशज वहाँ से मालवा चले आये और 'गढ़ गागरूण' मे अपनी गद्दी स्थापित की। इस गद्दी को स्थापित करने वाले का नाम खँगारसिह था। इसका वशज खीची (चहुआण) हुआ जिसने अलाउद्दीन खिलजी के विरुद्ध रणथम्भोर की लडाई मे वीरता दिखाकर प्रसिद्धि प्राप्त की। इसी के वशज पालनदेव की सरदारी मे खीची चौहान) गुजरात के पूर्वीय भाग मे आए और पावागढ़ की तलहटी मे वसे हुए चम्पानेर के राज्य को भीलो से जीता। इसके वाद क्रम से रामदेव, चाँगदेव, चाचिगदेव, सोनगदेव, पालनसिह, जिनकरण, कपु रावल, वीरधवल, शिवराज, राघवदेव, त्रिबकभूप, गगादास और जयसिहदेव हुए। इसी जयसिह को पताई रावल कहा है।

१ —'पताई' पावापति का संक्षिप्त रूप है। (ब्राउन, इण्डि० एण्टी० जि २)

धमाने लगा परन्तु बाद में अपने कुकृत्य से डर कर क्षमा माँगने लगा। महमूद जो उसकी इस कार्यवाही से और भी चिढ़ बैठा था किसी भी शर्त पर सन्धि करने के लिए तैयार न हुआ और अन्त में मुसलमानी सेना ता० १७ मार्च १४८३ ई० को कासा के पर्वत की तलहटी में आ पहुँची। स्वयं शाह भी शीघ्र ही अपनी प्रधान सेना से आ मिला। रावल जयसिंह ने एक बार फिर सन्धि के लिए प्रार्थना की परन्तु उस पर किसी ने ध्यान नहीं दिया अन्त में उसने पूर्ण साहस के साथ सामना करने का निश्चय किया। मुसलमानी सेना ने घेरा डाल दिया और राजपूतों ने उस पर हमले करना निरन्तर चालू रक्खा अन्त में एक बार तो उन्होंने इतने जोर का हमला किया कि महमूद को उनसे लड़ने के लिए विवश होकर घेरा उठा लेना पड़ा। घमासान युद्ध के बाद अन्त में हिन्दुओं को वापस हटना पड़ा और महमूद ने फिर घेरा डाल दिया। यद्यपि शत्रुओं तक खुराक और घास दाना पहुँचने के मार्गों को ध्वस्त व नष्ट करने में रावल को बहुत कुछ सफलता प्राप्त हुई परन्तु फिर भी तंग आकर उसे अपने पुराने सहायक मालवा के सुल्तान से सहायता के लिए प्रार्थना करनी ही पड़ी। ग्यासुद्दीन ने सेना इकट्ठी करके रावल की सहायता करने की इच्छा प्रकट की परन्तु जब महमूद ने उस पर चढ़ाई कर दी तो उसने अपना विचार स्थगित कर दिया। इसके बाद शाह वापस हो चम्पानेर लौट आया और अपना घेरा कायम रखने का आशय प्रकट करते हुए वहीं पर एक मसजिद भी बनवा ली। अन्त में मुसलमान लोग किले के इतने नजदीक आ पहुँचे कि उन्होंने उस गुप्त मार्ग का भी पता लगा लिया जिसमें होकर राजपूत लोग नहाने धोने व अपना नित्य कर्म करने के लिए बाहर जाया करते थे। इतना पता लगते ही उन्होंने किले के पश्चिम की दीवार को तोड़ डाली और १७ नवम्बर १४८४ ई० को उस गुप्त मार्ग पर अपना कब्जा कर लिया। इतने ही में मलिक अय्याज सुल्तानी ने जो बाद में पुर्तगालों के साथ समुद्री लड़ाई में प्रख्यात हुआ था पश्चिम की दीवार पर चढ़ने के लिए सीढ़ियाँ लगायीं और अन्दर उतर गया। अय्याज को बाहर निकालने के लिए राजपूतों ने पूरा

जोर लगाया परन्तु सफल न हुए, स्वय महमूद शाह फौज लेकर उसकी सहायता को आ पहुँचा और मुसलमानो की जीत का झण्डा, जिसमे द्वितीया का चन्द्रमा वना हुआ था, चम्पानेर के किले पर फहराने लगा तथा रावल के महलो पर कालिका के कोप के फलस्वरूप मुसलमानी तोपो के गोले आ-आ कर पडने लगे।[1] अव किले के भीतर की ओर चिता तैयार हुई और राणियाँ, वच्चे तथा राजपूतो के धन-दौलत आदि सव कुछ उसमे स्वाहा हो गए। इसके वाद पावागढ के रक्षक शुद्ध जल से स्नान करके केसरिया वस्त्र धारण किए हुए वाहर निकले और शत्रुओ पर टूट पडे। वहुत थोडे से राजपूत जीवित रहे और मुसलमानो मे से बहुत से मारे गए तथा अनेक घायल हुए। चम्पानेर का रावल[2] तथा उसका प्रधान मत्री [डूँगरशी]दोनो ही रक्त मे लथपथ हुए शाह के हाथो पड गए।

---

१ सुल्तान महमूद ने १७ नवम्बर १४८४ ई० को चम्पानेर का किला फतह किया और इससे पहले १४७२ ई० मे जूनागढ़ पर विजय प्राप्त की—इस प्रकार वे=दो गढ जीतने के कारण वह 'महमूद वेगडा' कहलाया।

२ पताई रावल के तीन कुँअर थे जिनमे सबसे वडे रायसिह जी तो अपने पिता की उपस्थिति मे ही मर गए थे। दूसरे का नाम लिम्वाजी था, जव राज्य का नाश हुआ तो वह भाग गया और तीसरे तेजसिह को सुल्तान ने कैद कर लिया तथा मुसलमान वना लिया। रावल के मृतक पुत्र रायसिहजी के दो कुँअर थे जिनके नाम पृथ्वीराजजी और डूँगरसिहजी थे। ये दोनों नर्मदा के उत्तरी किनारे पर हाँक नामक ग्राम मे चले गए और वही पर अपना राज्य स्थापित करके रहने लगे। थोडे दिन बाद ही इन्होने उधर लूटपाट शुरू की इसलिए अहमदाबाह के सुल्तान ने इनको रोका और गुजारे के लिए कुछ गाँवो मे से चौथ वसूल करने का अधिकार दे दिया। धीरे-धीरे इन्होने अपनी सत्ता इतनी वढाई कि राजपीपला और गोधरा के वीच का सारा प्रदेश हाथ में ले लिया। इसके वाद दोनो भाइयो ने राज्य का आधा-आधा बँटवारा कर लिया। वडे भाई पृथ्वीराजजी के भाग मे मोहन (छोटा उदयपुर) आया और छोटे डूँगरसिहजी की पाँती में वारिया आया। इन स्थानो पर आज भी इन्ही के वंशज राज करते हैं।

महमूद ने अपनी विजय के लिए खुदा की इबादत करवाई और जब तक कि बीमार व घायल अच्छे न हो गये तब तक उसने वहीं पर एक सुन्दर मसजिद बनवाई तथा उस नगर का मुसलमानी नाम महमूदाबाद रक्खा। जब रावल जयसिंह और उसके प्रधान के घाव भर गए तो उनसे इसलाम धर्म स्वीकार करने को कहा गया परन्तु उन्होंने नाहीं कर दी। इस पर उन दोनों को मरवा कर बादशाह ने अपनी विजय को कलंकित कर लिया।

इस प्रकार चंपानेर के नाश का उक्त वृत्तान्त मुसलमानों ने लिखा है। इस युद्ध में रक्तपान से प्रसन्न होने वाली कालिका के निमित्त जिन जिन राजाओं ने अपना बलिदान दिया था उनके नाम भाट ने इस प्रकार सुरक्षित रख छोड़े हैं:—

संवत पंदर प्रमाण एकतालो संवत्सर[1]
पोस मास तिथि बीज वदेहु वार रवि सुवर
मरणिया पटभूप प्रथम बेरसी पढीजे
आडेओ सारंग करम बैतपाल कहीजे
सरवरियो अग्रमाण, पताइ काज पिंड न दियो
महमुदाबाद मेहराण सपुख्टक सर पाणो लियो ॥

इससे विदित होता है कि महमूद ने पहाड़ी पर का किला नहीं लिया वरन् केवल शहर पर ही अधिकार किया। मुसलमान इतिहासकार इस विषय में चुप हैं परन्तु हिन्दुओं की दन्तकथाओं में जो यह बात प्रचलित

---

१ भाट लोगों ने यह संवत् बड़ी सावधानी से लिखा है। फरिश्ता के लेख के अनुसार चम्पानेर का नाश १४८४ ई० में हुआ था। मि० प्रिन्सेप्स के मत से संवत् और ईस्वीय सन् में ५७ वर्ष का अन्तर है—इस हिसाब से मुसलमानों की लिखी हुई तिथि भाटों की लिखी हुई तिथि के साथ ठीक बैठती है। साधारणतया संवत् और सन् ई० में ५६ वर्ष का अन्तर लिया जाता है इस हिसाब से १ वर्ष का फेर रहता है।

है कि पावनगढ के चारो ओर वहुत दिनो तक घेरा पडा रहा था, सच्ची प्रतीत होती है।

एक दूसरे भाट ने लिखा है कि पताई रावल चपानेर का राजा था। एक वार नवरात्र के उत्सव पर वह स्त्रियो का 'गर्बा नृत्य' देखने गया। चपानेर की स्वय कालिका देवी भी स्त्री का रूप धरकर उस अवसर पर स्त्रियो मे गा रही थी। राजा उसकी सुन्दरता को देख कर मोहित हो गया और कामवश होकर उसने माता का पल्ला पकड लिया, तब माता ने उसको शाप दिया "अब तेरा राज्य नष्ट हो जावेगा।"

एक बार सुल्तान चपानेर के रास्ते होकर जा रहा था, जब उसकी दृष्टि किले पर पडी तो उसने अपनी मूँछो पर ताव दिया। चपानेर नगर मे एक ब्राह्मण रहता था जिसके पुत्र का नाम लोवो था। इस लोवो ने बादशाह को मूँछो पर ताव देते हुए देख लिया था इसलिए वह उसके अभिप्राय को समझ गया और तुरन्त ही जाकर पताई रावल से कहा कि बादशाह इसी वर्ष चपानेर ले लेगा। यह सुन कर रावल ने शहर के चारो ओर पत्थर, पानी, लकडी मिट्टी, और जगल के पाँच कोट तैयार करवाए तथा दारू गोलेका सामान भी अच्छी मात्रा मे इकट्ठा कर लिया और लोवो को बादशाह की कार्यवाही पर दृष्टि रखने के लिए अहमदाबाद भेज दिया। लोवो ने बादशाह के महल के सामने ही एक व्यापारी की हवेली किराये ले ली और उसी मे रहने लगा। एक बार बादशाह महल की खिडकी मे बैठा हुआ चारो ओर दृष्टि फैला रहा था, जब उसने चपानेर की ओर देखा तो फिर मूँछो पर ताव दिया और फौज तैयार करने की आज्ञा दी। लोवो को भी ज्ञात हो गया कि अब बादशाह चपानेर पर चढाई करने वाला है इसलिए वह पताई रावल के पास जा पहुँचा और उसे खबर दी "बादशाह फौज लेकर आ रहा है।" उसने भी अपनी रक्षा के सभी साधन, जो सभव थे, इकट्ठे किए। बादशाह के पाँच लाख सैनिक चपानेर के पास आ पहुँचे परन्तु यह किसी को विदित न था कि बादशाह का अभिप्राय क्या था। आधी रात के समय सुल्तान ने अपने सरदारो को बुलाया और नगर पर

झण्डा गाड़ने की आज्ञा दी। शाही सेना ने तुरन्त ही नगर पर हमला बोल दिया और गोलाबारी शुरू कर दी परन्तु रावल की ओर से भी गहरी मार पड़ी और आक्रमणकारी नगर को लेने में असफल रहे। अब बादशाह ने शहर के चारों ओर घेरा डाल दिया और बारह वर्ष तक वहीं पड़ा रहा परन्तु कोई फल न निकला। तब उसने पताई रावल से सन्धि कर ली और उसको अपने डेरे पर मिलने के लिए बुलाया। जब बातचीत हो रही थी उसी समय बादशाह ने रावल से पूछा कि उसको चांपानेर पर चढ़ाई होने के पहले ही सब बात का पता कैसे चल गया? राजा ने उत्तर दिया 'मेरे पुरोहित के पुत्र ने आपका अभिप्राय जान लिया था और उसी ने मुझे यह सब सूचना दी थी। बादशाह ने भविष्य में कभी चांपानेर पर चढ़ाई न करने की प्रतिज्ञा की और जोशी को उसे दे देने के लिए कहा। रावल ने स्वीकार कर लिया और बादशाह ने वहीं पर एक चांतिया [चबूतरा] बनवा कर उस पर दो गधों की तसवीरें खुदवा दीं और उसके नीचे लिखवा दिया 'यदि कोई मुसलमान इस शहर को लेगा तो उसको गधे की गाळ [गाली] है। इसके बाद वह जोशी को अपने साथ ले गया और उसको अपना मन्त्री बनाया। बाद में यद्यपि उसने चम्पानेर नगर को नहीं लिया तथापि उसके आसपास के भाग को लिए बिना न छोड़ा और ऐसा नियम बना दिया कि चांपानेर नगर में न तो बाहर से कोई चीज़ ले जा सके और न वहाँ से कुछ ला सके। इस नियम से वहाँ के निवासी तंग आ गए और उनको अन्त में अहमदाबाद जाकर शरण लेनी पड़ी।

वर्णन को चालू रखते हुए भाट कहता है कि बादशाह चम्पानेर से उमरासे गया वहाँ के राजा को कैद कर लाया और दो वर्ष तक अहमदाबाद में बन्दी रखा। इसी बीच में उमरासे के नीचे के नडारिया नामक गाँव का एक कुम्हार अहमदाबाद आया और कारखाने से संबन्धित कुम्हार से अपना मेल-जोल बढ़ाया तथा उसी की सहायता से राजा को बन्दीखाने से निकाल कर एक कोरे में बैठा कर अतीत [साधुओं] की जमात के साथ चम्पानेर पहुँचा दिया। चम्पानेर में राजा की बुआ का

घर था, उसीने उसके बदले का रुपया अहमदाबाद भेज दिया और उसको फिर उमराले की गद्दी पर बिठा दिया। उसी दिन से उमराले के राजाओ ने भी पताई की नकल करके 'रावल' पद ग्रहण किया। यह पद उनके वश मे अब तक चला आता है और जब नया राजा गद्दी पर बैठता है तो कुम्हारिया ग्राम के कुम्हार का वशज ही उसका राजतिलक करता है।

अब, इस बात का शेषाश पीरम के गोहिलो से सबद्ध है इसलिए एक बार फिर उनकी कथा छेडते है—

मोखडाजी [1] गोहिल की स्त्री का नाम वदनकुँअर बा था, वह

---

१ मोखडाजी की बात भाट ने यो लिखी है कि उन पर कालिका माता का हाथ था इसलिए वे सवा सेर सिन्दूर पानी मे घोल कर पी जाते थे। पचास वर्ष की अवस्था तक उनके कोई सन्तान नही हुई। उन्ही दिनो एक बार मुल्तान से बालाशाह नामक फकीर एक सिपाही साथ लेकर आया और खरकडिया गाँव मे खाना घाँची के घर ठहरा। घाँची की माँ अन्धी थी। फकीर ने हाथ फेर कर उसकी आँखें अच्छी कर दी और उसने उसी के सामने भैंस का दूध निकाला। जब मोखडाजी ने यह बात सुनी तो वे खरकडिया आए और फकीर से अपनी सन्तान होने की इच्छा पूरी करने के लिए प्रार्थना की। फकीर ने कहा, 'यदि तुम मेरे नाम पर गाय चढाने की प्रतिज्ञा करो तो तुम्हारे पुत्र हो।' मोखडाजी ने यह बात स्वीकार कर ली, तब फकीर ने उन्हें एक औषधि देकर पुत्र होने का वरदान दिया। इसके बाद नवें महीने ही सरवैयाणी ठकुराणी के पुत्र हुआ जिसका नाम डूँगरजी रक्खा। जब वह छ महीने का हुआ तो मोखडाजी एक गाय को सजा कर फकीर के चढ़ाने लाए। यह देख कर बालाशाह ने खाना घाँची और अपने सिपाही से मोखडाजी की ईमानदारी की प्रशसा की और उनसे कहा "मैं तो भूमि में समा जाता हू और तुम मोखडाजी से कह देना कि तुम हिन्दू हो इसलिए गाय की बलि तो रहने दो और दक्षिण दिशा की ओर से तुम्हें सीगो मे ध्वजा बाँधे हुए एक पाडा आता हुआ मिलेगा सो उसी की बलि चढा देना, तुम्हारी मानता पूरी

पालीताना के पास हाथसणी गाँव के सरवैया राजपूतों के कुटुम्ब की थी। उससे डूंगरजी नाम का एक पुत्र हुआ जो मोखड़ाजी के बाद गद्दी पर बैठा था। डूंगरजी के अतिरिक्त उनके और भी दो पुत्र थे जिनके नाम समरसिंहजी और गोवमालजी थे। इन दोनों ही का जन्म पीरम में हुआ था। समरसिंहजी तो अपनी ननसाल में जाकर राजपीपला

हो जावेगी। यह कह कर वह फकीर भूमि में समा गया। वह आज तक बालाशाह पीर के नाम से पूजा जाता है। उसके बाद जाना थांभी भी गाँव के सिरे पर ही जमीन में समा गया। वह भी अब तक थान पीर के नाम से प्रसिद्ध है और लोग अब तक उसकी मानता करते हैं। रोजू में दो मकबरे बने हुए हैं एक तो बालाशाह का और दूसरा उसके भाई इब्राहीम शाह का है। कहते हैं कि इब्राहीम शाह अपने भाई को ढूंढते हुए सरकड़िया ग्राम में आए तब जमीन में से ही बालाशाह ने उनसे कहा 'मैं यहीं पर भूमि में समा गया हूं, तुम घर जाकर समाचार कह दो।' इब्राहीम शाह ने कहा 'मैं तो ऐसा समाचार लेकर घर नहीं जाता।' तब बालाशाह ने उनको भी अपने पास ही बुला लिया और वे भी वहीं जमीन में समा गए। बालाशाह ने मोखड़ाजी से कहा था कि 'अगर मेरी मानता सफल हो जावे तो तुम्हारे वंश के पुरुष अपने अंग पर चमड़े की बंडी रक्खें और मेरा मलीदा चढ़ाने के बाद उसको उतार दें।' इसके अनुसार उनके वंशज आज तक ऐसा ही करते हैं और विवाह के बाद मलीदा चढ़ा कर बंडी उतार देते हैं। मोखड़ाजी के मन में यह सन्देह था कि मेरी मानता सफल हुई अथवा नहीं इस पर जमीन में से आवाज आई कि 'तुम्हारी मानता पूरी हो गई।' इसके बाद संवत् १११४ में मोखड़ाजी ने पीर का रोजा बनवाया और उनके मुलतानी सिपाही को उसका मजावर बना कर सरकड़िया ग्राम उसको दिया। यह सब करके वे पीरम चले गए और वहीं पर उनके दूसरे दो पुत्रों का जन्म हुआ।

१ डूंगरजी १३४७ ई० से १३७ ई० तक।
विसोजी १३७ ई० से १३९५ ई० तक।
कानोजी १३९५ ई० से १४२ ई० तक।
सारंगजी १४२ ई० से १४४५ ई० तक।

रहने लगे और अन्त मे वहाँ की गद्दी के मालिक हुए। गोहमालजी का वश ही नही चला।

वडे पुत्र डूँगरजी ने पीरम छोड कर गोगो मे अपना निवासस्थान कायम किया। उनके वाद उनके पुत्र विजेजी गद्दी पर वैठे। इनके तीन पुत्र हुए कानजी, रामजी और रूडोजी। अपने पिता के वाद कानजी गद्दी पर वैठे। कानजी की मृत्यु के समय उनके दो वालक पुत्र थे जिनके नाम सारङ्गजी और गेमलजी थे।

एक मुसलमानी सेना ने, जिसके नायक का नाम हिन्दू लोग वोडी मुगल वतलाते है, गोगो पर आक्रमण किया। रामजी ने अपने भतीजे सारङ्गजी को उन्हे भेट कर दिया और स्वय इस भाँति गोगो की गद्दी पर वैठ गया मानो उसी का हक हो। विजेता लोग सारङ्गजी को अहमदावाद ले गए, परन्तु कोलियार नामक गाँव का एक कुम्हार, जो उसी समय अहमदावाद गया था और जिसका नाम पाँचू था, उनको एक बोरे मे डाल कर किसी तरह अपने एक गधे पर लाद कर शहर के बाहर ले आया। जब यह वात मालूम हुई तो कुछ घुडसवारो ने उसका पीछा किया। एक बार जव पीछा करने वालो ने उसे लगभग पकड ही लिया था तो सयोगवश वह भागकर प्रतापगुर भावा नामक गुसाई की जमात मे जा मिला और सारगजी को उन्हे सौंप कर कहा, "यह गोगो का राजा है, तुम इसकी रक्षा करोगे तो यह किसी दिन काम आएगा।" यह कह कर कुँअर को उन्हे सौप कर वापस आया और अपने गधे लेकर चलने लगा। घुडसवार भी अब आ पहुँचे और कुम्हार के पास सारगजी को न पाकर बडे निराश हुए। थोडी देर इधर-उधर देखभाल कर वे वापस लौट गए। प्रतापगुर भाव सारगजी को लेकर डूँगरपुर के पताई रावल के पास आए। वहाँ की राणी सारगजी की भुआ थी इसलिए वे वही पर गुप्तरूप से जब तक २० वर्ष के हुए रहते रहे। जवान होने पर सारगजी ने अपनी भुआ से कुछ साथी उन्हे घर पहुँचाने के लिए माँगे। पताई रावल ने उनके साथ एक सेना दे दी

और उनको भुआ ने यह कह कर उनको विदा किया 'कुँवर! जाओ अपना हक प्राप्त करो और इस समय तुमने जो डूंगरपुर में राज्य प्राप्त किया है उसके स्मारक रूप में तुम्हारे वंशज 'रावल' की पदवी धारण करेंगे। अपनी भुआ के आशीर्वाद को शिरोधार्य करके सारंगजी ने उमरासा की ओर प्रस्थान किया। इधर गोगों में जब रामजी ने उनके आगमन के समाचार सुने तो उन्होंने गोहिलों की प्राचीन शाखा के प्रतिनिधि सेजकजी के छोटे पुत्र के वंशजों गारियाधार और लाठी के ठाकुरों को बुलाया और सारंगजी के विरुद्ध सहायता देने पर उन्हें बारह-बारह ग्राम देने की प्रतिज्ञा की। गारियाधार के ठाकुर को त्रापुज और अन्य ग्यारह ग्राम तथा लाठी के धनी को दामूकर के परगने का लेख लिख कर दे दिया गया। पहले तो इन दोनों ठाकुरों ने रामजी की बात स्वीकार कर ली परन्तु जब वे वापस घर लौटने लगे तो उन्होंने सोचा कि गद्दी का असली हकदार तो सारंगजी है इस प्रकार एक विरोधी से मिल कर सारंगजी को अपने हक से वंचित करना उचित नहीं। यह विचार कर वे सीधे उमरासा गए। वहाँ जाकर उन्होंने सारंगजी से कहा कि रामजी गोधारी ने हमें तुम्हारा विरोध करने के लिए बारह-बारह गाँव का पट्टा कर दिया है परन्तु उस गद्दी के असली हकदार तो तुम हो इसलिए हम ये पट्टे तुमको वापस देने आए हैं।" सारंगजी ने कहा 'आओ मैं उन पट्टों पर अपनी 'सही' किए देता हूँ। यह कह कर उसने पट्टों पर सही कर दी और उन ठाकुरों को अपने पक्ष में कर लिया। जब रामजी गोधारी को यह खबर मिली तो उसने सोचा कि उसका दाँव खाली गया इसलिए उसने भी उमरासा जाकर सारंगजी को आत्म-समर्पण कर दिया। दोनों काका भतीजों ने साथ साथ शराब पी और पिछली बातें भूल जाने की प्रतिज्ञा की। इसके बाद सारंगजी गोगो गए और राजगद्दी पर बैठे। रामजी ने गद्दी के आगे सर झुकाया और उनको गुजारे के लिए उनरामू भगिआसी और मरेली नामक तीन गाँव मिले। इन गाँवों के ग्रासिया (भूमिया) अब भी गोधारी कहलाते हैं। कहते हैं कि मोणपुर ग्राम भी रामजी को मिला था।

१४९४ ई० मे दक्षिण-सरकार[1] के एक विद्रोही अफसर ने गुजरात के कुछ व्यापारिक जहाजो को लूट लिया और माहिम के द्वीप पर अधिकार कर लिया। महमूदशाह ने उसके विरुद्ध एक जहाजी वेडा और एक सेना भेजी। जहाजी वेटा द्वीप से आगे निकल गया और तूफान के कारण नष्ट हो गया। जो अफसर व मल्लाह बच कर किनारे आ गए थे उनमे से कितनो ही को तो शत्रु ने मार डाला और वाकी को कैद कर लिया। जो सरदार उत्तर कोकण होकर फौज लेजा रहा था वह जव माहिम के पास आकर पहुँचा तो उसे जहाजी वेडे के दुर्भाग्यपूर्ण समाचार मिले। वही पर ठहर कर उसने महमूदशाह के पास एक आदमी द्वारा समाचार भेजा और यह पुछवाया कि आगे उसे किस प्रकार काम करना चाहिए। इसके वाद दक्षिण के सुल्तान ने विद्रोही लोगो को वश मे कर लिया और गुजरात के अफसरो को कैद से मुक्त करके जो कुछ उनकी हानि हुई थी उसके सहित उन्हे वापस घर पहुँचा दिया।

दूसरे वर्ष "महमूदशाह ने बागड और ईडर देश पर चढाई की और वहाँ के राजाओ से भारी भेट वसूल करके वहुत सा माल लदवा कर महमूदाबाद (चम्पानेर) वापस लौटा।" ऐसा विदित होता है कि उस

---

१ वहमनी सुल्तान महमूद की ओर से बहादुर गिलानी नामक सरदार था। उसने बारह हजार फौज तथा एक जहाजी बेडा लेकर गोआ और दावल के बन्दर लूट लिए। इस पर बेगडा ने सफदुरुलमुल्क को समुद्री मार्ग से और केवामुल्मुल्क को खुश्की रास्ते से भेजा। सफदरउलमुल्क के जहाजो को तूफान ने आ घेरा। वह कुछ साथियो सहित बच कर किनारे आ लगा और प्राणरक्षा की प्रार्थना की परन्तु शत्रुओ ने उसके साथियो को मार डाला और उसको कैद कर लिया। केवामुल्मुल्क को जब यह खबर मिली तो वह माहिम जा पहुचा और बेगडा को समाचार भेज दिए। इस पर उसने वहमनी सुल्तान के पास एलची द्वारा एक पत्र भेजा। बहमनी सुल्तान ने तुरन्त ही वहादुर गिलानी पर चढ़ाई कर दी और उसको मार दिया तथा बेगडा के मनुष्यो व वाहनो को सफदरउलमुल्क के साथ वापस गुजरात भेज दिए।

और उनकी भुआ ने यह कह कर उनको विदा किया 'कुँवर ! जाओ, अपना हक प्राप्त करो और इस समय तुमने जो डूँगरपुर में रक्षण प्राप्त किया है उसके स्मारक रूप में तुम्हारे वंशज 'रावल' की पदवी धारण करेंगे। अपनी भुआ के आशीर्वाद को शिरोधार्य करके सारंगजी ने उमराला की ओर प्रस्थान किया। इधर गोगों में जब रामजी ने उनके *आगमन के समाचार सुने तो उन्होंने गोहिलों की प्राचीन शाखा के* प्रतिनिधि सेजकजी के छोटे पुत्र के वंशजों गारियाधार और लाठी के ठाकुरों को बुलाया और सारंगजी के विरुद्ध सहायता देने पर उन्हें बारह-बारह ग्राम देने की प्रतिज्ञा की। गारियाधार के ठाकुर को वाघुव और अन्य ग्यारह ग्राम तथा लाठी के धनी को दामनगर के परगने का लेख लिख कर दे दिया गया। पहले तो इन दोनों ठाकुरों ने रामजी की बात स्वीकार कर ली परन्तु जब वे वापस घर लौटने लगे तो उन्होंने सोचा कि गद्दी का असली हकदार तो सारंगजी है इस प्रकार एक विरोधी से मिल कर सारंगजी को अपने हक से वंचित करना उचित नहीं। यह विचार कर वे सीधे उमराला गए। वहाँ जाकर उन्होंने सारंगजी से कहा कि 'रामजी गोधारी ने हमें तुम्हारा विरोध करने के लिए बारह-बारह गाँव का पट्टा कर दिया है परन्तु उस गद्दी के असली हकदार तो तुम हो इसलिए हम ये पट्टे तुमको वापस देने आए हैं।' सारंगजी ने कहा 'आओ मैं इन पट्टों पर अपनी 'सही' किए देता हूँ। यह कह कर उसने पट्टों पर सही कर दी और उन ठाकुरों को अपने पक्ष में कर लिया। जब रामजी गोधारी को यह खबर मिली तो उसने सोचा कि उसका दाँव खाली गया इसलिए उसने भी उमराला जाकर सारंगजी को आत्म-समर्पण कर दिया। दोनों काका भतीजों ने साथ साथ शराब पी और पिछली बातें भूल जाने की प्रतिज्ञा की। इसके बाद सारंगजी गोगो गए और राजगद्दी पर बैठे। रामजी ने गद्दी के आगे सर झुकाया और उनको गुजारे के लिए उजराम्, अगियाली और भरेसी नामक तीन गाँव मिले। इन गाँवों के ग्रासिया (भूमिया) अब भी गोधारी कहलाते हैं। कहते हैं कि मोणपुर ग्राम भी रामजी को मिला था।

१४९४ ई० मे दक्षिण-सरकार [1] के एक विद्रोही अफसर ने गुजरात के कुछ व्यापारिक जहाजो को लूट लिया और माहिम के द्वीप पर अधिकार कर लिया। महमूदशाह ने उसके विरुद्ध एक जहाजी वेडा और एक सेना भेजी। जहाजी वेटा द्वीप से आगे निकल गया और तूफान के कारण नष्ट हो गया। जो अफसर व मल्लाह वच कर किनारे आ गए थे उनमे से कितनो ही को तो शत्रु ने मार डाला और वाकी को कैद कर लिया। जो सरदार उत्तर कोकण होकर फौज लेजा रहा था वह जव माहिम के पास आकर पहुँचा तो उसे जहाजी वेडे के दुर्भाग्यपूर्ण समाचार मिले। वही पर ठहर कर उसने महमूदशाह के पास एक आदमी द्वारा समाचार भेजा और यह पुछवाया कि आगे उसे किस प्रकार काम करना चाहिए। इसके वाद दक्षिण के सुल्तान ने विद्रोही लोगो को वश मे कर लिया और गुजरात के अफसरो को कैद से मुक्त करके जो कुछ उनकी हानि हुई थी उसके सहित उन्हे वापस घर पहुँचा दिया।

दूसरे वर्ष "महमूदशाह ने वागड और ईडर देश पर चढाई की और वहाँ के राजाओ से भारी भेट वसूल करके बहुत सा माल लदवा कर महमूदाबाद (चम्पानेर) वापस लौटा।" ऐसा विदित होता है कि उस

१ वहमनी सुल्तान महमूद की ओर से वहादुर गिलानी नामक सरदार था। उसने वारह हजार फौज तथा एक जहाजी वेडा लेकर गोआ और दाबल के बन्दर लूट लिए। इस पर बेगडा ने सफदुरुल्मुल्क को समुद्री मार्ग से और केवामुल्मुल्क को खुश्की रास्ते से भेजा। सफदरउल्मुल्क के जहाजो को तूफान ने आ घेरा। वह कुछ साथियो सहित वच कर किनारे आ लगा और प्राणरक्षा की प्रार्थना की परन्तु शत्रुओ ने उसके साथियो को मार डाला और उसको कैद कर लिया। केवामुल्मुल्क को जब यह खवर मिली तो वह माहिम जा पहुचा और बेगडा को समाचार भेज दिए। इस पर उसने वहमनी सुल्तान के पास एलची द्वारा एक पत्र भेजा। वहमनी सुल्तान ने तुरन्त ही वहादुर गिलानी पर चढ़ाई कर दी और उसको मार दिया तथा बेगडा के मनुष्यों व वाहनो को सफदरउल्मुल्क के साथ वापस गुजरात भेज दिए।

समय ईडर में राव भान का पुत्र सूरजमलजी राज्य करता था। उसने केवल अठारह महीने राज्य किया और उसके पुत्र रायमलजी के बाल्य काल में ही उसके काका भीम ने गद्दी हड़प ली।

सन् ई० १५०७ में फिर महमूदशाह जल सेनापति के रूप में हमारे सामने आता है। 'पापड़ी यूरोपनिवासियों ने कुछ वर्षों से समुद्र पर अधिकार जमा रक्खा था और गुजरात के किनारे बस जाने की इच्छा करके वहाँ के कुछ बन्दरगाहों पर कब्जा कर लिया था। तुर्की बादशाह बयाजेत द्वितीय का जहाजी कप्तान पन्द्रह सौ आदमियों की सेना लेकर अपने बारह जहाजों सहित गुजरात के किनारे पर आ पहुँचा उधर विदेशियों को निकाल बाहर करने की इच्छा से स्वयं महमूदशाह भी अपनी जलसेना के साथ दम्मन और माहिम जा पहुँचा। अमीर-उल-उमरा मलिक ऐयाज ने अपनी फौज सहित देव बन्दर कूच कर दिया और तुर्की जल सेनापति की फौज से मिलकर बम्बई से कुछ मील दक्षिण में स्थित चौल बन्दर पर, जहाँ पुर्तगाली सेना थी आक्रमण कर दिया। विजय मुसलमानों की हुई और पुर्तगाली जैसा कि उनके विपक्षियों ने लिखा है अपने तीन-चार हजार मनुष्यों को खो कर भाग गए। पुर्तगाल वालों ने भी स्वीकार किया है कि इस लड़ाई में उनका झण्डे वाला जहाज एडमिरल डॉन लारेन्जो अल्मीडा और १४ मनुष्य नष्ट हुए। इसके बाद सोरठ के किनारे पर देव बन्दर के पास फिर लड़ाई हुई जिसमें मुसलमानों की सम्मिलित सेना ने हार खाई और उसके कुछ भाग का नाश भी हुआ।

अहमदाबाद के बादशाहों में से महमूदशाह यदि सब से महान् नहीं तो अत्यन्त लोकप्रिय अवश्य हुआ है। जिस प्रकार हिन्दू सम्राट सिद्धराज के विषय में कितनी ही किम्वदन्तियाँ और अद्भुत कथाएँ प्रचलित हैं उसी प्रकार इस मुसलमान बादशाह के विषय में भी कितनी ही बातें प्रचलित हैं। इसकी शारीरिक गठन शूरता बल न्याय परोपकार धर्म्मशास्त्र की आज्ञा पालने में दृढ़ता और विचारशक्ति की श्रेष्ठता

का असामान्य रूप से बहुत बखान हुआ है।[1] कहते हैं कि वह बहुत अधिक खाने वाला था, इसके विषय में और भी बहुत सी बातें प्रचलित है। गुजरात की मुसलमानी इमारतो मे से एक भी ऐसी नही है जिसके साथ महमूद वेगडा का नाम सम्बन्धित नही हो। मुस्तफाबाद और महमूदाबाद चम्पानेर के अतिरिक्त उसने वाकत्र नदी के किनारे पर एक और भी शहर अपने नाम से बसाया था, जिसके चारो ओर कोट खिचवा कर अच्छी-अच्छी इमारते बनवाईं। मीरात-ए-अहमदी के कर्ता ने लिखा है कि, "इस नदी के किनारे ऊँची जगह पर उसने एक उत्कृष्ट महल बनवाया जिसके अवशिष्ट चिह्न और खण्डहर इस पुस्तक के लिखते समय भी वर्तमान हैं।[2] वह प्राय इन्ही तीन नगरो में से एक मे बना रहता था 'परन्तु गरमी के दिनो मे जब मतीरें (तरबूज) पक जाते हैं तब अहमदाबाद अवश्य जाता था और छ महीने तक मौज उडा कर वापस आ जाता था।' इसी ग्रन्थाकार ने यहाँ तक लिख दिया है कि, 'तमाम देश मे, शहरो मे, कस्बो मे और गाँवो मे जो

---

१ कच्छ के जाम हमीरजी का वध करके उसका राज्य भायात कच्छ के बारावाला जाम रावलजी ने (जिनके वंशज जामनगर के अधिपति हैं) ले लिया था। इस पर हमीरजी का पुत्र खँगारजी अपने भाई साहबजी सहित महमूदशाह वेगडा की शरण में अहमदाबाद गया। वहाँ पर एक बार सिंह के शिकार के अवसर पर बादशाह के प्राण बचाने के कारण वह उस पर बहुत प्रसन्न हुआ और महाराव की पदवी देकर कुछ फौज के साथ उसे अपना राज्य वापस लेने के लिए भेजा। तब महाराव खँगारजी ने अपना कच्छ का राज्य सं० १५५६ वि० मे जाम रावलजी से वापस ले लिया।

२ वाकत्र नदी पर उसने महमूदाबाद बसाया था, वहाँ के महलो के खण्डहर अब तक मौजूद हैं। इसके अतिरिक्त इस बादशाह का बनाया हुआ एक भँवरिया कुआ भी है जिसमें होकर, कहते हैं कि, जमीन के अन्दर ही अन्दर अहमदाबाद जाने का रास्ता है। गुजराती अनुवादक ने लिखा है कि, 'हमने इस कुए में उतर कर उसके ठंडे पानी का आनन्द लिया है परन्तु सूक्ष्मतया देखने पर भी अहमदाबाद जाने के किसी रास्ते का पता न चला।'

कोई मेवे के पेड़ हैं वे सब सुल्तान महमूद के समय में लगवाए गए थे। फरिश्ता ने लिखा है कि उसने गिरनार और चम्पानेर के दो दुर्जय गढ़ों को जीता था इसलिए उसका नाम बेगड़ा [1] पड़ा था। यह अर्थ और कारण ठीक तथा सम्भव जँचता है इसीलिए हम भी इसे मान लेते हैं क्योंकि इसके अतिरिक्त और कोई प्रामाणिक कारण मिलता भी नहीं है। जहाजी लड़ाइयाँ लड़ने के कारण उसकी प्रसिद्धि यूरोपीय देशों तक फैल गई थी। मिस्टर एल्फिन्स्टन [2] ने लिखा है कि 'उस समय के प्रवासियों के इस बादशाह के विषय में बड़े भयानक विचार थे। बार्टिमा Bartema] और बार्बोसा [Barbosa] इन दोनों ही में उसका वर्णन विस्तार सहित किया गया है। एक यात्री ने उसके शरीर की बनावट के विषय में भयंकर वर्णन लिखा है। उसके भोजन की अधिकता और उसके अधिकांश शरीर में मनुष्य प्राणियों का विष होने की बात में उक्त दोनों ही लेखक सहमत हैं। विषैला भोजन करते-करते उसके शरीर में इतना विष पैर गया था कि यदि कोई मक्खी उड़ती-उड़ती उसके शरीर पर आ बैठती थी तो वह तुरन्त मर जाती थी। सत्तावान मनुष्यों को प्राण-दण्ड देने की उसकी साधारण रीति थी कि वह पान खाकर उन पर पीक की पिचकारी मार देता था। बटलर ने 'खम्भात के राजा' की बात लिखी है जिसमें उसका नित्य का भोजन तो साँप और एक जहरी मेंढ़क भी लिखा है। यह बात उसके विषय में सोलह आने सच है।

मीराते अहमदी में उसके मरण का वृत्तान्त इस प्रकार लिखा है—

'सन् १५१० ई० में सुल्तान पाटण जाने के लिए रवाना हुआ। उस समय जनता के साथ अपनी अन्तिम भेंट समझ कर उसने बड़े-बड़े आदमियों को अपने पास बुलाया और उनसे कहा 'अब मेरा अन्तिम समय आ गया है। वह पट्टण से चार दिन में अहमदाबाद लौट आया; मार्ग में शेख महमद खटू की कब्र पर प्रणाम करने गया। वहीं पर उसने अपनी भी कब्र बना रखी थी उसको देख कर अपने कर्मों

---

१ बे-दो + गढ़ा = गढ़ों को जीतने वाला।

२ History of India vol ii, p 206, edit. 1841

पर पश्चात्ताप करके रोने लगा। इसके बाद वह अहमदाबाद लौटा और तीन मास तक बीमार रहा। इसी बीच मे उसने बडोदरे से अपने पुत्र खलील खाँ को बुलवा लिया था, उसकी अन्तिम सलाम लेकर हिजरी सन् ९१७ (१५११ ई०) के रमजान महीने की तीसरी तारीख सोमवार को वह इस असार ससार को छोड कर चला गया। [1] उसे सरखेज में दफनाया गया था, जहाँ पर अब भी उसकी कबर मौजूद है।"

---

१ फरिश्ता ने लिखा है कि जब वह बीमार पडा तब उसने अपने पुत्र मुजफ्फरशाह को बडौदे से बुलवाया और अन्त समय मे उसको यह बतलाया कि बादशाह को किस तरह रहना चाहिए। उसी समय ईरान के बादशाह इस्माइल ने बेग-कलजेपाश के साथ कुछ घोडे और कीमती जवाहरात उसके पास यादगार के रूप में भेजे थे। इसकी खबर जब फरहतउलमुल्क ने उसे दी तो उसने कहा, 'खुदा मुझे उसका मुँह न दिखाए।' उससे वह इतनी घृणा करता था कि अन्तिम समय में भी उससे मिलना नही चाहता था। हुआ भी ऐसा ही कि एलची आ कर पहुँचा उसके पहले ही रमजान की दूसरी तारीख मगलवार (हि० स० ९१७) को वह मर गया। उस समय उसकी आयु ७० वर्ष ११ महीने की थी। उसने पूरे ५५ वर्ष एक महीना और दो दिन राज्य किया। वह अपने मनमें खुदा पर भरोसा रखता था।

उसका विचार था कि मुसलमानी धर्म ही सच्चा धर्म है और दूसरे सब धर्म पाखण्ड से भरे हुए हैं, इसी कारण वह हिन्दुओ को दु ख देने, उनके देवालय तुडवाने और उनको मरवा देने में पुण्य समझता था। वह हमेशा सच बोलता था और मुँह से किसी के विषय में अपशब्द नही निकालता था। कुरान पर उसकी ऐसी आस्था थी कि मरते दम तक उसका पाठ करना उसने बन्द नही किया। इन सब गुणो के साथ ही साथ वह पूरा शूरवीर था, शरीर पर लोहे का कवच पहनता था और वर्ष के दिनो के प्रमाण से हमेशा अपने भाथे में ३६० बाण रखता था और उसको अपने कंधे पर बाँधे रहता था। तलवार कटार आदि तो बगल में बाँधता ही था परन्तु भाला अवश्य साथ रखता था।

सरखेज में हजरत अहमद खत्तू के रोजे में उसने पहले ही से अपनी कब्र के लिए जगह पसन्द कर रखी थी इसलिए उसको वही दफनाया गया था।"

प्रकरण सातवाँ

मुज़फ्फर (द्वितीय)–सिकन्दर–महमूद (दूसरा)–बहादुरशाह–महमूद लतीफ़ खाँ–अहमदाबाद के राजवंश की समाप्ति–अकबरशाह

महमूद बेगड़ा के बाद उसका शाहज़ादा मुज़फ्फर द्वितीय[1] सिंहासन पर बैठा। इसके राज्य के प्रारम्भकाल में ही मालवा के सुल्तान ने इससे सहायता माँगी। उसने कहलाया मेरा हिन्दू प्रधान मेदिनीराय इतना शक्तिशाली हो गया है कि मैं तो नाममात्र का ही बादशाह रह गया हूँ मेरे पास कोई भी अधिकार नहीं है राज्य में काफ़िरों (हिन्दुओं) की सत्ता फिर जड़ पकड़ने लग गई है। मुज़फ्फर के मन में धार्मिक उत्तेजना हुई और उसने तुरन्त ही भोज के देश (मालवा) पर चढ़ाई करने की तैयारियाँ कर ली और अणहिलवाड़ा पट्टण के सूबेदार ऐन-उल्मुल्क को भी अपनी फ़ौज लेकर अहमदाबाद आ जाने की आज्ञा दे दी। ईडर के अपराजित राठौर राव भीमजी ने जो राव भाण का छोटा पुत्र था और जिसने अपने भतीजे रायमल जी का

(१) इसका नाम ख़लील खाँ था। १ अप्रेल सन् १४७० ई० को इसका जन्म हुआ था। इकतालीस वर्ष की अवस्था में सुल्तान मुज़फ्फर के नाम से गद्दी पर बैठा। मीरात ए अहमदी में लिखा है कि वह १० वर्ष की आयु में गद्दी पर बैठा, यह भूल है क्योंकि वह १५११ ई० में गद्दी पर बैठा था और १५२६ ई० तक उसने राज्य किया था।

हक छीन कर ईडर की गद्दी पर अधिकार कर लिया था, सूबेदार की इस अनुपस्थिति से लाभ ऊठाया और साबरमती तक आसपास के देश को लूट कर उजाड कर दिया। जब ऐन-उलमुल्क को यह समाचार मिला तो वह मोडा से चढ आया जहां पर राव भीमजी ने आक्रमण करके उसको हरा दिया। इस लडाई मे एक प्रसिद्ध मुसलमान अफसर और दो सौ आदमी मारे गए। यह समाचार सुन कर मुज़फ्फर शाह तुरन्त अपने राज्य मे लौट आया और मोडासे मे सेना एकत्रित करके समस्त ईडर प्रान्त को उजाड कर दिया, स्वय राव भीमजी पहाडियो मे जा छुपा, परन्तु किलेदार, जिनकी संख्या केवल दश ही बतलाते हैं, वीरतापूर्वक शत्रुओ का सामना करते रहे। अन्त मे, ईडर ले लिया गया, वहां के देवालय, महल, मन्दिर और बाग बगीचे सब रेतखेत कर दिए गए तथा सभी शूरवीर रक्षक मार दिए गए। अन्त मे, राव ने मदन गोपाल नामक ब्राह्मण को अपना वकील बना कर शाह के पास भेजा और कहलाया कि "ऐन-उलमुल्क अकारण ही मेरे देश में गडबडी मचाया करता था इस लिए मैने यह कदम उठाया था। खैर, जो कुछ हुआ सो हुआ, अब मैं अपने किए की माफी मांगता हूँ।" इस सन्देशके साथ उसने एक सौ घोडे और दो लाख टक भी भेट में भेजे। मुज़फ्फर शाह ने सोचा कि अभी मालवा की चढाई बन्द करनी पडी है, उसे पूरी करना है, इसलिए राव के दोष को देखा-अनदेखा करके उसने वह भेट स्वीकार कर ली और उसका उपयोग करता हुआ वह मालवा की ओर आगे बढा।

राव भीम की मृत्यु के बाद उसका पुत्र भारमल[1] ईडर की गद्दी पर बैठा। चित्तौड के राणा सांगा की पुत्री का विवाह सुरजमलजी के पुत्र राय-

---

१. टीटोई और रेंटोडा की बावडियो से इन राजाओ के विषय में दो लेख मिलते हैं। लेख इस प्रकार हैं —

१ "सवत् १५६६ मा श्री महामरायश्री श्री श्री भीम कुवर भारमलजी आज्ञाथी बधावी"

२ "संवत् १७७ माँ ज्यारेहाराजा राव श्री भारमल जयवंतयणे राज्य चलावता हता ते वेलाए बधावी के"

मसजी के साथ हुआ था। रायमसजी भी अब तक जवान हो चुका था इसलिए राणा साँगा ने उसको सहायता करके भारमल को तुरन्त ही गद्दी से उतार कर अपने जँवाई रायमल को बिठा दिया। सन् १५१५ ईसवी में राव भारमल ने मुजफ्फर के पास अपना वकील भेज कर सहायता के लिए प्रार्थना की। वह भी राणा की इस कार्यवाही से अप्रसन्न हुआ और यह सिद्ध करने का अवसर देख कर कि 'राव भीम मेरी ही कृपा से राज्य करता था' उसने राठौड़ों के देश में सेना भेजने का निश्चय कर ही तो लिया। निज़ामुलमुल्क को जो उसके सरदारों में से था सेना लेकर ईडर जाने की आज्ञा हुई और उसने वहाँ पहुँच कर भारमल को फिर गद्दी पर बिठा दिया। परन्तु, वह पहाड़ियों में बहुत दूर तक रायमलजी का पीछा करता हुआ चला गया जहाँ पर अन्त में रायमलजी ने उसका सामना कर लिया और उसको बुरी तरह हराया। इस युद्ध में उसको बड़ी भारी हानि उठानी पड़ी। आज्ञा के विरुद्ध कार्य करने के कारण मुजफ्फर ने निज़ामउलमुल्क को खूब डाँटा फटकारा और उसको राजधानी में बुलवा लिया परन्तु थोड़े ही दिन बाद अहमदाबाद का सूबेदार नियुक्त करके भेज दिया। इसके बाद १५१७ ई० में रायमलजी फिर ईडरवाड़ा में दिखाई दिया' उसके विरुद्ध ज़हीर उलमुल्क जिसको हिन्दू-ख्यातों में वीर खाँ लिखा है एक घुड़सवारों की टोली का अफ़सर बनाकर भेजा गया परन्तु वह बुरी तरह हार गया और उसके दो सौ सात आदमी मारे गए। इस पर नुसरत-उलमुल्क को बीसलनगर भेजा गया और जिस आसपास के देश को स्वयं बादशाह ने अपनी आज्ञा-पत्र में 'विद्रोहियों और धर्मभ्रष्ट लोगों का अड्डा' लिखा है उसको लूट-पाट कर नष्ट कर देने की आज्ञा दी गई।

इसके बाद के दो वर्ष मुजफ्फर शाह ने मालवा के सुल्तान को फिर गद्दी पर बिठाने में बिताए। राजपूतों की कई बार हार हुई। मांडूगढ़ पर हमला करके उस पर अधिकार कर लिया गया गया। राणा साँगा ने इस किले का रक्षण करने का बहुत प्रयत्न किया परन्तु अन्त में उसे लौट जाना पड़ा। मुजफ्फर शाह सुल्तान महमूद से धन्यवाद प्राप्त

करके ज्योही राजधानी लौटा त्योही उसे समाचार मिला कि ईडर के राव रायमलजी ने वीसलनगर की पहाडियो से निकल कर पाटण के परगने को नष्ट कर दिया और गिलवाडे को लूट लिया। अन्त मे, नुसरत उल्मुल्क, ने जो ईडर पर चढा था, रायमल जी को पीछे हटा दिया। बादशाह रायमलजी को पकड लेने के अभिप्राय से स्वय वीसलनगर चढ कर गया और उसे नष्ट कर दिया परन्तु उसकी इच्छा पूरी न हो सकी। कुछ दिन बाद, किसी रोग के कारण रायमलजी मर गये और उनका उत्तराधिकारी भारमल निष्कण्टक राज्य करने लगा।

उन्ही दिनो यह भी समाचार मिले कि गुजरातकी सेना के बल पर मालवा के सुल्तान महमूद ने मेदिनीराय और राणा सागा की सम्मिलित फौज पर आक्रमण करने का साहस किया परन्तु वह बुरी तरह हारा, घायल हुआ और पकडा गया तथा कैद कर दिया गया। इसके तुरन्त ही बाद मे ईडर के कार्यभार से नुसरत-उल्मुल्क को हटा कर मुबारिज उल्मुल्क को उसके स्थान पर नियुक्त किया गया। किसी ने इस अफसर के सामने राणा सागा की वीरता की बहुत अधिक प्रशसा की। मुबारिज को यह सहन न हुआ। उसने अपने मन को तसल्ली देने के लिए किले के दरवाजे पर एक कुत्ता बँधवा दिया और उसको राणा के नाम से पुकारने की आज्ञा दी। राणा को अपने इस अपमान की सूचना मिली तो वह बहुत क्रोधित हुआ और तुरन्त ही ईडर पर चढ चला। उसने सिरोही तक के प्रदेश को बे-रोकटोक लूटा और वागड तक आते ही वहां का राजा भी उसके साथ हो गया। वागड के राजा को साथ लेकर वह डूंगरपुर की ओर चला तो ईडर के सूबेदार को अधिक फौज मँगवाने की आवश्यकता पडी परन्तु बादशाह के दरबार मे उसके बहुत से शत्रु भी थे जिन्होने शाह को समझाया कि मुबारिज़ ने अनुचित रीति से राणा का अपमान किया, अभी तक उस पर हमला तो हुआ नही है और हिम्मत हार कर फौज़ मँगवाता है। अस्तु, मुबारिज़ की सहायता के लिए सेना नही भेजी गई और उसे ईडर का किला छोड कर अहमदनगर

मानना पड़ा। दूसरे ही दिन राणा ने राठौड़ों के क़िले पर कब्जा कर लिया और वहाँ के सूबेदार के अत्याचारों से पीड़ित बहुत से राजपूत उससे आ मिले। इन नए साथियों को लेकर वह अहमदनगर की ओर रवाना हुआ और चलते समय यह शपथ ले ली कि, 'जब तक अपने घोड़े को हाथमती नदी का पानी नहीं पिलाऊँगा तब तक उसकी लगाम नहीं खीचूँगा'। मुबारिज़ उल्मुल्क की सेना उसके शत्रु की सेना की अपेक्षा बहुत कम थी परन्तु फिर भी वह क़िले के बाहर आया और नदी के किनारे पर व्यूह रच कर तैयार हो गया। मुसलमानों ने राणा की फ़ौज पर स्थिरता से हमला किया परन्तु मार खाकर उन्हें तुरन्त ही वापस लौटना पड़ा। राजपूतों के महावेग के आगे यवनों के पैर न जम सके और सैना तितर-बितर हो गई। स्वयं मुबारिज़ उल्मुल्क घायल हुआ उसके हाथी पकड़े गये और सेना अस्तव्यस्त हो गई जिसको हिन्दुओं ने अहमदाबाद की ओर खदेड़ दिया। इसके बाद राणा ने आस-पास के देश को खूब लूटा बड़नगर के ब्राह्मणों की रक्षा की और वीसलनगर के सूबेदार को मार कर वहाँ पर अपना अधिकार कर लिया। इस प्रकार अपमान का बदला लेकर वह निष्कण्टक वापस चित्तौड़ चला गया।

इस प्रसंग में मुबारिज़ मालवा की सीमा पर भाग गया था वहीं पर उसने सेना इकट्ठी की और राणा सांगा के लौट जाने के समाचार मिलने के बाद अपनी सूबेदारी वापस लेने का प्रयत्न करने लगा। अहमदनगर जाते समय ईडर देश के कुछ राजपूतों व कोलियों ने उसका सामना किया जिनको हरा कर वह ईडर आ पहुँचा परन्तु लूट पाट के कारण वह देश इतना दरिद्र हो गया था कि उसे खाने पीने के सामान के लिए भी परांतीज का ही आश्रय लेना पड़ा।

मुजफ्फर शाह ने निश्चय किया कि अहमदनगर को छोड़ना नहीं चाहिए, इसलिए उसने वर्षा ऋतु में ही किसी भी तरह उस पर कब्जा

कर लेने के लिए अपने अधिकारियो को आज्ञा दी और १५२० ई० के दिसम्बर मास मे स्वय भी एक सेना लेकर राणा सागा की दुर्दशा करने के लिए रवाना हो गया। ईडरवाडा एक वार फिर मुसलमानो द्वारा पददलित हुआ परन्तु राणा पर उनकी कोई स्पष्ट विजय नही हुई, मीराते अहमदी मे लिखे अनुसार 'फौज के अधिकारियो के कपट भाव को लेकर उसके (राणा के) साथ सन्धि कर ली गई।'

जब ईडर पर मुसलमानो ने कब्जा कर लिया तो वहाँ के राव अपने कुटुम्ब सहित मेवाड की सीमा पर पहाडी देश मे सरवण नामक ग्राम मे जाकर रहने लगे। यह ग्राम उस समय सामलिया सोढ के वशजो के अधिकार मे था। रीटोडा के लेख से विदित होता है कि भार मल मुजफ्फर शाह की मृत्यु के बाद उसके शाहजादा सिकन्दर (१५२६ ई०) व महमूद तीसरे (१५२६) की मृत्यु के बाद तक जीवित रहा। यही नही, जब १५२८ ई० मे बहादुर शाह ने ईडर और वागड [1] के देश पर चढाई की और चम्पानेर के रास्ते होकर भडौंच वापस आया तब भी वह जीवित था। सन् १५३० ई० मे जब सुल्तान ने ईडर पर चढाई की और अपने दो कार्यकर्ताओ के साथ बडी भारी सेना वागड भेज कर खुद लौट आया था तब तक भी राव भारमल की मृत्यु नही हुई थी।' ईस्वीय सन् १५४३ के बाद वह मरा और उसका पुत्र राव पूँजाजी हुआ जिसके राज्य-काल का कोई वृतान्त नही मिलता।

इसके आगे मुसल्मान इतिहासकारो ने जो अहमदाबाद के राज-घराने का वर्णन लिखा है उससे वहाँ के हिन्दू राजाओ के सम्बन्ध मे कोई विशेष प्रभाव नही पडता है इसलिए हम अब उसका अधिक विस्तारपूर्वक वर्णन नही करेगे। सुल्तान बहादुर शाह का राज्य अत्यन्त

१ इस देश का नाम साकरिया वागड था, इसके नीचे ३५०० ग्राम थे। अब इसका आधा भाग डूँगरपुर मे और आधा बाँसवाडा में है।

अस्वभाविक विरुद्धता को लिए हुए था। एक समय तो हम उसे उसके पूर्वभूत सिद्धराज की कीर्ति में प्रतिस्पर्द्धा सी करता देखते हैं उसकी श्रेष्ठता की धाक खानदेश बराड़ और अहमदनगर के राजाओं पर जम जाती है, उसके राज्य का विस्तार इतना बढ़ता है कि मालवा एक बार फिर गुजरात के शस्त्रों के आगे झुक जाता है और उसका विजयी झण्डा माण्डू के ऊँचे किले पर फहराता हुआ दिखाई देता है' फिर, हम देखते हैं कि अपने समृद्धिकाल में उसने जिस हुमायूँ बादशाह का अपमान किया था वही उसको देश से बाहर निकाल देता है और अन्त में पुर्तगालियों के साथ एक दुःखदायक झगडा होता है जिसमें वह धोखे से मारा जाता है और उसका मृत शरीर समुद्र में फेंक दिया जाता है। इस प्रकार उसके विषय में लिखने वाले इतिहासकार उसकी निर्बलता को मानते हुए और साम्राज्य के भावी पतन की आशंका करते हुए विश्राम करते हैं। सुल्तान बहादुर की मृत्यु के बाद गुजरात के कारबार में अव्यवस्था और राजद्रोह का प्रवेश हो गया' उसकी मृत्यु के बाद ही दक्षिण के राजाओं व यूरोपियनों से जो कर वसूल होता था वह भी बन्द हो गया।

कुछ वर्षों के बाद १५४५ ई में बहादुर शाह के भतीजे महमूद लतीफ खाँ ने जो उस समय गद्दी पर था गुजरात से हिन्दू जमींदारों के स्वत्वों को बिलकुल नष्ट करने के लिए प्रयत्न किया। इस कार्य के लिए पहले भी शाह अहमद और महमूद बेगड़ा के प्रबल समयों में बहुत कुछ सावधान प्रयत्न हो चुके थे। अब इसी कार्य में इसने अपना अभिमान-भरा और निर्दय हाथ डाला तथा ऐसी नीति से काम लिया कि यदि इसमें जो कमी रह गई थी वह न रह जाती और वह पूर्णतया सफल हो जाता तो सुल्तान के तख्त के उलट जाने में कोई कसर न रह जाती। 'उस समय शाह ने जनानखाने के आमोद प्रमोद को बिलकुल भुला दिया था राजसत्ता इतनी बढ़ी हुई थी कि दरबार और सिपाही सब उसकी मुट्ठी में थे उसकी आज्ञा का

उल्लङ्घन करने का किसी को साहस न होता था। ऐसे समय मे ही बादशाह ने मालवा पर अधिकार करने को इच्छा की, परन्तु जब उसने अपने वजीर आसफ खाँ से इस विषय पर सलाह की तो उसने कहा कि गुजरात मे राजपूतो, ग्रासियो और कोलियो के अधिकार में जो चौथ व बाँटे की भूमि है उसी पर यदि कब्जा कर लिया जावे तो मालवा के बराबर ही प्रदेश हाथ लग जाता है और उससे इतनी आय हो सकती है कि पच्चीस हजार घुड़सवारो का खर्चा सहज ही मे चल सकता है।" शाह ने इस सलाह को मान लिया और बाँटे खालसे किए जाने का हुक्म जारी कर दिया। इसके परिणाम का सभी कोई अनुमान लगा सकते हैं कि जगह जगह विद्रोह होने लगा और बाद के वृत्तान्त से मालूम होता है कि इन्ही लोगो (विद्रोहियो) की जय हुई क्योंकि उस समय उनको दबाने के लिए कितना हो खूनखच्चर किया गया हो और मुसलमान राजकर्ताओ ने इससे अपने मन को सन्तोष दे लिया हो तथा मुसलमान इतिहासकारो ने यह लिख दिया हो कि विद्रोही हिन्दुओ को दबा अथवा कुचल दिया गया, परन्तु जिस भूमि को उनसे छीन लेने का प्रयत्न किया गया था वह आज तक उन्ही के वशजो के अधिकार मे मौजूद है और इसके विपरीत, किसी समय के रोबदाब और दबदबे से भरे हुए अहमदशाह के वंश की याद दिलाने के लिए फटे-हाल दरिद्र और टूटे-फूटे खण्डहर मात्र बच रहे हैं। जब बाँटे खालसे किए जाने की आज्ञा हुई तो ईडर, सिरोही, डूँगरपुर, बाँसवाडा, लूनावाडा, राजपीपला, माहीकाँटा और हलवद (झालावाड) के ग्रासियो व राजपूतो ने अपने ग्रासो की रक्षा करने के लिए देश में गडबडी शुरू की। इस पर ईडर, सिरोहो तथा अन्य स्थानो पर सिपाहियो के थाने नियुक्त कर दिए गये और उनको आज्ञा हुई कि राजपूत और कोली जहाँ कही भी हो उनके कच्चे-बच्चे को नष्ट कर दिया जावे, केवल उन लोगो को छोडा जावे जो देश की रक्षा के लिए सिपाही (पुलिस) की नौकरी करते हो,

व्यापार करते हों अथवा जिनके दाहिने हाथ पर एक विशेष प्रकार की निशानी बनी हो। यदि इन जातियों का कोई भी मनुष्य बिना निशानी के पाया जावे तो तत्काल मार दिया जावे। इसके फलस्वरूप इस बादशाह के राज्यकाल के अन्तिम दिनों में मुसलमानी धर्म का इतना दौर बढ़ा कि कोई भी हिन्दू शहर में घोड़े पर चढ़ कर नहीं निकल सकता था जो पैदल चलते थे उनको भी अपने कपड़े की बांह पर लाल पट्टी लगवानी पड़ती थी नहीं नहीं उन्हें अपने होली दिवाली आदि के त्यौहार मनाने की भी स्वतन्त्रता नहीं थी। इसीलिए तो लिखा है कि जब कुत्ब बुरहान¹ ने सुल्तान का वध कर दिया तो हिन्दू लोग उसकी (बुरहान की) मूर्ति बना कर पूजने लगे और कहने लगे कि इसी ने हमारी रक्षा की है और मान न बचाया है।

यदि आजकल कोई गुजरात की अथवा प्रधानतया उन दिनों के अत्याचारों की जन्मस्थली अहमदाबाद की यात्रा करे तो डर के मारे जमीन के नीचे तहखानों में स्थापित हिन्दू देवताओं और ऊँची ऊँची मुसलमानी मीनारों को देख कर उस समय के राज्य व धर्म के नाम पर हुए अत्याचारों का बहु अनुमान लगा सकता है और साथ ही उनकी वर्तमान दशा से भी तुलना कर सकता है। एक ओर जिनके टूट फूट कर [illegible] वाली मसजिदों के खण्डहर बनते जाते हैं तो दूसरी ओर वे ऐसी कोठरियों में निवास-निवास कर शिव और पारसनाथ की मूर्तियाँ उन्हीं के पास नए बने हुए मन्दिरों में स्थापित की जाती हैं और धर्माभिमानी मनुष्य [illegible] के बजाय उन मन्दिरों में खड़े हुए पत्थर पिसते हैं तथा उन्हीं [illegible] मूर्तियों की पुनः प्रतिष्ठा के समय ढोल [illegible] नक्कारों पर बाजा बजाते फिरते हैं—जिन मूर्तियों को उनके पूर्वजों ने [illegible] समय पर सत्कार कर लिया था।

महमूद लतीफ खां सन् १५५४ ई० में मारा गया था। उसके बाद

उसके दो निर्बल क्रमानुयायिग्रो के समय तक [ग्रहमद शाह दूसरा १५५४ ई० –१५६१ ई० तक ग्रौर मुजफ्फर ३रा] नाम मात्र के लिए उसके वश मे राज्य रहा, ग्रन्त मे १५७२ ई० के नवम्वर मास की १८ वी तारीख को ग्रकबर महान् ने ग्रपना झण्डा ग्रहमदाबाद के पास ही ग्रा फहराया । इस ग्रवसर पर वडी भारी सख्या मे सभी पदवी के लोग व नगरनिवासी उसे ग्रपना सम्राट् मान कर उसकी ग्रगवानी करने गये थे ।

मीराते ग्रहमदी के लेखक ने लिखा है "कि पडित व विचारशील लोगो से यह वात छुपो हुई नही है कि सृष्टि के ग्रादिकाल से लेकर ग्रब तक जितने भी राज्यो की स्थापना हुई है उनके नाश का कारण सदा से ग्रमोरो का विद्रोह ग्रौर उनके द्वारा प्राप्त किया गया ग्रसतुष्ट प्रजा का सहयोग ही होता ग्राया है परन्तु परमात्मा की लीला विचित्र है कि यह विद्रोह इन्ही लोगो के लिए ग्रहितकर हो जाता है ग्रौर कोई तोसरी ही भाग्यशाली शक्ति उससे लाभ उठाती है । गुजरात के वादशाहो ग्रौर सरदारो का ग्रन्त भी इसी प्रकार हुग्रा । देववश राजसत्ता का नाश हो गया ग्रौर उसके ग्रनुचरो ने ग्रपने समृद्धिकाल के ग्रापस के मीठे सम्बन्धो की ग्रवगणना करते हुए गृहकलह का सूत्रपात कर दिया, खुली शत्रुता ने मित्रता का स्थान ले लिया, यहां तक कि ग्रन्त मे उन सबको दूर रख कर राजसत्ता व राजमुद्रा तैमूर के जगत-प्रसिद्ध वशज जलालुद्दीन महमूद ग्रकबर के हाथ मे चली गई ।

ग्रकबर की राजसत्ता कायम होने के पहले का समय वास्तव मे गुजरात के इतिहास में एक दु:खपूर्ण समय था । उस समय देश के मुसलमान ग्रमीरो ने महमूद (दूसरे) की मृत्यु के बाद उसके स्थान पर कृत्रिम शाहजादे को गद्दी पर बिठाया ग्रौर उसका नाम मुजफ्फर तृतीय [१५६१ ई०–१५७२ ई०] रखा परन्तु वास्तव मे तो उन्होने समस्त राज्य को ग्रापस ही मे बांट लिया था । इन ग्रमीरो में सबसे बलवान

एतमाद खाँ था जिसने राजधानी महमदाबाद व खम्भात का बन्दर तथा बीच का प्रदेश स्वाधीन कर लिया था दूसरे सरदार ने अणहिलपुर के सरहद तथा साबरमती और बनास नदी के बीच का प्रदेश दबा लिया सूरत तथा भरोंच के बन्दरगाह चम्पानेर का गढ़ और माही नदी के दक्षिण का परगना तीसरे के हिस्से में आया चौथे ने धंधूका और धोलका पर अधिकार जमाया तथा पाँचवें ने सोंगार के किले [जूनागढ] में रह कर सोरठ के द्वीप-कल्प पर राज्य विस्तार करने का मनसूबा किया । उस समय देश में हिन्दू पटावतों का लश्कर भी बहुत था कुरो से डोसा तक के उत्तरी परगने मे तीस हजार राजपूत घुड़सवारों का पूरा लश्कर मौजूद था बागलाणा के जमीदार बोहर जी के पास मूलर और सहलर के किले थे तथा उसके तीस हजार घुड़सवार नौकरी देते थे सोंध के जमींदार व छत्रसाल कोली भी नौकरी देते थे इसके बदले में उन्हें गोधरा प्रान्त के दो परगने मिले हुए थे नागोर परगने के वतनदार (मौरूसी जमीदार) भी एक बड़े भारी राजपूत रिसाले के साथ नौकरी में उपस्थित रहते थे इनके अतिरिक्त, ईडर के राव पूजा राठौड़ राजपीपला के राव जयसिंह डूँगरपुर के रावल आसा सरदार, अपने आश्रित चार सौ ग्रासियों सहित जाम और जुना गंगार जाड़ेचा भी सैनिक सहायता देते थे जिसमें सोलह हजार तो केवल घुड़सवारों की ही संख्या थी । इन सत्तावान राजपूत ठाकुरों मे गुजरात के बादशाहों के अत्याचारपूर्ण समय में भी किसी प्रकार अपनी जमीन बचा रखी थी फिर इस उन [मुसलमानों] के डरसे हुए काल में तो कोई विशेष भय था ही नहीं इसलिए जिन जंगली जातियों को इनके भारी दाबे मे अब तक दबाए रखा गया था और जो पूर्ण तया नष्ट न हो पाई थी वे अब फिर दबी हुई अग्नि के समान भभक उठीं चारों ओर उत्पात इधर उधर धावे करना शुरू कर दिए ।

जब अकबर ने गुजरात विजय करली तब उसने सम्पूर्ण प्रान्त पर एक सूबेदार और उसके नीचे एक मालगुजारी वसूल करने वाले तथा

एक सेना का प्रवन्ध करने वाले अधिकारी की नियुक्ति की। प्राय बहुत ऊँचे कुल के व्यक्तियो को ही सूबेदार नियुक्त किया जाता था। जैसे कि] इस पद पर अकबर के दूध-भाई खान अजीज कोका और शाहजादा सुल्तान मुरादबख्श ने कार्य किया, जहांगीर के समय मे शाहजादा शाहजहां ने और शाहजहां के समय मे शाहजादा मुराद ने भी इस पद पर कार्य किया। इनके समय की घटनाओ का समावेश दिल्ली के सामान्य इतिहास मे ही हो जाता है और मुसलमान लेखको के वृत्तान्त से प्रस्तुत पुस्तक के विपय, राजपूत ठाकुरो सबन्धी विवरण पर बहुत ही कम प्रकाश पडता है। हम देखते हैं कि जब अकबर ने भूमिकर सम्बन्धी प्रबन्ध करने के लिए राजा टोडरमल को गुजरात भेजा तो उसने अपने स्वामी की इच्छानुसार राजपूत सरदारो और साम्राज्य के बीच प्रीतिपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने के लिए वे सभी उपाय किये, जो आवश्यक और सभव थे यह इसलिए नही कि अकबर की धारणा देश पर एक मात्र मुसलमान शासक होकर रहने की थी वरन् वह तो सम्पूर्ण भारतवर्प की एक सघटित और विशाल राष्ट्रिय जाति पर राज्य करना चाहता था। सन् १५७६ ई० मे जब टोडरमल गुजरात की सरहद पर आकर पहुँचा तो सिरोही के जमीदर ने पांच सौ रुपए और एकसौ मोहरे कर[1] के रूप मे दी। राजा टोडरमल ने इसके बदले मे उसको शिरोपाव, एक जडाऊ शिरपेच और हाथी देकर दिल्ली सरकार की ओर से गुजरात के सूबे की सहायता के लिए उसको दो हजार घोडे रखने का मनसब दिया। वहां से सूरत जाते समय मार्ग मे टोडरमल की भेट भडौच में रामनगर के जमीदार से हुई। उसने बारह हजार रुपए और चार घोडे भेट किए जिसके बदले में उसे भी उचित सम्मान प्राप्त हुआ। उसी समय इस जमीदार को पद्रह सौ घोडे रखने का

---

१ मिलते समय 'नजराना' या भेंट दी जाती है न कि वार्षिक कर। यहाँ और आगे के उद्धृत अंशो में 'आँकडो' का ठीक ठीक व्यौरा देना बहुत कठिन है।

मनसब मिला और उसने एक हजार सवारों से गुजरात के सूबे की नौकरी करना स्वीकार किया।

गुजरात से दिल्ली लौटते हुए राजा टोडरमल की मुलाकात डूंगरपुर के जमीदार रावल आसकरन से हुई। उसे भी सिरोपाव देकर ढाई हजार सवारों के स्वामी की पदवी दी गई। उसने गुजरात प्रान्त की सेवा करना कुबूल किया और मीरथाम से आगे तक टोडरमल को पहुँचा कर वापस जाने की आज्ञा ली।

आईन-ए अकबरी में लिखा है कि ईडर का राव नारायणदास पाँच सौ घुड़सवारों और दो हजार पैदलों का स्वामी था इससे विदित होता है कि उसने भी सिरोही और डूंगरपुर के ठाकुरों के समान ही गुजरात के सूबे में आश्रय प्राप्त किया होगा। भाटों द्वारा रचित वीरम देव-चरित्र' में भी ईडर के राव को दिल्ली के बादशाह का पटावत [मनसबदार] ही लिखा है। अबुल फजल ने गुजरात के अन्य ठाकुरों के विषय मे भी ऐसा ही लिखा है। वह कहता है कि झालावाड़ पहले स्वतन्त्र राज्य था उसमे दो हजार दो सौ गाँव थे उसका विस्तार सत्तर कोस की लम्बाई और चालीस कोस की चौड़ाई में था' इस राज्य में दस हजार घोड़े और इतने ही पदल थे। अब इसमें दो हजार घुड़सवार और तीस हजार पैदल हैं और यह गुजरात के सूबेदार के आधीन है। इसमें झाला जाति के राजपूत रहते हैं। यद्यपि हाल ही मे यह चार भागों में विभक्त हो गया है परन्तु अहमदाबाद के नीचे इसको एक ही परगना गिना जाता है। इस परगने मे बाहर बहुत हैं। यहाँ पर जिन चार भागों के लिए लिखा है वे हलवद बड़वाण लखतर और मोरबी हैं जिनके विषय में आगे चलकर लिखेंगे। इसी लेखक ने लिखा है कि सोरठ भी चार भागों में बंटा हुआ था जिनमें से सबसे पहले भाग का तो जो साधारणतया 'सब-सोरठ' कहलाता है जंगल मे घनेपन और पहाड़ियों की बीहड़ता के कारण बहुत दिनो तक पता ही नहीं चला था। जूनागढ़ इसी भाग में स्थित

कहलाता है, जगल के घनेपन और पहाडियो की बाकटेढ के कारण बहुत दिनो तक पता ही नही चला था। जूनागढ इसी भाग मे स्थित था। नव-सोरठ में तथा दूसरे विभाग, पट्टण सोमनाथ मे गहलोत जाति के राजपूत रहते थे। इनमे से प्रत्येक ठाकुर के पास एक हजार घुडसवार और दो हजार पैदल थे, तथा इनके साथ ही उनके पास अहीर लोग भी रहते थे। ये अहीर प्राय काठी जाति के होते थे और घोडो की देख भाल करना ही इनका काम होता था, ऐसा दूसरी जगह लिखा है। तीसरे विभाग के विपय मे अबुलफजल ने लिखा कि "शिरौंज (शत्रुञ्जय) पर्वत की तलहटी के आगे एक विशाल नगर है, यह नगर यद्यपि बहुत मनोरम स्थान पर स्थित है परन्तु अब यह पुर्ननिर्माण के योग्य नही रह गया है।" बहुत सम्भव है कि यह सकेत वल्लभीपुर की ओर हो। आगे चल कर उसने फिर लिखा है, "भाबीडचीन[1] और गोघा का बन्दर उसके आधीन थे, पीरम का द्वीप भी इसी भाग मे है, यहा नदी के बीच में नौ कोस का एक चतुष्कोण पहाड है, पहले यह एक बडे भारी राज्य की राजधानी था। इस भाग का जमीदार गोहिल जाति का है जो दो हजार घुडसवारो और चार हजार पैदलो का सरदार है।" चौथे विभाग मे वाला राजपूतो की बस्ती थी जिसमे महुआ और तलाजा के बन्दर भी सम्मिलित थे। इस विभाग से सूवे को तीन सौ घुडसवारो और पाँच सौ पैदलो की सहायता मिलती थी।

इससे आगे इस लेखक ने जो कुछ लिखा है वह ज्यो का त्यो समझ मे नही आता है। वह लिखता है कि वाढेरा[2] के तावे मे अरामडा का बन्दर था जो बहुत मजबूत जगह थी, यहाँ पर एक हजार सवार और दो हजार पैदल रहते थे। वाजा नामक मिश्रित जाति के अधिकारमे झाजीर का बन्दर था और वहाँ से दो सौ घुडसवार व इतने ही पैदलो की सहा-

१ यहाँ फार्वस साहव ग्लेडविन का अनुकरण करके भ्रम मे पड गये हैं। वास्तव में अवुलफजल ने 'यधाविद-ए-जैन' [जैनो का पवित्र स्थान] विशेपरण शत्रुञ्जय के लिए लिखा है। देखिए जैन्टकृत अनुवाद भा० २, पृ० २४७।

२ मूल में Badhel लिखा है—यह Tribe या जाति का नाम है।

यता प्राप्त होती थी। उसने यह भी लिखा है कि चित्तौड़ जाति से एक हजार घुड़सवार और दो हजार पैदल की सहायता मिलती थी यहाँ पर 'चित्तौड़ जाति' से शायद चूँ मलो के जेठवों से तात्पर्य है। एक भाग में वामेला जाति के लोग रहते थे जिनके पास दो सौ घोड़ों और इतने ही पैदलो की सरदारी थी। सोरठ के उसी भाग में काठी लोग भी रहते थे जिनके पास छ हजार घोड़े और दस हजार पैदल थे। ढूँढी नदी के किनारे पर अहीरों की एक दूसरी शाखा रहती थी जो पुरखा के नाम से प्रसिद्ध थी। इन लोगों के पास काठियों से आधा बल था। कच्छभुज के जाडेचों का सैनिक बल दस हजार घुड़सवार और पन्द्रह हजार पैदल था ये लोग लम्बे और खूबसूरत सैनिक होते थे और लम्बी लम्बी दाढ़ियाँ रखते थे। जाम 'सत्तरसाल' कच्छ भुज के राजवंशी सरदार का पौत्र था जिसको साठ वर्ष पहले रावल ने निकाल दिया था[1] जो सोरठ में बटवा[2] बधेल (बाडेल) और नवनीत के बीच में एक उपजाऊ प्रदेश म जा बसा था। उसने उस प्रदेश का नाम 'छोटा कच्छ' (हालार) रखा था और नवानगर नामक शहर बसा कर उसको राजधानी बनाया था। जाम की सेना में सात हजार घुड़सवार और आठ हजार पैदल थे।

मीरात-ए-अहमदी म लिखा है कि एक बार नवानगर के जाम ने अहमदाबाद के अन्तिम सुल्तान मुजफ्फर तृतीय को आश्रय दिया था परन्तु अन्त म उसने दगा करके उसको शत्रुओं के हाथ म सौंप दिया। सूबेदार खान अजीज कोका ने सन् १५९० ई मे मुजफ्फर और जाम (दोनो ही) को हरा दिया था इसलिए उनको भाग कर पहाड़ियों

---

१ पाँचवें प्रकरण मे दी हुई पादटिप्पणी के अनुसार जाडेचा की वंशावली मे ११वें राजा राव खेंगारजी प्रथम ने जाम रावलजी को कच्छ से निकाल दिया था। उसने ई स १५३९ मे नवानगर बसा कर गद्दी कायम की। उसके बाद उसका पुत्र विभोजी १५६२-१५६९ ई तक रहा। उसके बाद उसका पुत्र जाम सताजी उपनाम 'सत्तरसालजी' १५६९ई से १६०८ई तक रहा।

२ बटवा—जेठवा जिस शाखा मे पोरबन्दर के राणा सम्बद्ध हैं।

मे छुपना पडा। इस विजय के बाद सूबेदार ने नवानगर को लूट लिया और जूनागढ को घेर लिया, उस समय मुजफ्फर और उसके साथियो ने उनकी रक्षा करने का प्रयत्न किया अत वह असफल रहा इसलिए अहमदाबाद लौट आया और, जैसा कि इतिहासकार लिखता है, उसने अपने सरदारो को अपनी अपनी जागीर पर कायम रहने की छूट दे दी। दूसरे ही वर्प जूनागढ सूबेदार के हाथ मे आ गया और मुजफ्फर शाह ने भाग कर राव खँगारजी का आश्रय लिया[1]। अजीज कोका ने अपने लडके को फौज देकर उनका पीछा करने के लिए भेजा। रास्ते ही में जाम ने आकर उसकी आधीनता स्वीकार करली और दोनो मे सन्धि हो गई। निराश्रय सुल्तान जाम की सहायता से पकडा गया और उसके बदले मे उसे सरकार की ओर से मोरबी का परगना मिल गया जो पहले उसी के अधिकार मे था।

गुजरात की पूर्वीय सीमा पर जो राजपूत सस्थान थे उनके विषय में अबुलफजल ने इस प्रकार लिखा है-"मेरव और भग्रीच के बीच के पास एक देश है जो 'पाल' कहलाता है, इसमे माहेन्द्री नदी बहती है। इसी देश से गुजरात की ओर एक स्वतन्त्र जमीदार का सस्थान है, जो डूंगरपुर कहलाता है। इन दोनो ही देशो के शासको के पास पांच-पांच हजार सवार और एक-एक हजार पैदल हैं। ये दोनो ही राजा सीसोदिया जाति के और राणा के सम्बन्धी थे परन्तु आजकल के शासक उनसे भिन्न जाति के हैं।"

"पट्टण राज्य के पडौस ही मे एक और देश है जिसकी राजधानी सिरोही है। वहाँ के शासक के पास एक हजार सवारो और पाँच हजार पैदलो का बल है। ईदूगढ [आबूगढ?] पर्वत पर उसका किला है जिसमे बारह ग्राम आ गये हैं,वहाँ पर पानी और घास की बहुतायत है। नन्दुरबार के पूर्व मे, मेडो[माण्डू] के उत्तर मे नाँदोद के दक्षिण मे और

१ उस समय महाराव भारमल जी गद्दी पर थे और वास्तव मे उन्होने ही मुजफ्फर को धोखा दिया था। इस प्रकार उनको मोरवी का पैतृक सूबा इनाम में मिला था—बाम्बे गजेटियर भाग १(१) पृ० २७२।

भाम्मानेर के पश्चिम में एक और राज्य है जिसकी लम्बाई साठ कोस और चौड़ाई चालीस कोस है। यहाँ का शासक चौहाण वंश का है और यहाँ की राजधानी अलीमोहन है। यहाँ पर जंगली हाथी बहुत पाए जाते हैं और यहाँ का सेना-बल छः सौ घुड़सवार और पन्द्रह हजार पैदल हैं।

'सूरत और नन्दुरबार की सरकारों के बीच में एक सुन्दर बसा हुआ पहाड़ी देश है जो बागलाणा कहलाता है। यहाँ का ठाकुर राठौड़ वंश का है और तीन हजार सवारों तथा दो हजार पैदलों का सरदार है। यहाँ पर जामुन सेब अंगूर, अनानास दाड़िम (अनार) और जम्भीरी बहुतायत से पैदा होते हैं। बागलाणा में सात किले हैं जिनमें से मोलीर व सालीर के किले बहुत सुदृढ़ हैं।

नांदोद और नन्दुरबार की सरकार के बीच में पचास कोस लम्बा और चालीस कोस चौड़ा एक पहाड़ी देश है जहाँ पर गोहिल जाति के राजपूत बसते हैं। इस समय यहाँ का राजकाज एक तिवाड़ी ब्राह्मण के हाथ में है और जो राजा है वह नाम मात्र का है। वह कभी राजपीपला में और कभी धूमका में रहता है। इस राज्य में तीन हजार घुड़सवार और सात हजार पैदल हैं। धूमका का पानी बहुत खराब है परन्तु यहाँ पर चावल और शहद बहुत अच्छे होते हैं।'[1]

ऊपर लिखे हुए अन्तिम संस्थान के विषय में हम लिख चुके हैं कि उसको पीरम के राजा मोखड़ाजी के पुत्र समरसिंह ने स्थापित किया था और अपनी माता के कुटुम्ब की ओर से उस पर अधिकार प्राप्त किया था।

---

१ देखो ग्लेडविन कृत 'आईन ए अकबरी' का अनुवाद 'भाग २ गुजरात-प्रान्त विषयक लेख—पृ ७२ से ९९।

[ग्लेडविन कृत अनुवाद (जो सन् १७ ई.) इस पुस्तक का पहला रूपान्तर है जो अपूर्ण हस्तलेखों के आधार पर किया गया है, अतः इसमें बहुत सी त्रुटें रह गई हैं। प्रामाणिक अनुवाद ब्लॉकमैन (भाग १ १८७३) और जरेट (भाग २ १८९४) का है।

प्रकरण आठवाँ

ईडर का वृत्तान्त—राव नारायणदास—राव वीरमदेव—राव कल्याणमल

ईडर के[1] राव पूँजा के बाद उसका पुत्र नारायणदास गद्दी पर बैठा जिसके विषय मे कहा जाता है कि उसने अकबर द्वारा

---

१ ईडर के रावो की वंशावली —

*जयचन्द्र राठौड (११९४ ई० मे कन्नौज का राज्य गया)
|
शेखजी
|
- १ शियोजी
  - २ असोथाम (मारवाड की गद्दी से)
- साइतराम (१२१२ ई० मे आकर मारवाड का राज्य स्थापित किया)
  - १ सोनिंग (भोला भीम से सामेत्रा लिया, फिर वहाँ से ईडर विजय करके सन् १२५७ मे राव पदवी धारण की)
    - |
  - अजमल (ओखा लिया)
    - वागाजी (वाजी)
    - वाढेल (वढिल)

---

* जयचन्द वस्तुत गाहडवाल था, राठौड नहीं। देखें—ओझा जी कृत राजपूताने का इतिहास, जोधपुर (प्रथमखण्ड) पृ० ३५–१४५। रेऊ जी ने गाहडवालों को राठौडों की एक शाखा माना है।

निपुक्त गुजरात के सूबेदार खान मजोज कोका नामक मुसलमान सरदार

---

२ राव अमीमलजी (१ ०१–१२८५ ई)

३ धवलमलजी (१२८५–१३१ ई)

४, लूणकरणजी (१३१०–१३२४ ई)

५ खरहत्थजी (केहरमलजी १३२४–१३४५ ई०)

६ रणमलजी (१३४५–१४ ३ ई)

७ राव पूंजाजी (१४ ३–१४२८ ई)

८ नारायणदास (१४२८–१४८१ ई)

९ राव भाण (१४८१–१५ १ ई)

१० सूरजमलजी (केवल १८ माह राज्य किया)

११ रायमलजी

१२ भारमलजी (१५१४–१५४२ ई)

१३ राव पूंजाजी (दूसरे) (१५४२–१५५१ ई)

१४ नारायणदास (दूसरे) (१५५१–१५६८ ई)

भीमसिंहजी (१५०१–१५१४) (रायमलजी को गद्दी से उतार कर गद्दी पर बैठे, पर बाद में रायमलजी ने फिर गद्दी ले ली।)

के विरुद्ध षडयन्त्र खडा करने मे सहायता दी थी।[1] (ई० स०१५७३) स्वय अकबर ने चढाई करके इस विद्रोह को दबा दिया और ईडर के राव को दण्ड देने के लिए एक बडी फौज भेजी। दो वर्ष बाद खान अजीज कोका के स्थान पर मिरजा खान गुजरात का सूबेदार नियुक्त हुआ, उसने ईडर को दबाने के लिए एक अच्छी सेना भेजी और अन्त मे शाही सेना से परास्त होकर १५७६ ई० मे राव नारायण दास को

१५–वीरमदेव (१५७८–१५९६ ई०) | रायसिंहजी | किशोरसिंह | गोपालदास | १६–कल्याणमल (उदयपुर के राणा प्रताप का भानजा) (१५९९–१६४३ ई०)

१६–कल्याणमल के पुत्र:
- १७–जगन्नाथ (१६४३–१६५६)
- २०–गोपीनाथ (राव अर्जुनदास के बाद गद्दी पर बैठा (१६५९–१६६४ ई०)

१७–जगन्नाथ के पुत्र:
- १८–राव पूँजाजी (तीसरे) (१६५७ ई०)
- १९–अर्जुनदास (१६५८ ई०)

२०–गोपीनाथ:
- कर्णसिंहजी

कर्णसिंहजी के पुत्र:
- २१–राव चाँदोजी १७१८ ई० मे गद्दी पर बैठा (इस राव ने ईडर का राज्य खो दिया। अपने ससुर पोल के पलिआर को दगे से मार कर उसका राज्य ले लिया। इसके वशज आज भी पोल में मौजूद हैं)
- माधोसिंह

१ देखें-बर्ड की 'मीरात अहमदी' का पृ० ३२५, ३३९, ३४३ और ३४९।

पहाड़ियों में भाग जाना पड़ा। वहाँ से निकल कर उसने फिर मुग़ल मार्गों से युद्ध किया परन्तु उसकी हार हुई और राजधानी बादशाह के हाथ में आ गई।

आईन-ए-अकबरी में राव नारायणदास के विषय में निम्नलिखित वृत्तान्त लिखा है 'ईडर का जमींदार, जिसका नाम नारायणदास है जो बैलों के गोबर में से दाने चुन कर खाने का व्रत पालन करता है ब्राह्मण लोग इस प्रकार के भोजन को बहुत पवित्र मानते हैं। यह नारायण दास राठौड़ जाति के मुख्य राज्य-कर्ताओं में से एक है इसके पास ५०० घुड़ सवार और दो हजार पैदल हैं।'

राव नारायणदास के बाद उसका कुँवर वीरमदेव गद्दी पर बैठा जो भाट लोगों की दन्त-कथाओं का बहुत प्रीतिपात्र नायक था। उसकी युवावस्था का एक लम्बा पद्यबद्ध वर्णन है जिसमें यह बतलाया है कि पचीस वर्ष की अवस्था में किस प्रकार वह मारवाड़ के उत्तर में पुङ्गल देश में गया और वहाँ के एक धनी व्यापारी की पद्मा नामक पुत्री का प्रेम प्राप्त किया उस सुन्दरी को अपने शस्त्रों के बल कर वीरता से ले आया जब पुङ्गल देश की सेना लड़ने आई तो वहाँ के कितने ही सरदारों को मार गिराया। दूसरे भाट ने इसके बाद की भी कथा लिखी है—इस कथा के यथासम्भव अक्षरशः अनुवाद को पाठकों के मनो विनोदार्थ यहाँ पर उद्धृत करते हैं। इस कथा का नाम है—

'राव श्रीवीरमदेव का चरित्र'

वीरमदेव के पुङ्गल देश से लौटने के डेढ़ वर्ष बाद अकबर बादशाह ने हिन्दुस्तान के सब राजाओं को दिल्ली बुलाया। उदयपुर, जोधपुर और बूँदी आदि के राजाओं ने इस आज्ञा को शिरोधार्य की। राव नारायणदास और वीरमदेव भी वहाँ पर गए। एक दिन एक शेर, जिसको बादशाह ने पिंजड़े में बन्द करवा रक्खा था छूट गया। अकबर

ने उसको पकडने के लिए लोगो को आज्ञा दी, परन्तु सभी योद्धाओ ने कहा, 'हुजूर, शेर नही पकडा जा सकता।" वीरमदेव ने कहा, "एक सच्चा राजपूत शेर का पकड सकता है परन्तु यह नही कहा जा सकता कि शेर राजपूत को मार डाले या राजपूत शेर को।" बादशाह ने कहा, "तुमने बहुत ठीक कहा।" इसके बाद वीरमदेव शेर को पकडने चला। उसने अपने हाथ मे एक छोटी ढाल ली और लडने के लिए आगे बढा। वह तुरन्त ही उससे गुथ पडा और अपना बायाँ हाथ, जिस पर कपडा लिपटा हुआ था, शेर के मुँह मे घुसेड कर दाहिने हाथ की तल-वार से उसको चीर डाला। इस प्रकार उसने शेर को मार दिया और बादशाह ने प्रसन्न होकर उसको एक बहुमूल्य पोशाक इनाम मे दी। अकबर ने नारायणदास को एकान्त मे यह भी कहा, "मुझे यह विदित नही था कि तुम्हारे वीरमदेव जैसा पुत्र है, इसीलिए तुम्हारे विषय में मेरी धारणा वैसी नही थी, जैसी होनी चाहिए थी।"

अब, वीरमदेव ने बादशाह से एक ही वरदान मांगा कि जब कभी वह दरबार में हो और उसे ईडर जाने की आवश्यकता पडे तो उसे तुरन्त ही छुट्टी मिल जाया करे। अकबर ने इस बात को मान लिया और आवश्यकता पडने पर तुरन्त ही आज्ञा देनेका वादा भी कर लिया। इसके बाद नारायणदास और वीरमदेव सलाम करके ईडर लौट गए। वहाँ पहुँचते ही नारायणदास की मृत्यु हो गई और वीरमदेव गद्दी पर बैठा। नारायणदास के चार रानियाँ थी, सबसे बडी रानी उदयपुर के महाराणा प्रतापसिंह की बहन थी, इसी रानी से सबसे बडे दो लडके हुए थे। दूसरी रानी जैसलमेर के भाटी राजा की लडकी थी, यह रायसिंह और किशोर सिंह की माता थी। तीसरी रानी शेखावत वंश की थी, इसके गोपालदास नामक एक पुत्र था। चौथी रानी कोटा के हाडावंशीय राजा की पुत्री थी। इनके अतिरिक्त उसके तीन रखेलियाँ (पासवाने) भी थी। ये सातो ही उसके साथ सती हो गयी।

राव के सरदारों में से एक का नाम हेमतसिंह बीहोला था। वह एक बार अपने बहनोई रावल रामसिंह से मिलने के लिए डूंगरपुर गया। भोजन के समय रामसिंह ने बहुत आग्रह करके उसको अपने साथ एक ही थाली में खाने के लिए बिठाया। हेमतसिंह की आँखें कमजोर थी इसलिए भोजन करते समय उनमें से पानी बहने लगा। यह देख रामसिंह बोला 'मुझे इससे अत्यन्त घृणा होती है यदि मुझे पहले मालूम होता तो मैं तुम्हें अपने साथ कभी न बिठाता' इन अपमान भरे शब्दों को सुन कर हेमतसिंह तुरन्त उठ बैठा और सीधा वीरमदेवके पास ईडर पहुँचा। वहाँ जाकर उसने राव से कहा 'डूंगरपुर पर चढ़ाई करने लायक मुझमें तो बल नहीं है इसलिए आप कृपा करके मेरे साथ चलें। यदि आप न चलेंगे तो मैं धन-जन सहित डूंगरपुर पर चढ़ाई करूँगा और वहीं मर रहूँगा।' वीरमदेव ने कहा यदि तुम नव-वर्ष के दिन तक यहाँ ठहरो तो मैं तुम्हारे साथ चल सकता हूँ।

नववर्ष का उत्सव मना कर अपनी प्रतिज्ञानुसार राव डूंगरपुर पर चढ़ चला। रास्ते में उसको दो भाटों के लड़के मिले जो मारवाड़ में अकाल पड़नेके कारण वहाँ से गुजरात जा रहे थे। उनमें से एक लड़का अपना भोजन लिए हुए सड़क के किनारे-किनारे जा रहा था। जब वीरमदेव की सवारी आई तो वह एक झाड़ी के पास खड़ा हो गया और सवारी देखने लगा। राव ने उसको देख कर पूछा 'तुम कौन हो और झाड़ी में खड़े-खड़े क्या देख रहे हो?' उसने उत्तर दिया 'महाराज मैं एक भाट का लड़का हूँ मैंने सुना है कि आप झाड़ियों में भी दान की वर्षा करते हो इसलिए यह देख रहा हूँ कि इस झाड़ी में आपने क्या वर्षा की है।' वीरमदेव ने अपने हाथ के सोने के कड़े निकाल कर फेंक दिए और कहा 'अच्छी तरह देख तुझे झाड़ी में कुछ न कुछ मिल ही जायगा।" आगे चलने पर दूसरा लड़का कुए पर खड़ा हुआ मिला। उससे पूछा 'क्या यह कुआ तुम्हारा है?' उसने उत्तर दिया

"महाराज यह मेरा कैसे हो सकता है ? यह तो आप ही का है ।" तब राव ने कहा, "अच्छा मैंने यह कुआ तुम्हे भेंट कर दिया ।" इसके बाद उन दोनो लडको का विवाह भी करवा दिया और उनके वशज आज तक उस कुए की उपज वसूल करते हैं । इस अवसर पर राव ने आठ या दस दिन का मुकाम वराली मे रक्खा ।

जब वराली मे वीरमदेव का पडाव समलेश्वर तालाब के किनारे लगा हुआ था तब उसका भाई रायसिह भी शिकार खेलता हुआ उधर आ निकला । वह बडा अच्छा शिकारी था । उसको देख कर वीरमदेव ने सोचा कि यदि यह जिन्दा रहेगा तो अवश्य ही कभी न कभी मेरी गद्दी छीन लेगा इसीलिए वडाली से लौटने पर उसने रायसिह को अपनी तलवार से कत्ल कर दिया । इस रायसिह के एक बहन भी थी जिसका विवाह जयपुर हुआ था । उसने भाई के बध की बात अपने मन मे रक्खी और बाद मे ऐसा लेख मिलता है कि उसी ने वीरमदेव को विष देकर मार डाला ।

इसी प्रकार दिन बीतते रहे और फिर नया वर्ष आ पहुँचा । राव ने अपनी सेना एकत्रित की जिसमे उसके सरदारो सहित अठारह हजार घुडसवार इकट्ठे हुए । इस सेना ने कूच करके पहला मुकाम वीछीवाडा मे किया, उनका लडाई का सामान, जिरह-बख्तर, बन्दूके, तोपे आदि, ऊँटो पर लदा हुआ था,घुडसवार उनकी रक्षा करते हुए साथ चलते थे । जिस हेमतसिह के हेतु डूंगरपुर पर चढाई करनी पडी थी वह भी साथ ही था । वीछावाडा का ठाकुर डूंगरपुर राज्य की आधीनता मे था इसलिए जब उसने पूछा कि राव की सवारी किधर जा रही है, तो उसे यही वतलाया गया कि राव मेवाड और मालवा की सीमा पर चम्वल नदी के किनारे अपने ससुराल रामपुर जा रहे है । परन्तु उसने सोचा कि, अपने राजा और हेमतसिह मे शत्रुता है और वह भी अपने सब आदमियो, वन्दको और लडाई के सामान के साथ मौजूद है, यह

सब लेकर रामपुर जाने की क्या आवश्यकता है? इस प्रकार वह संशय में डूबा रहा।

तब ईडर के कुछ सरदारों ने राव से कहा 'लोग यह कहेंगे कि राव ने चोर की तरह चुपके से आकर डूंगरपुर पर चढ़ाई कर दी यदि वह पहले से कह कर आता तो यह कभी नहीं जीत सकता था' इसलिए इस भेद को अब खोल ही देना चाहिए।' राव ने कहा 'ठीक है ऐसा ही करो। इस पर बीछीवाड़ा के ठाकुर को कहला दिया गया कि हम डूंगरपुर पर चढ़ाई करने आ रहे हैं तुम जाकर वहाँ के रावल से साफ साफ कह दो कि वह हमसे लड़ने के लिए तैयार रहे। ठाकुर ने ऐसा ही किया और रावल ने यह समाचार सुनकर अपने राज्य के सभी सरदारों को बुला भेजा तथा लड़ाई के लिए तैयार हो गया। वीरमदेव के पास भी दूत द्वारा कहला भेजा 'तुम्हारी जब इच्छा हो तभी आ जाओ हम युद्ध के लिए तैयार हैं। आठ दिन तक राव ने अपना मुकाम वहीं रक्खा और फिर जब डूंगरपुर के बिलकुल नजदीक आ पहुँचा तो दोनों ओर से तोपें चलकर लड़ाई शुरु हुई। आक्रमणकारियों ने डूंगरपुर के किले और महल का बहुत सा भाग तोड़ डाला जो आज तक उसी दशा में पड़ा है। दस दिन बाद राव ने अपने सिपाहियों और घोड़ों को जिरहबख्तर पहना कर हमला किया इस अवसर पर दोनों के सौ–सौ आदमी मारे गये। रावल अपने कुटुम्ब को लेकर भाग गया और राव ने साढ़े तीन दिन तक शहर को लूट कर जितना खजाना इकट्ठा किया जा सकता था उतना कर लिया और फिर ईडर लौटा। उसके चले जाने पर रावल फिर लौट आया।

इसके कुछ दिन बाद ही बादशाही लश्कर ने उदयपुर पर चढ़ाई की और राणा प्रतापसिंह भाग कर बीछाबाड़ा आ गए (यह बीछाबाड़ा पामोरा के पास है)। उदयपुर के राणा क्रमश: पिता के बाद पुत्र

बाहरबाट होते आए थे और प्राय बादशाही देशो मे ही गडबडी मचाया करते थे। बादशाह ने चित्तौड पर चढाई कर दी और वहां के किले के किवाड लाकर दिल्ली के दरवाजे के लगा दिये। इस झगडे में बावन राजा मर चुके थे और राणा विपत्तिकाल मे जमीन पर कपडा डाल कर सोते थे, हजामत नही बनवाते थे और कभी भोजन करते तो कुश्का की रोटी मिट्टी के बर्तन मे बना कर। इसी कारण अब तक भी वहां के राणा अपने बिस्तरो के नीचे कपडा डलवाते हैं, दाढी नही मुंडवाते और नित्य भोजन के समय थोडा सा कुश्का अवश्य ही खाते हैं। आज तक चित्तौड के दरवाजे पर नए किवाड नही लगे हैं और जब अंग्रेज सरकार ने राणा जी को नए किवाड चढवाने अथवा उनकी इच्छा के अनुसार ही किवाड मंगवा लेने की सलाह दी तो उन्होने उत्तर दिया कि, 'जब हथियार के बल पर हम किवाड वापस लावेगे तब ही इस दरवाजे पर किवाड चढेगे।[1]''

जब राणा बीछवाडा में चला आया तो उस समय चांपा नामक एक मेवाडी भील उसके विरुद्ध गडबडी करने लगा। राणा ने उसको उस देश से बाहर निकाल दिया इसलिए वह ईडर के पहाडी भाग मे जाकर रहने लगा और शहर मे दिन दहाडे व रात को चोरियां करने लगा। इसकी गडबडियो से तग आकर राव वीरमदेव ने अपने सरदारो से कहा, "चांपा भील ने देश मे बहुत उपद्रव मचा रक्खा है, उसे पकड़ कर लाने वाले को मैं इनाम दूंगा।" इस पर दूधालिया के ठाकुर ने कहा, "मैं उसको पकडकर लाऊँगा।" जब चांपा को यह समाचार मिला तो उसने और जगह लूटपाट बन्द करके दूधालिया को ही अपना केन्द्र बना लिया और रात दिन वही पर उसके हमले होने लगे। तंग आकर ठाकुर ने उसे कहला भेजा, " मैं तुझे नही पकडूंगा, तू मेरे

---

१ मेवाड के राणा प्रतापसिंह का वृत्तान्त-टॉड कृत 'राजस्थान' भाग १ पृ० ३२१ से ३५० तक में मेवाड का इतिहास प्रकरण ११ में है।

गाँव को लूटना बन्द करदे। कुछ महीनों बाद राव ने फिर अपने सामन्तों को चांपा को पकड़ लाने के लिए कहा। अब की बार मोहनपुर के ठाकुर ने उसको पकड़ लाने का बीड़ा उठाया। जब चांपा को पकड़ने की प्रतिज्ञा करके मोहनपुर का ठाकुर अपने गाँव लौट रहा था तो रास्ते में वह सावली के तालाब पर ठहरा और वहीं पर एक बड़ के पेड़ के नीचे अपने हथियार रख कर विश्राम करने लगा। उसके साथ के तीन चार घुड़सवार गाँव मे सामान खरीदने चले गए थे इसलिए वह अकेला ही सो रहा था। सूर्य की गति के साथ साथ जैसे जैसे वह छाया में हटता रहा वैसे-वैसे उसके हथियार दूर होते गए। इतने ही में चांपा भील वहां पर आ पहुँचा उसको ठाकुर की प्रतिज्ञा की बात मालूम हो चुकी थी इसलिए वह उसे मार डालने के इरादे से आया था। उसने ठाकुर से कहा 'आप तो मुझे पकड़ने आए है ना' । ठाकुर अपने दिल में काँप गया परन्तु उसने घबराहट को रोक कर कहा 'मेरा इरादा तुम्हें पकड़ने का नहीं था बरन् मै तो तुमसे मिलना व बातचीत करना चाहता था। यह बात बहुत दिनों से मेरे मन में थी। इस प्रकार बातों ही बातो में विश्वास देकर उसको अपने पास बिठाया और कसूंबा (अफीम) पिलाया जब चांपा उठकर जाने लगा तो ठाकुर ने सोचा कि ऐसा अवसर दुबारा नहीं आवेगा इसलिए इस बार इसको हाथ से न निकलने देना चाहिए। यह सोच कर वह चम्पा पर टूट पड़ा और उसके हाथ की तलवार व कमर में लगी हुई कटार को छीन लिया। फिर एक हाथ से तलवार और दूसरे हाथ से कटार का वार करके उसका काम तमाम कर दिया। इतने ही में उसके घुड़सवार भी आ पहुँचे उन्ही के हाथ उसने भील का सिर राव के पास ईडर भेज दिया और खुद घर लौट गया। राव ने प्रसन्न होकर उसको वे सब स्थान दे दिए जहाँ पर चापा डाके डाला करता था। इस भाग में ठाकुर ने एक गाँव बसाया जिसका नाम चांपातलिया रक्खा यह गाँव अब भी मोहनपुर के ताबे म ही है।

उन्ही दिनो वीरमदेव ने अहमदनगर के किले पर चढाई करने का निश्चय किया इसलिए उसने अपने सामन्तो को इकट्ठा किया। इनमे सबसे मुख्य पोसीना का ठाकुर बाघेला था। सेना तैयार हुई, तोपे बन्दूके और असबाब रवाना हुआ। दस बारह दिन तक अहमद-नगर पर लगातार हमला होता रहा, शहर पर कब्जा कर लिया गया, बाजार लूटे गए और विद्रोहियो को गिरफ्तार कर लिया गया। यह सब कुछ करके वीरमदेव लौटने लगा तो दुकानदार अपनी टूट फ़ुट को ठीक कराने लगे, तब राव ने कहा "यदि तुम यहाँ पर ईडर का नाम सुरक्षित रखोगे तो मैं तुम्हारे इस काम मे बाधा नही दूँगा, इसीलिए नगर के दरवाजो मे से एक का नाम 'ईडर दरवाजा' रक्खा गया।

इस चढाई में राव के साथ पीथापुर का ठाकुर भी था, इसी बैर का बदला लेने के लिए अहमदाबाद की एक फौज ने पीथापुर पर आक्रमण किया। राव भी उसकी सहायता के लिए तुरन्त ही जा पहुँचा और मुसलमानी फौज को वापस खदेड दिया। इस उपकार के बदले मे ठाकुर ने वीरमदेव के साथ अपनी पुत्री का विवाह कर दिया। यह लडकी बहुत सुन्दर थी इसलिए राव उससे प्रेम करता था। उसने उस के भाई को गुढा नामक ग्राम भी दिया जो अब तक पीथापुर के ताबे मे ही है। इसके बाद पीथापुर के ठाकुर ने बहुत दिनो तक ईडर के मन्त्री का काम भी किया।[1]

---

१ पीथापुर के विषय में भाट ने लिखा है कि जब शकूरुद्दीन ने ईडर पर चढ़ाई की तब दूधोजी ठाकुर ७०० राजपूतों के साथ मारा गया और बहुत से तुर्क भी मारे गए। १२ बाघेला, १ ठाकुर, १ गोहिल और २ पँवार दूधोजी के साथ काम आए। जब ईडर की विजय हो गई तब राव ने दूधाजी के पुत्र बाघजी को २५ गाँवों का गुढ़े का तालुका दिया जो अब तक पीथापुर के अधिकार में ही है।

इसके बाद बीरमदेव की ससुराल रामपुर से कर वसूल करने के लिए दिल्ली से एक फौज रवाना हुई। इस अवसर पर रामपुर के ठाकुर ने बीरमदेव को लिखा 'आज इस फौज ने मुझ पर चढ़ाई की है तो कल तुम्हारी बारी है इसलिए जल्दी से जल्दी मेरी मदद के लिए आ जाओ।' बीरमदेव भी एक हजार सवार और दुधियाला व मोहनपुर के ठाकुरों को साथ लेकर रवाना हो गया। इस बार पोसोना का ठाकुर रतनसिंह उसके साथ नहीं गया इसका कारण यह था कि जब राव ने अहमदनगर ले लिया तब रतनसिंह ने कहा 'रतनसिंह जैसा ठाकुर आपके साथ था इसीलिए आपने अहमदनगर पर विजय प्राप्त कर ली। बीरमदेव ने कहा 'रतनसिंह क्या कर सकता है? रियासत पर राज्य मैं करता हूँ ?' यह सुन कर ठाकुर नाराज हो गया और इस बार वह अपने घर ही रहा। उक्त दोनों ठाकुर राव के साथ रामपुर गए। वहाँ के राव का यह नियम था कि जो राजपूत कभी घायल नहीं हुआ हो अथवा जिसकी पीठ पर घाव हुआ हो उसको वह अपनी चाकरी में नहीं रखता था। लड़ाई शुरु हुई और आक्रमणकारियों की सेना को पीछे हटना पड़ा परन्तु इस झगड़े में ईडर व रामपुर के बहुत से राजपूत काम आए और ऐसा तो एक भी राजपूत नहीं बचा जो घायल न हुआ हो। जो लोग लड़ाई में मारे गए थे उनके वारिसों को बीरमदेव ने 'सिरकटी'[1] के गाँव दिए। कुछ लोगों का कहना है कि इसी सहायता के बदले में रामपुर के राव ने अपनी लड़की का विवाह बीरमदेव के साथ किया था।

इसके बाद मुसलमानी फौज ने चित्तौड़ पर आक्रमण किया और मेवाड़ के राणा ने इसका प्राणपण से सामना किया। इस लड़ाई में बावन राजा काम आये और स्वयं राणा प्रतापसिंह बुरी तरह घायल हुए परन्तु अन्त में यवन सेना को पीछे हटना पड़ा। राणा प्रतापसिंह बीरमदेव के मामा थे इसलिए इस अवसर पर बीरमदेव उनसे मिलने

---

१ युद्ध में सर (मस्तक) देकर जो सामन्त मर जाता था और उसके वंशजों को इस उपलक्ष में जो गाँव दिया जाता था वह 'सिरकटी' का गाँव कहलाता था।

के लिए उदयपुर गया और जब तक वे बिलकुल ठीक न हो गए वही रहा। उदयपुर मे पीछोला नामक एक विशाल तालाब है जिसके बीच मे बहुत सुन्दर जगमन्दिर[1] महल बना हुआ है। एक दिन, राणा और राव दोनो नाव मे बैठकर जगमन्दिर जा रहे थे। इतने ही मे एक छोटे से मछली पकडने वाले पक्षी ने आकाश से झपटकर एक मछली पर हमला किया। यह देख कर राव बहुत प्रसन्न हुआ और बोला, "वाह, वाह, इस छोटे से पक्षी की हिम्मत तो देखो।" राणा ने पूछा, "इस पक्षी ने किधर गोता लगाया ?" इस पर राव ने अपना जडाऊ कडा उतार कर पानी मे डाल दिया और कहा, 'वहाँ, उस जगह।" राणा ने कहा, "अरे, वह कडा चला गया, डूब गया।" इस पर राव ने दूसरा कडा भी उतार कर पानी मे डाल दिया और कहा, "इस छोटे से बहादुर पक्षी को राजी करने के लिए क्या हमको इनाम नही देना चाहिए ?" राव की इस उदारता का वर्णन भाटो ने कितनी ही कथाओ मे किया है।

जब राणाजी ठीक हो गए तो वीरमदेव ईडर लौटे। उसी समय मारवाड से आलोजी नामक एक चारण उससे दान लेने आया। राव का यह नियम था कि पूर्णिमा के दिन और किसी राणी के महल मे न जाकर वह रामपुर वाली राणी सहित उसी के महल के पूर्वीय झरोखे मे जब तक चाँदनी रहती तब तक बैठकर दान दिया करता था। यह दान 'लाख पसाव' कहलाता था। उस दिन भी पूर्णिमा थी इसलिए राव ने वही बैठ कर कहा, "कोई चारण हो तो लाख पसाव मगावो।" मन्त्री ने निवेदन किया, "हाँ, एक चारण आया है, उसे बुलाया जावे।' चारण ने आकर कहा, "रात के समय या तो वेश्या दान लेती है या योगिनी लेती है, मै ऐसे समय दान नही लेता हू।" राव ने कहा, "तुम्हे दान लेना हो तो इस समय लो, फिर सुबह मैं कुछ

[1] इस तालाब का वर्णन टॉड कृत राजस्थान (सस्करण १६२०, खण्ड १ पृ० २४७) मे पढिए।

नहीं दूंगा। इस पर चारण ने शपथ लेकर कहा मैं प्रातःकाल होते ही ईडर होकर चला जाऊँगा इस समय तो आप मुझे दो लाख पसाव भी दें तो मैं उसे तुच्छ समझूंगा। राव ने चिढ़ कर उसे शाप दिया यदि मेरे इनकार होने से तुम जाते हो तो तुम्हें खाने को मिल जावेगा और यदि अपने मन से जाते हो तो कहीं भी कुछ न मिलेगा। इस प्रकार उस दिन उस चारण को दान न देकर राव ने दूसरे अन्यीजनों को लाख पसाव व रेहेडू गाँव का दान दिया। मारवाड़ी चारण ने सुबह होते ही अपना रास्ता लिया। उसके साथ चालीस घोड़े पाँच ऊँट और तम्बू डेरे आदि बहुत सामान था। उसे किसी भी रजवाड़े में जहाँ वह गया सम्मान न मिला इसलिए अपने पेट के लिए उसे उक्त सब सामान बेच कर मारवाड़ लौटना पड़ा।

अब पोसीना के रतनसिंह के प्रति जो नाराज हो रहा था राव की घृणा दिन प्रति दिन बढ़ने लगी। ठाकुर भी अपने घोड़े पर सवार होकर सिरोही चला गया। रावने सोचा 'यदि मैं पोसीना के बहत्तर गाँवों में से एक गाँव ले लूं तो यह बाहरबाट निकल जावेगा और फिर यह कभी मेरे काम भी न आवेगा। यह सोच कर उसको बुलाने के लिए उसने एक चारण को सिरोही भेजा परन्तु ठाकुर ने कहा मैं ईडर तो नहीं आ सकता हाँ गुढे आ सकता हूँ। राव गुढे चला गया और वहीं रतनसिंह से मुलाकात की। बीरमदेव ने रतनसिंह के प्रति बाहर से बहुत प्यार प्रकट किया और वे दोनों एक मन्दिर में बैठ कर बात करने लगे। उसी समय सिरोही के दो राजपूत जो पहले ही से तैयार थे मन्दिर में घुस आये और रतनसिंह पर हमला करके उसको मार डाला। राव ने उसकी जागीर उसके अठारह वर्षीय पुत्र को दे दी। इस घटना का वर्णन करते हुए एक चारण ने बीरमदेव को सम्बोधित करके एक गीत लिखा—

'महाराव रतन दोनाडे मारत गात्री मलधार काजगत।
दबन मोमल बीरमदे, भीमतणा हाथियाँ भत।

'यदि तुम रतनसिंह को बुला कर धोखे से न मार देते तो जिस प्रकार भीम ने हाथियो को आकाश मे फेक दिया था उसी प्रकार मन्दिर सहित वह तुमको फेक देता।'

इसके बाद राव ईडर लौट गया परन्तु भाट का गीत उसके कानो मे गूँजता ही रहा। उसने प्रयत्न करके गीत बनाने वाले का पता चला लिया और उसको मार डालने की शपथ ली। उसने गीत बनाने वाले भाट को पकड कर लाने वाले को इनाम देने की भी घोषणा की। एक दिन वह चारण अफीम खरीदने के लिए बराली गया था, सयोग से राव भी वहाँ जा पहुँचा। चारण को जब यह खबर मिली तो वह तुरन्त वहाँ से चल दिया। राव को भी किसी ने जाकर इस बात की सूचना दे दी इसलिए वह भी घोडे पर चढ कर उसके पीछे चल दिया। थोडी दूर चलकर उसने चारण को पकड लिया और कहा, "इस मुर्दे टट्टू पर बैठ कर तुम कितनी दूर भाग सकोगे ?" भाट घोडे से नीचे उतर गया और अपनी कटार की नोक को पेट के लगा कर कहा, "मुझ जैसे गरीब आदमी को मारने से महाराज की कोई बडाई नही होगी इसलिए यही अच्छा होगा कि मैं अपने आप ही मर जाऊँ।" राव ने उसको मरने से रोका और कहा, "यह जानते हुए भी कि मै तुमसे अप्रसन्न हूँ, तुम ऐसे कमजोर टट्टू पर बैठ कर कैसे भगे ?" चारण ने कहा, "महाराज, मुझ गरीब को अच्छा घोडा कहाँ से मिल सकता है ?" इस पर राव ने उसे अपना घोडा, शिरोपाव और विवाव नामक ग्राम दिया। यह गाँव अब भी उसी के वशजो के अधिकार मे है।

ईडर लौट कर राव ने पनोरा पर चढाई की। इसका कारण यह था कि वहाँ के भील रात के समय डेलोल पर हमला करके वहाँ के ढोरो को ले गये। डेलोल के ठाकुर ने, जो ईडर के मातहत था, उन भीलो पर चढाई की, ढोरो को वापस ले लिया और भीलो के सरदार का शिर काट कर ईडर भेज दिया। इस पर बचे-खुचे भीलो और

सरदार के कुटुम्बियों ने ईडर की सीमा में छिपकर टेमोस में उत्पात मचाना शुरू कर दिया। झलाल के वाभेला ने इस उत्पात से छुटकारा दिलाने के लिए राव से प्रार्थना की। इस पर राव ने पनोरा के राणा को भीलों को रोकने के लिए लिखा परन्तु उसने उत्तर भेजा 'भील मेरे वश में नहीं हैं। तब राव ने चढ़ाई कर दी और पोल तथा सरवान होता हुआ पनोरा जा पहुँचा। पहले दिन गोलियाँ चलीं दूसरे दिन बन्दूकों और तलवारों से लड़ाई हुई जिसमें दोनों ओर के बहुत से आदमी काम आये और पनोरा का राणा भी मारा गया। राव वहीं पर एक महीने तक ठहरा रहा और इस समय में बहुत से भीलों को तो खतम कर दिया बहुतों को कैद कर लिया तथा कुछ से जुरमाना वसूल करके उन्हीं की जमानत पर छोड़ दिया। इसके बाद राणा के लड़के को गद्दी पर बिठा कर वह ईडर लौट आया। इस चढ़ाई में सरवान का ठाकुर भी राव के साथ था।

इसके बाद अपने भाई रायसिंह और पोसीना के ठाकुर रतनसिंह के वध के पाप का प्रायश्चित्त करने के लिए राव द्वारका की यात्रा करने गया। उसके दरबारी और रानियाँ भी साथ गईं। द्वारका से लौटते समय उन्होंने हलवद में मुकाम किया। वहाँ पर बहुत सी सतियों के स्थान देखकर राव ने हलवद के राजा से पूछा 'क्या ये सब सती होने वाली रानियाँ थीं ? उसने उत्तर दिया 'ये तो यहाँ के मोचियों की स्त्रियाँ सती हुई हैं उनके स्थान हैं। तब राव ने पूछा 'तो रजवाड़े की रानियों का स्थान कहाँ है ? राजा ने कहा' मैंने तो मेरे कुल में सती होने वाली रानी का नाम ही नहीं सुना। तब राव ने कहा 'तो इस भूमि में अवश्य ही कोई दोष है। आप अपना महल उस स्थान पर बनवाइये जहाँ मोचियों के घर हैं। राजा ने कहा 'मैंने ऐसा भी कर लिया परन्तु फिर भी हमारे कुल में कोई भी सती नहीं हुई। तब बीरमदेव ने कहा इससे विदित होता है कि तुम्हारे कुल में कोई सच्ची राजपूतानी ही नहीं आई; मेरी बहन अभी कुमारी है, उससे शादी कर लीजिये। वहीं सगाई का दस्तूर हो गया हलवद का झाला

विवाह करने के लिए ईडर आया और बाद मे ईडर के राव की बहन ने अपने पति के साथ चिता मे प्रवेश किया।[1]

जब राव द्वारका की यात्रा करने गया था तब माँडवा के लाल मियाँ का पुत्र कुछ दिन कपडवज मे आकर रहा। यह लडका दुराचारी था। कपडवज मे उसने एक व्यापारी की बहुत सुन्दर लडकी को देखा और उसको वहाँ से उडा कर माडवे ले गया। उसके पिता लालमिया को जब यह मालूम हुआ तो वह उससे बहुत नाराज हुआ परन्तु उस समय तक लडकी की जाति बिगड चुकी थी। कपडवज राव के अधिकार मे था इसलिये द्वारका से लौटते समय वह उधर भी चला गया था। वही पर व्यापारी ने अपनी दु ख गाथा उसको कह सुनाई। अब वीरमदेव अपने रिसाले को लेकर माडवे चला गया, उस गाव को जीत लिया और लालमिया के लडके को पकड कर मरवा डाला। लालमिया भी वहा से भाग गया और तीन दिन तक वहा ठहर कर राव ईडर लौट आया। इस घटना से पहले और पीछे भी माडवा ईडर के ही आधिपत्य मे था।

राव के कोई पुत्र न था इसलिए वह बहुत से देवी-देवताओ को मनाता था और यात्राए करता था परन्तु फिर भी उसके कोई कुँअर न हुआ। अन्त मे, किसी ने कहा कि यदि वह रेवा नदी के किनारे ओंकारेश्वर नामक तीर्थ मे जाकर अपनी पटरानी सहित एक ही वस्त्र पहन कर स्नान करे तो उसके पुत्र हो। इसलिए राव सकुटुम्ब ओंकारेश्वर[2] की यात्रा करने गया। उन्ही दिनो किसी साहबजादा[3] का डेरा भी वही लगा हुआ था और कुछ कसाई आठ या दस गौओ को हाकते हुए उसी डेरे की ओर ले जा रहे थे। वीरमदेव के नौकरो ने

१ कहते है इस सती की छत्री अभी हलवद मे वर्तमान है।

२ भडौंच के सामने नर्मदा नदी पर अङ्कलेश्वर तीर्थ है। यही पर ओंकारेश्वर महादेव का मन्दिर है।

३ यह बात शाहजादा मिर्जा के विषय मे ठीक लागू पडती है—देखो एल्फिन्स्टन कृत इण्डिया, पृ० २६६।

उनसे पूछा 'तुम कौन हो और इन गौओं को कहाँ से ला रहे हो ?' उन्होंने उत्तर दिया 'हम कसाई हैं और इन गौओं को शाहजादा साहब के लिए ले जा रहे हैं।' जब राव को यह खबर मिली तो उसने कसाइयों से पूछा कि वे उन गौओं को कहाँ से लाये थे। उन्होंने कहा 'हम इनको पचास कोस की दूरी से ला रहे हैं।' तब राव ने एक-एक गाय के सौ-सौ रुपये देकर मोल लेना चाहा परन्तु कसाइयों ने इनकार कर दिया। राव ने सोचा 'मैं गौ ब्राह्मणों का प्रतिपालक कहलाता हूँ इस तीर्थ-स्थान पर गौओं की रक्षा करते हुए मर जाने से अच्छी बात और क्या हो सकती है ?' यह विचार करके उसने अपने कुटुम्ब के लोगों को तो ईडर रवाना कर दिया और कसाइयों से जबरदस्ती उन गौओं को छीन लिया। चलते समय रानी ने राव से कहा 'यदि आप गौओं की रक्षा करते हुए स्वर्ग चले जावेंगे तो मैं भी इस पृथ्वी पर एक क्षण भर भी नहीं ठहरूँगी।' उधर कसाइयों ने जाकर शाहजादा साहब से शिकायत की। शाहजादा ने एक दूत भेज कर राव को गौएँ लौटा देने को कहलाया परन्तु उसने उत्तर दिया 'मैं हिन्दू हूँ इस तीर्थ स्थान पर, जब तक मुझ में प्राण हैं तब तक आपको गौएँ नहीं लौटा सकता। हाँ आप उनकी जितनी कीमत चाहें ले सकते हैं।' इस पर शाहजादा ने राव के डेरे को तोपों से उड़ा देने की आज्ञा दी परन्तु वीरमदेव व उसके साथी तुरन्त ही मुसलमानों पर टूट पड़े और तोपों के कानों (छिद्रों) में गूँजियाँ ठोक दीं। अब तलवार चलने लगी दोनों ही पक्ष के बहुत से आदमी मारे गये। कुछ समय तक लड़ने के बाद राव अपने डेरे से दो मील पीछे हट कर आ गया और वहीं ठहर गया। उसने गौओं को लड़ाई शुरू होने से पहले ही [illegible] के [illegible] में छोड़ दिया था। रात को उसने विचार किया कि यदि इन कसाइयों का काम तमाम कर दिया जाय तो बहुत सी गौओं के प्राण बच सकेंगे। इसलिए उसने अँधेरी रात में ही कसाइयों पर हमला कर दिया और उनमें से बहुतों को मार डाला। इस झगड़े में राव का एक प्रीति पात्र [illegible] भी मारा गया। उसके शव को लेकर

राव कुछ मील दूर चला गया और वही रेवा के किनारे उसका दाह-सस्कार किया। इसके बाद वह कितने ही दिनो तक सीसोदियो के बटवाणी नामक ग्राम मे छुपा रहा और नित्यप्रति रात के समय शाहजादा की फौज मे घुस कर लूट मार करता रहा। अन्त मे उस सेना का इतना नुकसान हो गया कि शाहजादा अहमदाबाद न जाकर बचे-खुचे आदमियो सहित अपने घर लौट गया। राव ने भी जहाँ उस खवास का दाह-सस्कार किया था वही उसका सपिण्ड श्राद्ध आदि क्रिया कर्म किया और उसकी स्मृति मे एक चबूतरा बनवा दिया जो अब तक मौजूद है। इसके बाद वह ईडर लौट आया।

जब शाहजादा ने जाकर बादशाह को सब हाल कह सुनाया तो एक बडी भारी सेना ईडर के विरुद्ध भेजी गई। इस फौज ने रामेश्वर तालाब पर पडाव डाला और नगर के सामने ही मोर्चा लगा दिया। दश दिन तक लगातार गोलाबारी होती रही परन्तु राव ईडरगढ मे ही डटा रहा और बादशाही फौज की दाल न गली। तब शाहजादे ने चारो ओर पहरे लगा दिए और छ महीने तक वही पर पडाव रखने का निश्चय किया। जब छ महीने बीत गये तो राव अपनी रानियो, नौकर चाकरो व अठारह सौ सवारो सहित एक गुप्त मार्ग से पोल चला गया और ईडरगढ मे कुछ थोडे से सिपाहियो सहित अपने भाई कल्याणमल को छोड गया। बादशाह की फौज ने ईडर शहर को लूट लिया परन्तु किला न ले सकी। जब यह खबर मिली कि राव तो पोल चला गया है तो थोडी सी फौज ईडर मे छोड कर शाहजादे ने भीलौडा की ओर प्रस्थान कर दिया और मार्ग मे बडाली, गुलोडा, अहमदनगर, मोडासा और मेध्रज आदि अन्य शहरो पर भी कब्जा करता गया। इस प्रकार उसने पूरे ईडर देश पर अधिकार कर लिया।

उधर राव छ महीने तक पोल रहा, इस समय मे खाने-पीने का सब सामान चुक गया और यहाँ तक हुआ कि उसको पूरे दो दिन तक बिना अन्न खाये रहना पडा। तीसरे दिन वह महादेव के मन्दिर मे गया और कमलपूजा[1] करने के लिए अपनी तलवार कण्ठ पर लगाई।

१ अपना मस्तक अपने हाथ से काट कर देवता के अर्पण करना कमल-पूजा कहलाता है।

इतने ही मे मन्दिर में 'मा मा' (नही नही) शब्द सुनाई दिया। तब राव ने इधर-उधर देखा परन्तु कोई नहीं दिखाई दिया तब उसने सोचा कि यों दिन की भूख-प्यास के मारे मेरा चित्त भ्रम मे पड़ गया होगा। परन्तु उसने तीन बार अपनी गर्दन काटने का प्रयत्न किया और तीनो ही बार किसीने उसे मना कर दिया। तब उसने जोर से पूछा 'यह मुझे मना करने वाला कौन है? उत्तर मिला 'मैं महादेव हूं तू आत्म घात क्यों करता है? राव ने कहा मेरे पास खाने-पीने के लिए तो कुछ है ही नही इसीलिए प्राणत्याग करता हूं। महादेव ने फिर कहा 'तू जो कुछ चाहता है वह तुझे कल मिल जावेगा। यह सुनकर राव अपने महल मे वापस चला गया। उसी समय आलोजी गढ़वी जिसके विषय मे लिख चुके है कि उसने लाख पसाव लेने से इनकार कर दिया था अपनी गरीब हालत म राव के पास पान में फिर आया और उसकी प्रशसा मे कवित्त पढ़ने लगा। जो लोग आस-पास बैठे थे उन्होने कहा ऐसे समय मे दाम मांगते तुमको लज्जा नही आती? इसके उत्तर म चारण ने एक सोरठा पढ़ा—

सो —वीरमदे वनवास कांमु कीरतियां तणे
लका सीम विलास राम न वीधी रयणउत।[1]

इसी बीच मे वीरमदेव के कष्ट के समाचार उदयपुर भी पहुंच चुके थे इसलिए राणा ने बहुत सा द्रव्य और खाने-पीने का सामान ऊँटों पर लदवाकर राव के पास भेजा था। यह सामान भी उसी समय आपहुँचा। वीरमदेव ने यह सब द्रव्य चारण को दे दिया।

अब राव ने सोचा कि बादशाह की सेना बहुत बड़ी है इसको हराना बहुत कठिन है और यदि किसी तरह कोई स्थान इनसे ले भी लिया तो जल्दी ही यह लोग उसको वापस छीन लेंगे। इसलिए एक दिन तड़के ही उसने अपनी तलवार और कटार कमर मे बांधी और

१ हे रणमल के वंशज वनवासमे ही अपनी कीर्तिके लिए क्या रामचन्द्रजी ने सोना-विलास भरी लंका नही देदी थी? (ईडर राज्य का इतिहास पृ १७९)

बिना कुछ कहे सुने घोडे पर रवाना हो गया। उसने एक घुडसवार के सिवाय और किसी को साथ न लिया और सीधा मीलाडे पहुँचा। वहाँ पर शाहजादा एक ऊँचे महल मे बैठा था। राव ने पहरेदार से कहा, "मै शाहजादा साहब से मिलना चाहता हूँ।" पहरेदार ने शाहजादा साहब से मालूम किया, उसने कहा, 'उसके हथियार नीचे रखवा कर आने दो।' राव ऊपर जाकर शाहज़ादे से बात-चीत करने लगा। इतने ही मे उसने देखा कि एक बिल्ली घर के छप्पर पर से एक कबूतर को पकडने के लिए कूदी। बिल्ली ऊपर थी और कबूतर नीचे इसलिए कबूतर तो मर गया और वह बच गई। यह देखकर उसने सोचा कि यदि मै इसी तरह इस शहजादे को लेकर कूद पडूँ तो यह मर जाये मैं जीवित रह जाऊँ, इसलिए उसने शहजादे की गर्दन पकड कर खिडकी मे धकेल दिया और ऊपर से खुद कूद पडा। शाहजादा मर गया और राव अपने घोडे पर चढ कर पोल चला गया। शाहजादे के मरने पर फौज भी वापस लौट गई, राव भी ईडर आ गया और बहुत दिनो तक राज करता रहा।

एक बार एक व्यापारी कुछ घोडे लेकर आया। राव ने उससे दो घोडे, जिनके नाम जाल्हार और नटुवा थे, चालीस हजार[1] रुपये मे खरीद लिए। जब दशहरा आया तो शमी-पूजन और चौगानिया पाडा के वध करने के लिए सवारी निकली। उस समय इन दोनों घोडो की बहुत तारीफ हुई। ईडर के रिवाज के अनुसार एक मोटे ताजा पाड़े को छोड दिया गया और राव ने उसको दौडाने के लिए एक बिना धार के खाँडे से उसे खदेड दिया। सभी सामन्त लोग अपने-अपने खाँडे से उसका वध करने के लिए घोडो पर उसके पीछे दौडे। जब पाडे का वध हो गया और शमी का पूजन हो चुका तो सभी सरदार अपनी-अपनी चतुराई और घुडसवारी की कला दिखलाने लगे। जब यह खेल समाप्त हो गया तो राव और उनके सरदार झूले-झूलने लगे। दिए

१ गुजराती अनुवादक ने लिखा है—"हमारे पास जो वृत्तान्त है उसमें ३६ हजार लिखा है।"

बसी का समय होते ही जमूस की तैयारियाँ होने लगी और फिर धूम-धाम से सवारी निकली। चतुर्दशी के दिन राव ने सांमा मूला गढवी को आल्हार घोड़ा दान में दे दिया और नट्टमा को अपनी सवारी के लिए रख लिया। उस दिन राव के साथ भोजन करने की बारी पीपापुर वाली भादेली राणी की थी। राव ने वहाँ पर दो-तीन बार रानी से कहा 'आज मैंने आल्हार घोड़ा चारण को दान में दे दिया।' रानी ने कहा 'आप एक टट्टू का दान करके मुझे बार-बार क्यों कहते हैं?' यह सुन कर राव क्रोधित हो गया और बोला 'जब तुम्हारा पिता आल्हार जैसा घोड़ा चारण को दान में दे देगा तभी मैं तुम्हारे महल में आऊंगा अन्यथा नहीं।' यह कह कर राव वहाँ से चल दिया। सुबह होते ही राणी ने अपना रथ तैयार करवाया और पीपापुर के लिए रवाना हो गई। वहाँ जाकर उसने सब वृत्तान्त अपने पिता को कह सुनाया। इस पर ठाकुर ने काठियावाड़ मूली बोटीसा थान राधड़ और दूसरे ऐसे स्थानों में जहाँ-जहाँ अच्छे घोड़े मिल सकते थे आदमियों को भेज कर तलाश करवाया परन्तु आल्हार जैसा घोड़ा कहीं भी न मिला। तब ठाकुर खुद सांमा चारण के घर गया और मुंह मांगा मूल्य देकर आल्हार को खरीद लाया। छः महीने तक उसको खिला पिला कर अपने पास रखा और फिर उसी चारण को दान में दे दिया। यह देख कर सभी लोग चकित रह गये और जब वीरमदेव को समाचार मिला तो वह स्वयं पीपापुर गया अपने श्वसुर की बहुत प्रशंसा की और रानी को साथ लेकर घर आया।

कुछ दिन बाद चारण ने राव से कहा 'वर्षा ऋतु में आप इस घोड़े को रखें और देख भाल करावें।' राव ने कहा 'मेरा एक सर्दार मालजी दहालेव पर हाकिम है तुम उसी के पास इस घोड़े को रख दो।' चारण ने वह घोड़ा ले जाकर मालजी के पास रख दिया। इसके कुछ ही दिनों बाद तरसगमा के राणा बाघ ने लूट तक उपद्रव मचाना शुरू कर दिया। हाभी सरदार इसी घोड़े पर चढ़ कर उससे युद्ध करने के लिए गया। इस युद्ध में उसकी विजय हुई और वह ठोर

वापस ले आया परन्तु घोडा घायल हो गया क्यो कि वाव के गांव के पास मदनवाडी नामक एक पहाडी है उसी पर उपद्रवी लोग चढ गये थे और उनके पीछे ही आधी दूर तक घोडा भी चढ गया जिसके निशान आज तक वहाँ पर बने हुए हैं। इस पहाडी का मार्ग बहुत ही कठिन है और घोडा तो उस पर चढ ही नही सकता। फिर कुछ दिनो बाद घावो के दुःख से वह घोडा मर गया और चारण ने उसकी प्रशंसा मे थोडे मे कवित्त लिखे। यह राणा वाव बहुत ही शूरवीर था, वह कहा करता था—

"मै राणा वाव हूँ, हरनाव नदी तक मेरा भाग है।" हरणाव नदी सतलासणा के पास भाटियो के भाणपुर के आगे साबरमती मे मिलती है, वही तक राणा अपनी सरहद समझता था।

इसके बाद जब दूसरा दशहरा आया तो राव ने चौगानिया पाडे का वध अपने हाथ से किया। उस दिन राव राणी चन्द्रावती जी के महल गया और उनसे कहा, 'आज मैने एक बडा भारी पाडा मारा है।' तब राणी ने कहा, "पाडा तो दूसरी ही जात का पशु होता है, यह कोई पाडा नही था।' इस पर नाराज होकर राव ने कहा' "जब तुम मुझे दूसरी जात का पाडा दिखलाओ तभी ईडर आना वरना तब तक अपने पीहर जाकर रहो।" यह कह कर वह खडा हो गया तब राणी ने उसे अगली दीवाली पर रामपुर आने की प्रार्थना की। राव ने इसका वचन दे दिया और चल दिया। सुबह होते ही रानी भी पीहर जाने के लिए रवाना हो गई और वहाँ पहुँच कर एक जगली पाडे को अपने पास रख कर उसको खूब खिलाने-पिलाने लगी।

दीवाली के लगभग ही राव ईडर से रवाना हो गया और डूँगरपुर होते हुए रामपुर पहुँचने का इरादा किया। उसी समय अमरसिंह नाम का एक जोधपुर का राजपुत्र शिकार खेलने निकला था, उसने एक वराह को घायल कर दिया था और वह दौड कर बीकानेर की सीमा में चला गया। बीकानेर के राजा ने उसको मार डाला, इस पर अमरसिंह ने क्रोधित होकर कहा, "जिसने मेरे घायल किये हुये

सूमर को मारा है मैं उसको मारे बिना नहीं छोड़ूंगा। ऐसा निश्चय करके उसने बीकानेर पर चढ़ाई करने की तैयारी की। जब यह बात दिल्ली के बादशाह को मालूम हुई तो उसने इस झगड़े को रोकने के लिए शाहजादे को रवाना किया। रास्ते में वीरमदेव और शाहजादे की भेट हुई उस समय शाहजादे ने अपने भाई के वध का बदला लेना चाहा परन्तु उसी समय अमरसिंह का पत्र आ पहुँचा जिसमें लिखा था यदि तुम्हारी भी इच्छा मुझसे लड़ने की है तो मैं तैयार हूँ। अमरसिंह ने जब शाहजादे के आने की खबर सुनी तो उसने समझा कि वह बीकानेर के राजा की सहायता करने के लिए आया है इसीलिये उसने ऐसा पत्र भेजा था। पत्र पढ़कर शाहजादे को उसके विरुद्ध बीकानेर जाना पड़ा और वीरमदेव बिना रोक-टोक आगे चला। जब तक बीकानेर और अमरसिंह में लड़ाई चली तब तक राव रामपुर जा पहुँचा। जब रामपुर सिर्फ तीस मील रह गया तो उसने वहाँ अपने आने का समाचार भेजा। किसी समय रामपुर के एक चारण का ईडर में अपमान हो गया था इसलिये उसने राव के आने की खबर सुन कर उस जंगली पाड़े को उसके रास्ते में छोड़ दिया और इसका कारण यह बताया कि यह पाड़ा रामपुर में बहुत नुकसान करता है इसलिए छोड़ा गया है। राव ने उसको देख कर अपने मन में सोचा यह मुझसे मसखरी करने के लिए छोड़ा गया है इसलिए उसने नाराज होकर उसको मार डाला और अपने मन में कहा यदि मैं इसको न मारता तो बात चली जाती। इसी बात के विचार से उसको बहुत क्षोभ हुआ और उसने वापस लौटने का निश्चय करके दो मील लौट कर एक गाँव में विश्राम किया। जब रामपुर के राजा को यह बात मालूम हुई तो उसने वीरमदेव के पास आकर क्षमा माँगी और समझा-बुझाकर उसको रामपुर ले आया। उसने राव से कहा कि मैंने इस पाड़े को नहीं छोड़ा था। पर आकर तलाश करने पर मालूम हुआ कि यह कार्रवाई उस चारण की थी इसलिए उसको बुला कर राजा ने बहुत कुछ भला-बुरा कहा।

इसके बाद एक महीने तक वहाँ रह कर राव ने विदा मागी तब राणी ने कहा, 'मेरे पिता की मृत्यु के बाद बूदी के राव ने मेरे भाई को नाबालिग समझ कर उसकी बहुत सी जमीन दबा ली, अब आप यहाँ पधारे हैं इसलिए उन्हे वापिस दिला दीजिए।' इस पर वीरमदेव ने बूदी के राव को एक पत्र लिखा कि या तो रामपुर की जमीन वापस कर दो वरना लडाई के लिए तैयार हो जाओ।' तदनुसार दोनो ही तरफ के बहुत से आदमी मारे गये। अन्त के रामपुर की जमीन वापस ले ली गई। राव वीरमदेव रामपुर मे राणी को साथ लेकर ईडर लौटा और फिर सायाजी गडवी को लाख पसाव दान मे दिया।

इसके थोडे ही दिन बाद वीरमदेव गङ्गाजी की यात्रा करने गया और वहाँ सोरो घाट पर स्नान करके घर लौटने लगा। उसकी सौतेली बहन (रायसिह की सगी बहन) जयपुर[1] व्याही थी, समाचार सुनकर उसने अपने कुँअर और मन्त्री को उसे बडे आग्रह से जयपुर लिवा लाने के लिए भेजा। राव मन मे जानता था कि शायद अपने भाई का बैर लेने के लिए वह उसे जहर दे दे इसलिए खाने-पीने मे बहुत ही सावधानी रखता था। विदा के समय जयपुर की ओर से राव को बहमूल्य पोशाक भेट मे दी गई, जो जहर मे बुझी हुई थी। ईडर की सीमा मे भीलौडा पहुँच कर राव ने सोचा कि अब कोई भय नही है, इसलिए वह पोशाक पहन ली। तुरन्त ही उस पर जहर का असर हो गया और एक घण्टे के अन्दर-अन्दर वह मर गया। वही भीलौडा के द्वार पर चिता लगाई गई और समाचार सुन कर ईडर से रानिया भी वही आकर सती हो गई।

वीरमदेव के कोई पुत्र नही था परन्तु नारायणदास के पुत्रो मे से गोपालदास, केशवदास, सामलदास, कल्याणमल और प्रतापसिह अभी जीवित थे। केशवदास और सामलदास को सबलवाड हाथियावसई का ग्रास मिला। प्रतापसिह का ननसाल तरसगमे मे था इसलिए वह अधिकतर वही रहता था। वहाँ पर किसी अवसर पर उसके द्वारा राणा को नुकसान पहुँचा था इसलिए उसने उसे मरवा दिया, इसी

१ वीरमदेव की मृत्यु स० १६५३ मे हुई थी, उस समय आमेर के राजा मानसिह (प्रथम) थे। जयपुर बाद मे बसा था।

बाद भी वे लोग वही पर रहते रहे। बाद मे उन लोगो ने वला ग्वाल के नाम पर वलासणा नामक ग्राम बसाया और धीरे-धीरे आस-पास के प्रदेश को दबाने लगे। अन्त मे हरिसिह और अजबसिह नामक गोपालदास के दोनो पुत्रो ने उस प्रदेश को आपस मे बाँट लिया। उनके ठिकाने क्रमश वलासणा कलाँ (बडा) और वलासणा खुर्द (छोटा) कहलाने लगे।

जब वीरमदेव काशी यात्रा करने गया था तब पनौरा, पहाडी, जवास, जोरा, पाथिया, वलेचा और दूसरे परगनो पर मेवाडवालो ने अपना अधिकार कर लिया था, कल्याणमल ने सेना इकट्ठी करके इन परगनो को वापस ले लिया। उदयपुर के राणा अमरसिह ने उसका सामना किया। पहले गोलाबारी हुई फिर तलवारे चली। दोनो ही ओर के बहुत से मनुष्य मारे गये परन्तु अन्त मे विजय राव की हुई। इसके बाद कल्याणमल ने तरसगमा पर आक्रमण किया इसका कारण यह बतलाया गया कि—

तरसगमा के राणा वाघ को समाचार मिला कि कल्याणमल की राणी, जो भुज के राव की पुत्री थी, बहुत सुन्दरी थी, इसलिए उसको देखने के लिए वह आतुर हो उठा। धनाल के ठिकाने मे गढरू नामक ग्राम है, वही पर पचास हजार रुपये लगा कर राव की जाडेची राणी ने सावला जी का मन्दिर बनवाया था। किसी पर्व पर राणी वहाँ पर दर्शन करने के लिए गई थी, उसी समय समाचार पाकर राणा वाघ भी ब्राह्मण का वेप धर कर दूसरे ब्राह्मणो मे जा मिला। जब राणी और ब्राह्मणो की तरह राणा बाघ को भी तिलक करके दक्षिणा देने लगी तो उसने दक्षिणा लेने से इनकार कर दिया इसलिए कुछ वाद-विवाद खडा हुआ और इसी बीच मे वह वहाँ से चल दिया। राणा कल्याणमल को जब यह बात मालूम हुई तो इसका वैर लेने के लिए उसने तरसगमा पर आक्रमण किया।

इसके बाद सायाजी गढवी ने कुवावा गाँव मे एक किला बँधवाने का विचार किया, यह बात राव को अच्छी नही लगी। इसीलिए उसने

साईजी के ज्योतिषी से उसको कहला दिया कि अब तो तुम्हारा अन्त समय बहुत निकट है। कहना नहीं होगा कि इस ज्योतिषी को साईजी ने कह रक्खा था कि मेरा अन्त समय निकट आ जावे तब मुझे कह देना ताकि मैं व्रज में जाकर रहने लगू। अस्तु ज्योतिषी के कहने के अनुसार वह व्रज के लिये रवाना हो गया और वहाँ जाकर उसने श्रीनाथजी के तेरह सेर सोनेकी मालकी(माली)भेट की। इसके बाद वह काशी चला गया और ज्योतिषी के कथनानुसार वहीं पर मृत्यु की बाट देखने लगा। परन्तु दस वर्ष तक उसे मौत न आई और वह वहीं पर रहता रहा। अन्त में जब वह बहुत ज्यादा बीमार पड़ा तब उसने ईडर के राव को लिखा कि मेरी आपसे मिलने की इच्छा है। राव ने काशी के लिए प्रस्थान कर दिया परन्तु जब वह बनारस से एक मंजिल दूर रहा तभी उसको समाचार मिला कि साईजी ने शरीर त्याग दिया है। अब राव ने विचार किया कि यदि मै काशी जाऊँगा तो लोग यह समझेंगे कि मै काशी यात्रा करने के लिए ही घर से निकला था साईजी से मिलने के लिए नही इसलिए उसने वही पर गङ्गाजल मँगवा कर स्नान किया और फिर उदयपुर होता हुआ घर लौटा। वहाँ से वह गढ़वी गोपालदासको अपने साथ लेता आया और उसको मेरसण तथा रामपुर नामक दो गाँव भी दिए। इन गांवो में आज तक उसके वंशज बारह भागो मे हिस्सा पाते है। दूसरा चारण जो उसके साथ गया था उसको बुरावास गाँव दिया जिसको अब तक उसके वंशज चार भागो मे भोगते हैं।

इसके बाद राव का सिरोही के साथ झगड़ा हुआ और वह सरहद पर लड़ाई करने गया। रोहीडा और पोसीना के बीच मे दोनों ओर के बीस अथवा तीस आदमी मारे गए। अन्त मे पोसीना के ठाकुर ने बीच में पड़ कर फैसला करवा दिया। कल्याणमल की मृत्यु पर उसका पुत्र राव जगन्नाथ गद्दी पर बैठा।

प्रकरण नवाँ

अम्बा भवानी का मदिन्र दाँता

" उसका विशाल उन्नत मस्तक दिखाई देता है,
लहराती हुई अलकें आकाश को छूती जान पड़ती है
घनान्धकार से उसकी अमूर्त आकृति का निर्माण हुआ है,
और, पर्वत शिखरो पर उसका निवास है ।
जब बादल निरन्तर अवलोकन-रत(मनुष्य) के सामने
अति-काल्पनिक आकृतियाँ उद्घाटित करते हैं, और
जब तक वे परिवर्तनशील वर्ण पवन के झोकों से बचे रहें
तभी तक है उनका अस्पष्ट स्वरूप और चचल आकृति ।
मायाग्रस्त जीव निज स्वामिनी के चारो ओर मँडराते रहते हैं'
भ्रामक स्वप्न, शकुनापशकुन, और मिथ्या,
मुँह बाए खड़े जन समूहको ठगने की अनेक कलाएँ,
निरर्थक भविष्य वाणिया और बेसिर पैर के फतवे,

आश्चर्यजनक शब्दों में अथवा मन्त्र तन्त्रों में लिखा भाग्य
भूत और भविष्य को प्रदर्शित करने वाला
और रसायन विद्या (कीमियागीरी) और ज्योतिष विद्या
तथा सबकी इच्छानुसार बनाए हुए मीठे मनोरथ। [1]

अम्बा भवानी का मन्दिर आरासुर की पहाड़ियों में अरावली की पर्वतश्रेणी के नैऋत्य कोण में है। अणहिलवाड़ा और पवित्र सिद्धपुर क्षेत्र से सरस्वती नदी के किनारे-किनारे उसके मूल (अम्बा भवानी के पास कोटेश्वर महादेव) तक एक जंगली परन्तु सुन्दर और उपजाऊ घाटी बसी गई है जिसपर आकर वृक्षों से ढकी हुई पहाड़ियों की श्रेणी धीरे-धीरे खतम हो जाती है। जब इस एकान्त झरने के आस पास दुर्गम जंगल में जहाँ पर चीते और बाघ भरे पड़े हैं सन्ध्या का अन्धकार फैलकर उसको और भी भयानक बना देता है जब वहाँ के काले-काले रंग के जंगल-निवासी इधर उधर नंगे घूमते होते हैं और जब किसी पास के छोटे से गाँव से कठोर परन्तु खाली नगाड़ों की आवाज भी आती होती है उस समय किसी भी विदेशी को वहाँ पर अफ्रीका की नाइगर नदी और उसके किनारे घूमते हुए हबशियों का ध्यान आए बिना नहीं रह सकता। कभी कभी एक प्रकार का विचित्र सा प्रकाश एक क्षण भर के लिए इस घोर दृश्य को उजेले से भर देता है। भील लोग पर्वत को देवता मानकर अपनी जंगली भेंट चढ़ाते हैं सूखी पहाड़ी झाड़ियों के कारण धीरे धीरे एक पहाड़ी से दूसरी पहाड़ी पर बढ़ती हुई आग की लपटें किसी रेंगते हुए विकराल सर्प के समान दिखाई देती है।[2] इस दृश्य को देखकर बाइबिल के धर्म-गीत-लेखक

---

१ ['मॉरिशो डी मेडिसी' के विलियम रॉस्को कृत ग्रंथ की अनुवाद का हिन्दी रूपान्तर]

२ भील लोगों के पैरों के छाले भी हो जाते हैं और जूते न पहनने पड़ें इसलिए वे पर्वत में आग लगा देते हैं इसको 'डूंगर बलरना' या ढवा करना कहते हैं।

की कल्पना याद आए बिना नही रहती—"पवन के झोको से अनाज की बाले लहलहाती है, दावाग्नि समस्त वन को प्रज्वलित करती है और आग की लपटे पूरे पहाड पर फैल जाती है।"

आसपास के गाँवो और हिन्दुस्तान के दूसरे भागो मे से भी नित्य ही बहुत से यात्री अम्बाजी के मन्दिर मे आया करते है परन्तु यात्रियो के बडे सघ तो वर्ष मे तीन बार ही आते हैं और उनमे से भी खासकर वर्षा ऋतु मे, क्योकि भाद्रपद के महीने मे माता का जन्म दिवस आता है। यह कहने की आवश्यकता नही है कि (बम्बई नगर से भी)—जहाँ बहुत कुछ यूरोप का रग चढ गया है, व्यापार की धूमधाम के कारण वहाँ की वायु मे गर्द भर गई है, जिसके आसपास (के समुद्र मे) पश्चिम की ओर से आने वाले जहाजो के समूह के कारण सफेदी सी छाई रहती है, जहाँ पर पूर्वीय महान् देवता के देवालय [कोर्ट] की छाया के आकार के रूप मे बने हुए न्यायालय मे बैठ कर न्यायाधीश पूरे दब-दबे से उस धु धले विदेश के विचित्र कानून का उपयोग करते हैं जिसकी कल्पना भी यदि कोई हिन्दू करना चाहे तो अपने परम्परागत धर्म से उत्पन्न भ्रम रूपी पर्दे के कारण नही कर सकता, ऐसी माया नगरी बम्बई से भी बहुत से श्रद्धावान् हिन्दू यात्री पुण्य प्राप्ति के लिए मानो किसी सत्य-स्वरूप स्थान को ही जाते हो बडे चाव से आरासुर के कठिन मार्ग पर अम्बाजी के मन्दिर की ओर अग्रसर होते हैं।

माता के यात्रियो का सघ बहुत बडा होता है, इसी सघ मे से जिस किसी ने माता के निमित्त धन खर्च करने की मनौती मान रखी होती है वह किसी भी रात के पडाव के स्थान पर पूरे सघ को भोजन कराता है। सब से आखिरी पडाव दाँता मे लगता है। दाँता एक छोटा सा नगर है जो उजाड और चट्टानी पहाडियो की तलहटी मे बसा हुआ है, यहाँ परमार वश का राणा राज्य करता है जो अम्बाजी का परम कृपापात्र भक्त है। इसी जगह से माता के मन्दिर को जाने वाले मार्ग का लम्बा चढाव शुरू होता है। इस मार्ग मे बहुत

दूर तक यद्यपि सीधी चढ़ाई है परन्तु फिर भी जगह-जगह ऐसे-ऐसे ऊबड़-खाबड़ चट्टान आते हैं कि उनको हटाकर दुर्गा के सिंहासन तक पहुँचने के रास्ते को सरल बनाना मनुष्य की शक्ति के बाहर है। इस टेढ़े-मेढ़े रास्ते में चलता हुआ यात्रियों का संघ सूर्य की तेज चमक से लाल सफेद और पीले रंग में चमकते हुए फौलाद और नरम सोने का सा दृश्य दिखाता हुआ बहुत सुहावना मालूम होता है यह संघ कभी खण्डित मैदान में एक लम्बी कतार में जाता हुआ दिखाई देता है कभी रंग बिरंगी चट्टानों की आड़ में आ जाता है तो कभी जंगल की घनी छाया में विलीन हो जाता है। लगभग आधी चढ़ाई आने पर "नाना भाई का कुआ" नामक एक स्थान है यहाँ पर थोड़ी देर विश्राम करके यात्री लोग गहरी चट्टानों के बीच से निकल कर एक खुले मैदान में पहुँच जाते हैं जहाँ पर आरासुर का मन्द सुगन्ध पवन उनके अंगों का स्पर्श करने लगता है। यात्रियों की कतार में से रह रह कर यह आवाज आती रहती है 'अब मन्दिर दिख रहा है'। इससे आगे चल कर सब लोग अपने अपने घोड़ों और पालकियों से उतर जाते हैं और पूरा संघ साष्टांग दण्डवत करता है। जब दण्डवत करके ये लोग फिर खड़े होते हैं तो 'अम्बा माता की जय' के घोष से सारा पर्वत गूँज उठता है।

माता का मन्दिर छोटा सा है परन्तु इसी के जैसे दूसरे छोटे छोटे देवालयों की अपेक्षा इसकी बनावट बहुत बड़ी चढ़ी है। इसके चारों ओर कोट खिंचा हुआ है और मन्दिर की तरफ इमारतें बनी हुई हैं। इन मकानों में माताजी के पुजारी और आने जाने वाले यात्री लोग रहते हैं। यहीं पर एक थाना है परन्तु मनुष्यों के हथियारों से माता के स्थान की रक्षा होती है लोग ऐसा न कहें इसलिए माता ने बाहर का दरवाजा बनाने की आज्ञा नहीं दी। इस देवालय में जिसका पूजन होता है वह महाशिव की अर्धांगिनी और हिमाचल तथा मैना की पुत्री दुर्गा है। यहाँ पर, चम्पानेर के पर्वत पर जिस रुधिर-पान-प्रिया काली का पूजन होता है उसके स्वरूप का पूजन नहीं होता बरन् जगन्माता

भवानी के किसी शान्त गम्भीर एवं मायामय स्वरूप विशेष का अर्चन होता है।

आरासुर का यह देवालय बहुत प्राचीन है। कहते हैं कि बालक श्री कृष्ण का चूडाकर्म यहीं हुआ था और बाद में जब वे शिशुपाल के भय से रुक्मिणी का हरण करके ले गए थे उस समय वह (रुक्मिणी) भी इसी देवी का पूजन करने आई थी। सैकडों वर्षों से आने वाले यात्रियों के पैरों से माता के देवालय का आँगन घिस गया है। दर्शन करते समय यात्री लोग बहुत से कपडे और जवाहरात भेट करते हैं और इन्हीं चीजों के साथ साथ अपने व अपने सम्बन्धियों के आत्म-बलिदान की एवज नारियल[1] भी चढाते हैं।

नवरात्र की अष्टमी के दिन रात्रि के समय दांता के राणा स्वयं आकर हवन करते हैं और बडे-बडे पात्रों में प्रसाद भर कर आरासुरी माता के चढाते हैं। जब माता के गले से फूलों का हार टूट कर गिर जाता है तब देवी का इशारा समझ कर भील लोग प्रसाद के टोकरों पर टूट पडते हैं और उनको खाली कर देते हैं। यात्रियों की रक्षा का प्रबन्ध दांता के राणा की ओर से होता है इसलिए वह उनसे कर वसूल करता है, यदि कोई ठाकुर यात्रा करने आता है तो उसके पास जो सब से अच्छा घोडा होता है उसको राणा भेट में ले लेता है। इसके

---

१ हिन्दू लोग मनुष्य के बदले में नारियल चढाते हैं इसका कारण विश्वामित्र की चमत्कारपूर्ण कथा जान पडती है। ब्रह्मा की उत्पादक शक्ति की देखादेख उस ऋषि ने भी कितनी ही तरह का अनाज और पेड पौधे उत्पन्न किए। उसीने नारियल का पेड भी पैदा किया और उसी में आदमी भी उगाने लगा। सब से पहले आदमी का मस्तक उस पेड पर लटकाया। ब्रह्मा ने सोचा कि अब सृष्टि करने का काम उससे छिन जावेगा इसलिए उसने विश्वामित्र की स्तुति की। इस पर उसने प्रसन्न होकर भविष्य में सृष्टि कार्य तो बन्द कर देने का वचन दिया परन्तु अपने इस कार्य का स्मारक मनुष्य का मस्तक फलों के रूप में पेडों पर लटकता रहने दिया।

अतिरिक्त यात्री लोगों के चढ़ाए हुए कपड़े अथवा गहने बर्तन भाण्डे आदि भी वही ले लेता है और उनको मन्दिर के प्रबन्ध में खर्च करता है। माता की मूर्ति के आगे सात[1] चांदी की पादुकाएं रखी रहती हैं।

इस स्थान पर माता के कल्याणकारी स्वरूप का पूजन होता है तथापि पशुओं का बलिदान और मधु (शराब) अवश्य चढ़ाया जाता है। मन्दिर के काम मे तेल का उपयोग मना है इसलिए कोई भी यात्री अपने यात्राकाल में तेल का उपयोग नहीं करता है। देवालय मे घृत के दीपक जलाए जाते हैं और उन्ही से आरती उतारी जाती है। जब दांता का राणा मन्दिर मे उपस्थित होता है तो संध्या-आरती के समय वह स्वयं माता के चँवर डुलाता है। साधारणतः माता के तीन पुजारी हैं वे सिद्धपुर के औदीच्य ब्राह्मण हैं और राणा को कर देकर अपना काम करते हैं। जब यात्री लोग शुरू-शुरू में आते हैं तो ये लोग उनके ललाट पर चाँदला (चन्दन का निशान) लगाते हैं और विदा के समय उनकी पीठ पर कुंकुम का हाथ मारते हैं। अपनी अपनी विसात के अनुसार सभी यात्री उनको भोजन कराते हैं और दक्षिणा देते हैं कभी कभी जब तक इनकी इच्छानुसार दक्षिणा न मिल जाय तब तक उनकी पीठ पर कुंकुम का निशान नहीं लगाते हैं और जब तक वह निशान न लग जावे तब तक यात्री वहाँ से प्रस्थान नहीं कर सकता क्योंकि इसी निशान पर तो उसकी यात्रा की सफलता निर्भर होती है।

माता के मुख्य देवालय के पास ही मानसरोवर तालाब है जिसके किनारे पर 'महादय माता' का मन्दिर है। इस मन्दिर में महाराणा श्री मालदेव का संवत् १४१२ (१३५६ ई०) का लेख है। अम्बाजी के मन्दिर में गर्भ-मण्डप के बाहर ही एक लेख

---

[1] हिन्दुओं में तीन पाँच और सात ये तीनों संख्याएं शुभ मानी जाती हैं इनमें भी सात की संख्या और भी महत्वपूर्ण गिनी जाती है। तीन की संख्या से स्वर्ग मृत्यु और पाताल लोक की गणना होती है, पाँच से पाँचों तत्व और सात से सप्तर्षि गिने जाते हैं।

है जिसमे सवत् १६०१ (१५४५ ई०) मे ईडर के राव भारमल की राणी के चढावे का वर्णन है, ऐसा प्रतीत होता है कि यह चढावा राणीने अपने पति की मृत्यु के बाद चढाया था।[1] मन्दिर के खम्भो पर और भी बहुत से लेख खुदे हुए है जो प्राय सभी सोलहवी शताब्दी के है। इनमे दूसरे लोगो के दिए हुए दान का उल्लेख है। इन्ही मे एक लेख सवत् १७७९ (१७२३ ई०) का है जिसमे लिखा है कि "पृथ्वीपति राजाधिराज राणाजी श्री १०८ श्री पृथ्वीसिहजी के राज्यकाल मे एक बनिए ने यात्रियो के ठहरने के लिए पुत्र की आशा मे एक धर्मशाला बनवाई, सो अम्बामाता की कृपा से उसकी यह आशा पूर्ण हुई।"

सिरोही के राव का देश अम्बाजी के मन्दिर तक है, पहले वह इस भूमि का कर भी वसूल करता था परन्तु बाद मे यह कह कर छोड दिया कि देवालय की आय को खाकर गुसाँई लोग ही सुखी रह सकते है। एक बार दाँता की कोई कन्या सिरोही के राव के कुल मे ब्याही गई थी। सयोग से सिरोही वालो ने जो साडी माताजी के चढाई थी उसी को पहन कर वह ससुराल चली गई। यह देखकर उसके पति ने कहा 'यह पोशाक तो मैने माताजी के चढाई थी अब तुमने इसको पहन ली है इसलिए तुम भी आज से मेरी माता के समान ही हो।' यह कहकर उसने उस "विधवा पत्नी और विवाहिता कुमारी" को पीहर भेज दिया। तभी से दाँता मे यह नियम बन गया कि माता का चढावा वहाँ की लडकियो को न दिया जावे।

अम्बा भवानी के मन्दिर मे पश्चिम की ओर लगभग दो मील की दूरी पर एक पहाडी है जिस पर पहले जब्बरगढ नामक दुर्ग था। यहाँ की चट्टाने कुछ ऐसी बनी हुई है कि दूर से देखने पर उनका एक महराबदार दरवाजा सा दिखाई देता है। शायद इसी पर यह कथा

---

१ राव भारमल की मृत्यु सवत् १५९९ में सरवाण ग्राम में हुई थी। इसके बाद राणी अपने पुत्र पू जाजी के साथ अम्बा भवानी की यात्रा करने गई। (ईडर राज्य का इतिहास पृ० १३१)

चल पड़ी है कि पहाड़ी की गोभ में माताजी की एक गाय किसी ग्वाल के ढोरों के साथ चरने चली जाती थी और शाम को पहाड़ी में लौट आती थी। ग्वाल को विचार आया कि यह किसकी गाय है कहाँ से आती है और कहाँ चली जाती है? इस प्रकार धीरे धीरे उसका आश्चर्य बढ़ता गया और अन्त में उसने विचार किया कि इस गाय के मालिक को तलाश करके मैं उससे इतने दिनों की चराई (मजदूरी) अवश्य मांगू गा। एक दिन शाम को जब गाय लौटने लगी तो ग्वाल भी उसके पीछे पीछे चल दिया और पहाड़ी में पहुँच गया। थोड़ी देर में उसने देखा कि वह एक विशाल महल में पहुँच गया जिसमें बहुत से सुन्दर-सुन्दर कमरे बने हुए हैं। मुख्य कमरे में माताजी झूल रही थी और दासियाँ सेवा में उपस्थित थी। ग्वाल ने साहस करके पूछा 'क्या यह गाय तुम्हारी है? माता ने कहा 'हाँ'। ग्वाल ने फिर कहा 'यह मेरे पास बारह वर्ष से चर रही है इसलिए मैं इसकी मजदूरी माँगने आया हूँ'। अम्बा माताजी ने अपनी दासी को वहीं पड़े हुए जवों के ढेर में से कुछ उसको दे देने की आज्ञा दी। तदनुसार दासी ने एक पल्ले में कुछ अनाज लेकर ग्वाल को दे दिया। वह निराश व क्रुद्ध होकर चल दिया और बाहर आकर उस अनाज के दानों को फेंक दिया। घर आकर उसने देखा कि जो दो-एक दाने उसके कपड़े से लगे रह गए थे वे बहुत शुद्ध और बढ़िया सोने के थे। दूसरे दिन ग्वाल ने फिर वहाँ जाने का प्रयत्न किया परन्तु न तो उसे पहाड़ी का द्वार ही मिला और न माताजी की गाय ही उसके पास चरने आई।

इस पहाड़ी के पास ही एक दूसरी पहाड़ी है जिसके विषय में एक ताज़ा दन्तकथा प्रचलित है। कुछ वर्ष हुए सिरोही राज्य का एक किसान अपने बैलों की जोड़ी बेचने के लिए निकला। जब वह इधर उधर भटक रहा था तो उसे एक गुसाँई मिला जिसने कहा 'यदि तू मेरे साथ चले तो मैं तेरे बैल बिकवा दूँ।" वह उसके पीछे पीछे चल दिया और उसी पर्वत की एक गुफा में पहुँचा। गुफा में थोड़ी दूर चल कर वे एक विशाल महल में पहुँचे जिसके आगे एक बड़ा

भारी चौक और तबेला था, जिसमें बहुत से घोड़े बँधे हुए थे। वहाँ पर बहुत से आदमी भी काम कर रहे थे, कुछ लोग घोडो और मनुष्यो के कवच बना रहे थे, कुछ तोपे, बन्दूके और दूसरे लडाई के हथियार तैयार करने मे व्यस्त थे, वही पर एक ओर तोप के गोलो और बन्दूककी गोलियो का ढेर लगा हुआ था। अब गुसाँई ने किसान से बैलो की कीमत पूछी और जो कुछ उसने मागा वही महल में से लाकर दे दिया। तब किसान ने उसे पूछा, "इस प्रासाद का क्या नाम है, यह भण्डार किसका है और यहाँ पर कौन रहता है ?" गुसाँई ने उत्तर दिया, "यह बात तुझे दो वर्ष बाद मालूम हो जावेगी, यह सब सामान अग्रेज सरकार से लडाई करने के लिए इकठ्ठा किया गया है।" किसान ने घर लौट कर जो कुछ वहाँ देखा था गाँव के लोगो से कह सुनाया। दूसरे दिन बहुत से लोग उसी किसान को साथ लेकर उस गुफा को देखने गए परन्तु उसका कहीं भी पता नही चला।[1]

अम्बाजी के पास ही एक नाले के किनारे सहज उगे हुए मोगरा, जुही आदि के सुगन्धित पुष्पो की एक घनी वनी है; वही चित्तौड के राना कुम्भा का बसाया हुआ कुम्भारिया नामक ग्राम है। यही

---

१ ऐसी दन्त-कथाएं प्राय. सभी देशो में प्रचलित हैं। एनिहेरियर (Enheriar) वलहल्ला (Valhalla)में रहते हैं और जब संसार का प्रलय होगा तब, ओडिन (Odin) के साथ हथियार सजाकर नीचे आवेंगे। राजा आर्थर अपने शत्रुओ के नाश के अवसर की प्रतीक्षा में एवलन (Avalon) के टापू में रह रहा है। थुरिंजिया (Thuringia) के किफहासर (Kiffhauser) में फ्रेडरिक बार्बरोसा(Frederic Barbarassa) भी अपने अच्छे दिनों की प्रतीक्षा में पडा हुआ है—कहते हैं कि जब उसके शुभ दिन आवेंगे तब रथस्फील्ड (Ruthsfield) में एक पीयर नाम का सूखा हुआ पेड है वह हरा हो जावेगा और उसके नए अंकुर निकल आवेंगे तथा सूखे पत्ते जो पर्वत के आस पास उडते फिरते हैं वे बन्द हो जावेंगे।

पास ही में विमलशाह के बनवाए हुए सफेद पत्थर के जैन मन्दिर हैं। एक ऐसी दन्त कथा प्रचलित है कि, माता ने विमलशाह को बहुत सा धन दिया था जिससे उसने पारसनाथ के तीन सौ साठ मन्दिर बनवाए। माताओ ने उससे पूछा कि ये मन्दिर किसके प्रताप से बनवाए? तब उसने उत्तर दिया, 'मेरे गुरुजी के प्रताप से" माताने उससे तीन बार यही प्रश्न किया और उसने यही उत्तर दिया।

साल्ज़बर्ग (Salzburg) के पास (Wunderberg) (वंडरबर्ग) में बादशाह चार्ल्स पंचम अब भी अपने सरदारों के साथ रहता है और अपना सोने का ताज तथा राजदण्ड धारण करता है। वह जिस टेबिल के पास बैठता है उसकी दाढ़ी दो बार उसके चारों ओर लिपट चुकी है। कहते हैं कि जब वह इतनी लम्बी हो जायेगी कि उसके चारों ओर तीन बार लिपट जायेगी तो दुनियां का अन्त हो जायेगा और अधर्म (Antichrist) पृथ्वी पर आ जायेगा। पोरी द्वीप के सामने ही अफ्रीका में वहां के वास्क जाति के आदि निवासी रहते हैं। वे अम्बी नामकी परियों में विश्वास करते हैं, वे परियां पौराणिक परियों के समान हैं और किनारे से तीन मील की दूरी पर पैल्व की पहाड़ियों के पास भूगर्भ में रहती हैं। यहीं उनके रहने का मुख्य स्थान है और जिन लोगों को, विशेषकर यूरोप निवासियों को उन पृथ्वी के गर्भ में बने हुए स्थानों में जाने का अवसर मिला है वे इन अम्बी परियों के विषय में बड़ी-बड़ी विचित्र कथाएं कहते हैं जिनसे विदित होता है कि वे किस प्रकार लोगों की आवभगत करती हैं, कैसी कैसी बढ़िया भोजन से भरी हुई तश्तरियां सुसज्जित टेबिलों पर आकर लग जाती हैं, तश्तरियां लाने वाली परियों की केवल हाथों और पैरों की उंगलियां ही दिखाई देती हैं, और कुछ नहीं वे किस प्रकार एक कमरे से दूसरे कमरे में बिना सीढ़ियों के ही चली जाती हैं इत्यादि– ऐसे अवसरों पर लोगों को जो इनामें आदि मिलती हैं उसके सम्बन्ध में निम्न लिखित कथा पढ़िए —

इस पर माता ने कहा "जितना जल्दी हो सके तू यहाँ से भाग जा।" यह सुनकर वह एक सुरग मे होकर भागा, वह सुरग देलवाडा की सुरंग से मिली हुई थी इसलिए वह जमीन के अन्दर ही अन्दर आबू पर्वत पर जा निकला। इसके बाद माता ने सब देवालयो को नष्ट कर दिया और अपने इस चमत्कार के स्मारक के रूप मे केवल पांच मन्दिरो को रहने दिया। नष्ट हुए देवालयो के खण्डहर आज भी वही बिखरे पडे हैं।" विमलशाह ने जो देवालय बनवाए थे वे जलकर नष्ट हो गए, यह बात सच्ची मालूम होती है क्योंकि सम्पूर्ण आरासुर पर्वत पर कभी कभी ज्वालामुखी के तत्त्व प्रज्वलित हो उठते हैं इसलिए किसी समय ज्वालामुखीके विस्फोट से वे मन्दिर नष्ट हो गए होगे और विमलशाह ने अवश्य ही यह समझा होगा कि वे अम्बा माता के कोप से नष्ट हुए क्योकि उसके बाद मे बँधवाए हुए आबू पर्वत पर देलवाडा के चैत्य मे एक लेख है जिसमें माता की स्तुति मे इस प्रकार लिखा है –

"स्विट्जरलैण्ड के वाल्कवील गाँव के पास ही पर्वत पर एक अखरोट का जगल है, वहा से एक दिन रात के समय एक बौना आया और एक दाई के घर पर पूछताछ करने लगा। उसने दाई से आग्रह करके उसे अपने साथ जाने के लिए मजबूर किया। दाई वामन के पीछे-पीछे चल दी और दीपक हाथ में लिए हुए वह उसको रास्ता दिखाता हुआ उसी जगल में ले गया। पहले वे एक गुफा में घुसे और फिर एक भव्य महल में जाकर पहुँचे। फिर कुछ वडे-वडे कमरो में होती हुई वह दाई एक विशाल कमरे में पहुची जहाँ पर बौनो की रानी लेटी हुई थी। उसी की सेवा के लिए उसको वहा पर बुलाया गया था। दाई की सहायता से तुरन्त ही रानी ने एक सुन्दर राजकुमार को जन्म दिया। इसके बाद धन्यवाद देकर उसको विदा कर दिया। फिर वही बौना आया और उसको साथ लेकर घर पहुचाने चला। जब वह उससे विदा लेने लगा तब उसने उस दाई के पल्ले मे कुछ चीज डाल दी और घर पहुचने के पहले उस चीज को देखने के लिए मना कर दिया, परन्तु, उसका मन न रुका और उसने बौने के

६ "सती अम्बिके, तुम्हारे पल्लव के समान कोमल हाथ अशोक के समान लाल हैं तुम्हारी सुन्दरता तेजोमयी है तुम्हारे रथ को केसरी सिंह खींचते हैं तुम्हारी गोद में दो बालक बैठे हुए हैं–ऐसे स्वरूपवाली माता तुम सत्पुरुषों के दुखों का नाश करती हो।"

१ एक बार रात्रि के समय बुद्धिमती अम्बिका ने यहाँ के अधिपति को युगादिनाथ का पवित्र देवालय बँधवाने की आज्ञा दी।'

११ "श्री विक्रमादित्य को एक हजार अट्ठासी वर्ष बीत जाने पर (१०३२ ई०) श्री विमल ने अर्बुद पर श्री आदिदेव की स्थापना की उन्हीं की मैं वन्दना करता हूं।"

कुम्भारिया के नेमिनाथ के देवालय में इससे बाद का संवत् ११ ५ (१२४६ ई०) का एक लेख है जिसमें कुमारपाल सोलंकी के प्रधान बाहड़ के पुत्र महादेव के बनवाए हुए देवालय की सूचना लिखी हुई है इसमें यह विशेष लिखा है कि, 'पावपुरा गाँव में ऊंदर वसाहिका' नामक चैत्य उसीने बँधवाया था।

दिया होते ही बाबी ने आँखें खोल कर ऊपर देखा तो कुछ कोयलों के सिवा उसे कुछ दिखाई नहीं दिया। उसने कुपित होकर उनको फेंक दिया परन्तु दो कोयले यह दिखाने के लिए रख लिए कि बौनों ने उसके साथ कैसा दुर्व्यवहार किया। घर पहुँचकर उसने उन दोनों को भी जमीन पर फेंक दिया परन्तु उसी समय उसका पति आश्चर्य और खुशी से उछल पड़ा क्योंकि वे हीरों के समान चमक रहे थे। दाई ने कहा कि बौने ने उसके पल्ले में कोयलों के अतिरिक्त कुछ नहीं डाला था इसलिए उसने अपनी चतुर पड़ोसिनों को बुलाया और उसने उनको देख कर कहा 'ये तो बहुमूल्य दुर्लभ हीरों के सिवाय और कुछ नहीं हो सकते।' यह सुनकर वह दाई तुरन्त उस जगह दौड़कर गई जहां उसने कोयलों को डाल दिया था परन्तु वहां पर अब उसे कुछ न मिला। देखिए Keighley's Fairy Mythology & Thorpe's Northern mythology

१ अथवा ऊँदरे (चूहे) का मन्दिर। प्रबन्ध चिन्तामणि में लिखा है कि

पास ही में एक पालिया (चबूतरा) बना हुआ है जिसपर दूसरा जानने योग्य संवत् १२५६ (१२०० ई०) का लेख है कि, अर्बुद के स्वामी श्री धारावर्ष देव ने, जो जितनी दूर मे सूर्य का प्रकाश फैलता है उतनी दूर के समस्त माण्डलिको के लिए कटक के समान हैं, इस आरासनापुर की यह बावडी बँधाई हैं।"

इस प्रकार पहले उसकी कुलदेवी का वृत्तान्त लिखकर अब दांता व तरसंगमा के राणा बाघ परमार के वश का हाल लिखते हैं।

विक्रम की चालसवी पीढी मे रवपालजी परमार हुआ। वह द्वारका की यात्रा करने गया और लौटते समय कच्छ आया। उसका यह नियम था कि माता अम्बिका का पूजन किये विना वह कुछ नही खाता पीता था, इससे प्रसन्न होकर माताने उसको दर्शन दिए और वरदान माँगने के लिए कहा। उसने कहा, "मैं नगरठ्ठा में राजधानी कायम करके सिन्ध पर राज्य करना चाहता हूँ।" माता ने यही वरदान उसको दिया। इसके बाद उसने नगरठ्ठा, बामणवाड़ और बेला में अपना राज्य स्थापित किया। रवपालजी की बारहवी पीढी मे दामाजी हुआ। उसके कोई कुंअर नही था इसलिए उसने माताजी की आराधना की। अम्बाजी ने प्रसन्न होकर अपनी अंगुली काटकर उसके रक्त व अपने शरीर के मैल को मिलाकर एक पुत्र उत्पन्न किया। इस पुत्र को दामाजी को देकर उसका नाम जसराज रखने की आज्ञा दी। उन्होंने यह भी कहा, "मेरे देवालय की रक्षा करने के लिए मैंने इसको उत्पन्न किया है।" दामाजी के समय में ही मुसलमानो ने नगरठ्ठा पर हमला कर दिया और नौ वर्ष की लडाई के बाद उसको कब्जे में कर लिया। इसी युद्ध मे राजा दामाजी मारा गया था। उसके बाद जसराज ने लडाई चालू रख कर नगर को वापस जीत लिया था।

जसराज भी माता का पूर्ण भक्त था और उसको माताजी का पूरा आश्रय प्राप्त था। इसके राज्य पर मुसलमान चढ आए और जानवरो

कुमारपाल ने एक चूहे का धन लेकर उसी की स्मृति में यह मन्दिर बनवाया था। देखिए–भा १ (उत्तरार्द्ध) पृ० ११६।

की हड्डियों के बड़े-बड़े ढ़ुए बनाकर तथा अन्य अपवित्र काम करके भूमि को इतनी भ्रष्ट कर दिया कि अम्बाजी को वहाँ पर रहने से घृणा हो गई और उन्होंने जसराज से कहा 'अब यहाँ अधिक समय तक रहने की मेरी इच्छा नहीं है मैं अपने स्थान आरासुर में जाती हूँ।' राजा ने कहा 'मैं आपका दास हूँ जहाँ पर आप रहेंगी वहीं पर मैं भी आ जाऊँगा।' उसकी प्रार्थना सुनकर माता ने कहा 'अच्छी बात है तू मेरे साथ चल मैं तुझे वहाँ का राज्य दिलाऊँगी।'' यह कहकर माता अन्तर्धान हो गई और बाद में जसराज ने मुसलमानों के साथ लड़ाई में नगरठ्ठा खो दिया। इसके बाद वह अपना कुटुम्ब साथ लेकर माताजी के पास आरासुर में चला गया। माताजी ने अपनी सवारी का बाघ उसको देकर कहा 'इस पर बैठ कर जितनी दूर घूम लेगा उतना ही प्रदेश तेरे आधीन हो जावेगा।'' राजा ने ऐसा ही किया और सात सौ साठ गाँवों में चक्कर लगाया। दक्षिण में खेरालू तक धोलरपटा ईशान कोण में कोटड़ा पूर्व में घेरोल उत्तर में सिरोही राज्य में मारजा की बावड़ी अग्निकोण में गड़वाड़ा और वायव्य कोण में हाथीदरा गाँव तक उसने अपना राज्य कायम किया। अब्बार की पहाड़ियों में जिसको आजकल 'गब्बर' कहते हैं उसको एक गड़ा हुआ खजाना मिला। इसी धन से सेना संगठन करके अपने बाप का वैर लेने वह नगरठ्ठा गया और वहाँ से मुसलमानों को बाहर निकाल कर अपना अधिकार जमा लिया। इसके पश्चात् मृत्युपर्यन्त वह वहीं रहा और उसका पुत्र 'गब्बर गढ़' में माताजी की सेवा में रहा।

जसराज का पुत्र केदारसिंह अथवा केशरसिंह था उसने तरसंगमा के शासक तरसंगिया भील से युद्ध करके उसको मार डाला और गब्बरगढ़ से हट कर तरसंगमा को अपनी राजधानी बनाया। केदारसिंह का कुँवर जसपाल अथवा कुलपाल था। उसने रोहिड़ा में एक बड़ा भारी यज्ञ किया परन्तु असफल रहा। इसपर यज्ञ कराने वाले ब्राह्मण को इतना दुःख हुआ कि वह अग्निकुण्ड में कूद पड़ा और मरते समय जसपाल को यह शाप दे गया 'तेरे कुल में अब से कोई भी छत्रधारी

नही होगा और हमेशा अवसर चूक कर बाद मे पछताते रहोगे।"[1] कुछ पीढियो के बाद राणा जगतपाल के समय मे अलाउद्दीन खूनी ने तरसंगमा ले लिया। राणा माताजीका आश्रय प्राप्त करनेके लिए प्रार्थना करने लगा तब माताजी ने उसे दूसरे दिन लडने को कहा। इसके अनुसार उसने दूसरे दिन युद्ध किया और तरसगमा वापस ले लिया।

जगतपाल से छठी पीढी मे कान्हडदेव हुआ, उसके भाई अम्बोजी ने कोटडा का पट्टा ले लिया। कान्हडदेव के दो रानियां थी जिनमें से हलवद की झाली रानी रामकु वरि को दोतर अथवा खेराला का पट्टा खानगी मे मिला। वह अपने कु वर मेघजी सहित वही रहती थी। खेरालू का पूर्वीय दरवाजा जो झालीजी का दरवाजा कहलाता है, उसी का बघवाया हुआ है। इसके अतिरिक्त उसने एक बावडी और तालाब भी बनवाया था। दूसरी राणी रतन कु वरि उदयपुर की सीसोदणी थी। उसने रोहिलपुर पट्टण बसाया, जो अब भी रोहीडा कहलाता है। तीसरी बार विवाह करने के लिए राणा फिर उदयपुर गया और वहां से लाल कु अर सीसोदणी को ब्याह कर लौटते समय अम्बोजी ने पूरी बरात को कोटडा मे ठहराने का आग्रह किया परन्तु कान्हडदेव की इच्छा वहां ठहरने की न थी। तब अम्बोजी ने लाल कुंवरि सीसोदणी को नम्रतापूर्वक कहा, "पट्टे के कारण हम दोनो भाइयो मे कुछ झगडा होगया था, अब, तुम्हारे आने पर भी यदि यह झगड़ा न मिटा तो फिर कब मिटेगा?" इस पर राणी ने अपने पति को समझाया और ठहरने को राजी कर लिया। शाम को दोनो भाई साथ-साथ भोजन करने बैठे तो अम्बोजी यकायक उठ खडा हुआ और कान्हडदेव के शिर मे तलवार मारकर ऊपर भागा, कान्हडदेव भी

---

१. इस पर वर्तमान (अ ग्रेजी मूल के लिखते समय) राणा जालिम सिंह ने कहा है कि, "यह शाप मेरे काका जगतसिंह के समय तक प्रभावशाली रहा था।"

उसके पीछे भागा और उसकी पोशाक पकड़कर खींच लिया तब अपनी कटार से उसपर इक्कीस बार किए। इस प्रकार दोनों भाई मर गए। नव विवाहिता रानी वहीं सती हो गई, उस पर बनी हुई छतरी आज भी मौजूद है। झाली रानी अपने पीहर हलवद में सती हो गई।

जब राणा कान्हड़देव शादी करने के लिए उदयपुर गया था तब अपने दोनों पुत्र मेघजी और वाघजी को तो उनके ननसाल हलवद में छोड़ गया था और तरसंगमा का कार्यभार अपने खवास माल रावत को सुपुर्द कर गया था। अम्बोजी की पुत्री ईडर के राव भाण को ब्याही थी इसलिए उसने दोनों भाइयों की मृत्यु का हाल सुनते ही फौज लेकर तरसंगमा पर चढ़ाई करदी और वहाँ पर अपना कब्जा कर लिया। तरसंगमा में अपनी फौज छोड़कर वह माल रावत को पकड़ कर ईडर ले गया और अपने महल के सामने ही जेलखाने में बन्द कर दिया। राव नित्य अपने महल की खिड़की में बैठता और माल को चिढ़ाता। अन्त में तंग आकर एक दिन खवास ने कहा 'राव! कुंवर बालक हैं इसलिए तुम हमारे देश पर कब्जा कर सके हो परन्तु यह मत समझना कि उनकी मदद पर कोई भी नहीं है। पिंजड़े में पड़ा हुआ शेर कुछ भी नहीं कर सकता लेकिन यदि तुम मुझे एक बार भी छोड़ दो तो अब भी तुम्हारे महल को तुड़वाकर एक-एक कंकड़ रोहीड़ा की हरणाव नदी में डलवा सकता हूँ। यह सुनकर राव ने गुस्से में भरकर पहरायती से कहा इस कुत्ते को छोड़ दो!" राव की स्त्री अम्बोजी की लड़की थी और माल रावत के पराक्रम को जानती थी इसलिए उस दिन तो यह सुनकर उसने माल को नहीं छूटने दिया परन्तु दूसरे दिन अवसर देखकर रावने उसको छुड़वा दिया। कैद से निकल कर माल दो दिन तो कुलनाथ महादेव के मन्दिर में ठहरा और फिर सीधा हलवद चला गया। वहाँ पहुँच कर वह एक तालाब के किनारे बैठ गया उसी समय झालीजी राणी की एक बडारण (दासी) वहाँ पर पानी भरने आई इसलिए उसीके द्वारा

उसने अपनी पूरी कथा अन्दर कहला दी। राजा ने उसको बुलवा लिया और शीघ्र ही दोनो कुवरो को तथा बहुत सा धन साथ लेकर वह अहमदाबाद की ओर रवाना हुआ। अहमदाबाद पहुँचकर मारू पहले तो बादशाह के मन्त्री से मिला और उससे सब बात तय करली, फिर दोनो कुअरो को गोद मे लेकर अपने सर पर जलती आग की सिगडी रख कर बादशाह के दरबार मे शिकायत करन रवाना हुआ। जब बादशाह ने यह हाल देखा तो बोला, "अरे, बच्चे जल जावे गे, इन्हे उतार दो, तब दोनो कुअर चिल्ला उठे, "साहब, हम उतर कर कहा खडे हो ? ईडर वालो ने हमारी जमीन छीन ली है, यह भूमि बादशाह की है यदि यहा हम उतर पडे तो वह हमारा शत्रु हो जावेगा।" शाह ने कहा "धीरज रक्खो और नीचे उतरो।" इसके बाद बादशाह ने उनकी बात शान्ति से सुनी और एक लाख रुपया नजराना तय करके उनके साथ ईडर फौज भेजने को राजी हुआ। बादशाही सेना ने आकर ईडर के बाहर पडाव डाला तब राव भाण ने सेना के अफसर से कहलवाया कि जो कुछ नजराना तरसगमा वालो ने देना स्वीकार किया है वही मुझ से ले लो और सेना वापस लेजाओ।' परन्तु मुसलमान अफसर ने जवाब दिया, "मुझे तो जैसा बादशाह का हुक्म मिला है वैसा ही करूगा।" यह सुनकर राव भाण अपने कुटुम्ब सहित भाग गया और शाही सेना ने ईडर पर चढाई करके राव के महलो को तहसनहस कर दिया। तब मारू रावत ने कहा, "जो कोई इन महलो का पत्थर लेजाकर हरणाव नदी मे डालेगा उसको मैं एक मोहर दूगा।" यह सुनकर बहुत से सिपाहियो ने पत्थर लेजा लेजाकर हरनाव के किनारे पर ढेर लगा दिया। उसी ढेर से शामलाजी का मन्दिर बना जो अब भी नदी के किनारे पर गुढा ग्राम के पास मौजूद है। इसके बाद बादशाही सेना तरसगमा की ओर रवाना हुई, उसे देखते ही ईडर की फौज भाग गई और बाद मे नगर को खुशहाल करके कुँअरो को सौप दिया। अब सेना के सरदार ने मारू रावत से कहा, 'जो धन तुमने देने का वादा किया था वह लाओ।' मारू ने

उत्तर दिया मेरे पास यहाँ तो धन नहीं है सुभासना के पर्वत में खजाना गड़ा है यदि तुम वहाँ चलो तो तुम्हें बहुत सा धन दे सकता हूँ। यह कह कर कुँवरों को माता अम्बाजी के आश्रम पर छोड़ कर माक सेना के साथ सुभासना पर्वत की ओर चल दिया। वहाँ पहुँच कर उसने गबवाडा व सम्मा और भाटवास के बीच में सरसग तालाब के किनारे फौज का डेरा लगवा दिया और कहा अब मैं अन्दर जाता हूँ और खजाना लेकर अभी आता हूँ। यह कह कर वह सुभासना की पहाड़ियों में चला गया और वहीं छुप कर बैठ रहा। मुसलमानों ने एक दो दिन तक तो उसकी प्रतीक्षा की फिर जब वह न लौटा तो उसको खोजने निकले परन्तु उनको उसका पता न लगा। अन्त में माक ने उनसे कहलाया कि 'यदि तुम मुझे तंग न करो तो तुम्हारे पास आकर मामला तय कर लूँ। मुसलमानों ने इसे स्वीकार कर लिया और तब माक ने आकर कहा "मेरे पास रुपया तो है नहीं परन्तु इसकी एवज में खेरालू का परगना बादशाह के गिरो रख सकता हूँ जब रुपया चुका दूँगा तब परगना वापस ले लूँगा। इस प्रकार उसने खेराल का रेहननामा लिख दिया परन्तु कुछ गाँवों में अपना आँग रख लिया।

राणा भासकरण जी के समय में अकबर का कोई शाहजादा किसी अपराध के कारण दिल्ली से भाग निकला और उन्मपुर, जयपुर आदि कितने ही रजवाड़ों में गया परन्तु उसे कहीं भी शरण न मिली। अन्त में वह तरसगमा आया और भासकर्ण जी ने उसको शरण दी। वह वहाँ पर कुछ दिन रहा और तरसंगमा से लगभग तीन मील उत्तर की ओर कालधाण नामक पहाड़ी पर एक किला बनवाया। एक दिन शाहजादा राणा से बहुत प्रसन्न हुआ और उसे अपनी अँगूठी देने लगा। यह अँगूठी बहुत कीमती थी और उसमें एक बहुत बढ़िया हीरा जड़ा हुआ था। राणा ने कहा 'मैं इस समय कुछ नहीं लूँगा जब आपका काम सिद्ध हो जावेगा और आप सकुशल घर लौटेंगे उस समय जो कुछ देंगे वही ले लूँगा। राणा के किसी आदमी ने उससे

कहा, "यह शाहजादा स्थिर बुद्धि वाला नही है, आपने अ गूठी न ले कर एक बडा अच्छा अवसर हाथ से खो दिया।" यह बात सुन कर राणा को अपने कुल को लगे हुए शाप की याद आई कि तरसंगमा के राणा पश्चिमबुद्धि हुआ करते हैं। दूसरे दिन उसने शाहजादे से कहा, "कल आप मुझे जो अ गूठी दे रहे थे वह आज दे दीजिए।" शाहजादे ने कहा, "जाते समय वह तुम्हे देता जाऊँगा।" यह बात उसने कह तो दी परन्तु बिना अ गूठी दिए ही पश्चिम की ओर चला गया। वहाँ पर भुज के राव भारमल जी ने उसको पकड कर दिल्ली पहुँचा दिया। इसके बदले भारमल जी को मोरबी[1] का परगना मिला। बाद मे जब बादशाह और शाहजादा मे मेल हो गया तो बादशाह ने पूछा, "तुमको किस किस ने शरण दी ?" शाहजादे ने उत्तर दिया, "मुझे तरसगमा के राणा आसकर्ण जी ने रखा और मेरी बहुत खिदमत की।" यह सुन कर बादशाह ने आसकर्ण जी के लिए शिरोपाव भेजा और महाराणा की पदवी दी। शाहजादा ने भी वह बहुमूल्य हीरो से जडी बीटी राणा के पास भेज दी। आसकर्णजी के तीन पुत्र थे — वाघ, जयमल और प्रतापसिंह।

राणा वाघ के समय मे, ईडर के राव कल्याणमल की दोनो रानियाँ अर्थात् उदयपुर के राणा की पुत्री भानमती (भाणवन्ती) और भुज के राव की पुत्री विनयवती हर एक सोमवार को महादेव का पूजन करने के लिए ब्रह्मखेड मे जाया करती थी।[2] यह स्थान भृगुक्षेत्र कहलाता है और यही हरणाव नदी है। राणा बाघ इसी नदी को अपने राज्य की सीमा मानते थे — "हूँ राणो बाघ, मारो हरणाव सुधी भाग।"

---

१ यह पुर्व लिखी हुई कथा का अस्पष्ट रूपान्तर प्रतीत होता है — इसके अनुसार यह शाहजादा अहमदाबाद का मुजफ्फर तृतीय था।

२ यह वर्णन दांता की वात के आधार पर लिखा है। पहले का वर्णन ईडर की वात के आधार पर लिखा गया है।

राणा बाघ को किसी ने कह दिया कि ईडर की रानियाँ बहुत सुन्दर हैं इसलिए उसने उनको देखने का निश्चय किया। एक सोमवार के दिन वह ब्राह्मण का वेष बना कर मुमुक्षेत्र चला गया और ब्राह्मणों में जाकर बैठ गया। महादेव का पूजन करके रानियों ने ब्राह्मणों के तिलक लगा कर दक्षिणा दी। दूसरे ब्राह्मणों की तरह उन्होंने राणा के भी तिलक लगाया और उसको भी दक्षिणा देने लगी तब उसने दक्षिणा लेने से इन्कार कर दिया। जब उससे इसका कारण पूछा तो कहा 'मैंने काशी जाकर यह शपथ ले ली है कि किसी से दान न लूँगा।' अस्तु—रानियाँ लौट गईं और राणा बाघ भी अपने घर वापस चला गया परन्तु यह सब बात राव कल्याणमल को किसी तरह मालूम हो गई। उसने राणा बाघ के भाई जयमल से मित्रता करके उसको ईडर में रख लिया और बेगरमा जमादार से भी मित्रता करली। बेगरणा जमादार पहले नागर ब्राह्मण था और फिर मुसलमान हो गया था बादशाह से कुछ झगड़ा हो जाने के कारण अहमदाबाद छोड़ कर ईडर चला आया था। राव ने उससे कहा कि यदि तुम राणा बाघ को किसी तरह पकड़ लाओ तो तुमको वराली गाँव दे दूँ। इसके अनुसार उसने जाकर वराली पर कब्जा कर लिया और राणा बाघ के साथ पूर्ण मित्रता करके रहने लगा। एक दिन जमादार ने राणा को अफीम पीने के लिए साबरमती के किनारे सांक नामक स्थान पर निमन्त्रित किया। राणा भी दो सवारों को साथ लेकर वहाँ चला गया। मूनजी बाघावत दीपुरी का ठाकुर और राणा के सरदारों में से एक था उसने सोचा कि आज राणा अकेला आ रहा है इसलिए अवश्य ही पकड़ कर कैद कर लिया जावेगा। उसने राणा को अकेला जाने के लिये मना भी किया परन्तु ब्राह्मण के शाप के कारण उसको भविष्य की कुछ न सूझी इसलिये उसने केवल वहाँ जाने की जिद ही न की वरन् मूनजी को अपने साथ में आने से भी इन्कार कर दिया। परन्तु ठाकुर पर भावी भय का इतना आतंक छा गया था कि दूर-दूर रह कर भी वह उसके पीछे-पीछे चला ही

गया। लाँक पहुँच कर राणा ने वेगराणा के साथ भोजन किया और शराब पी। इसके बाद जमादार के आदमियो ने उसको गिरफ्तार कर लिया, उसके साथियो मे से एक तो मारा गया और दूसरा भाग गया। इतने ही मे मूनजी भी उसकी सहायता को आ पहुँचा परन्तु दो आदमियो को मारने के बाद मारा गया। अब जमादार राणा को बराली ले गया और कैद मे डाल दिया। फिर, उसने राव को पत्र लिखा कि, 'मैंने राणा बाघ को पकड लिया है आप जयमल को कैद कर ले।' जिस समय यह पत्र लेकर आदमी ईडर पहुँचा उस समय राव जी ऊपर के कमरे मे जयमल के साथ चौपड खेल रहे थे और और नोचे सीढियो पर सालू भूत नामक चाँपू अथवा खापरेटा का ठाकुर पहरा दे रहा था। पत्रवाहक ने उससे पूछा, 'रावजी कहाँ है ? मैं बराली से यह पत्र लाया हू।'' ठाकुर ने कहा, ''किस विषय का पत्र है ? साफ-साफ कहो कोई डर की बात नही है मैं भी रावजी का ही नौकर हूँ।'' तब दूत ने कहा, ''यह राणा बाघ की गिरफ्तारी का पत्र है।'' सालूभूत ने कहा, ''रावजी सो रहे हैं तुम यही बैठो, मै जाकर देखता हू, यदि जग रहे होगे तो तुम्हे बुला ले गे और यदि सो रहे होगे तो अभी तुम ठहरो, परन्तु जोर से मत बोलना वरना वे तुम पर नाराज् हो जावेगे।'' यह कह कर सालूभूत ऊपर गया और राव के पिछाडी और जयमल के सामने खडा हो कर उसको इशारे से समझाने लगा कि, राव तुम्हारा शिर काट डालेगा, परन्तु जयमल समझ न सका तब उसने उसे नीचे आने का इशारा किया। जयमल भी कुछ वहाना बना कर नीचे चला आया तब सालूभूत ने उसे सब बात समझा कर कही। सालभूत की बात सुन कर वह तो अपने घोडे पर सवार होकर सीधा उत्तर मे वालेशी (महू) की ओर चल दिया। वह एक साँस मे वीस मील तक इतनी तेजो से गया कि आकोडिया गाँव तक पहुँचते-पहुँचते तो उसके घोडे के प्राण ही निकल गये, इसलिए वह गाँव मे पैदल ही गया और बजरग बडवा नामक चारण के घर में शरण ली। वजरग के लडके सूधो जी ने जयमल से पूछा, ''तुम

कौन हो और इस तरह क्यों और कहाँ से भग कर आए हो ? जयमल ने कहा राव के आदमी मेरा पीछा कर रहे हैं यदि तुम मेरी रक्षा कर सकते हो तो करो वरना मुझे कहीं थारा निकाल दो। चारण ने कहा 'मैं प्राणपण से तुम्हारी रक्षा करूंगा परन्तु यदि मैं मर भी जाऊँगा तो भी राव तुम्हें छोड़ेगा नहीं इसलिए अच्छा तो यह होगा कि मेरी इन दोनों घोड़ियों में से एक को लेकर तुम भाग जाओ। जब तुम्ह अपना देश वापस मिल जावे तब मुझे भी याद रखना। इसके बाद जयमल नसर नाम की घोड़ी लेकर रवाना हो गया और सुरक्षित खेराळू पहुँच गया।

इधर पत्र मिलते ही राव ने जयमल को पकड़ने के लिए आदमी रवाना कर दिये। उन्होंने आकोडिया के पास आकर देखा कि जयमल का घोड़ा मरा पड़ा है इसलिए सोचा कि अवश्य ही इस गाँव में कहीं न कहीं छुपा हुआ है। चारण के घर जाकर उन लोगों ने बहुत कुछ धार मचाया और अपना चोर माँगने लगे। चारण ने कहा 'वह तो मुझे धोखा देकर भग गया और मेरी घोड़ी भी ले गया मुझे क्या पता कि वह कौन था ? इसके बाद पीछा करने वाले बीस-पच्चीस मील तक आगे जाकर ईडर लौट आए। जयमल ने खेराळू पहुँच कर सेना इकट्ठी की और तरसंगमा जाकर कब्जा कर लिया। इसके बाद वह और भी सामान इकट्ठा करने लगा इतने ही में राव कल्याणमल भी लश्कर लेकर आ पहुँचा परन्तु उसको हार हुई और वह ईडर लौट गया। इसके बाद भी राव के साथ बहुत दिनों तक झगड़ा चलता रहा।

इसी बीच म राणा की सेवा मे महाबड़ के ठाकुर दोनो भाई महीपा और रायधर तथा बजासना का कासी ठाकुर वेपा रहता था। वेपा के पास अस्सी आदमियों का बल था इसलिए उसने ईडर पर चढ़ाई करने की आज्ञा माँगी और उसे मिल भी गई। उसने अपने साथियों को छोटी-छोटी झोंपड़ियों म ईडर के परगने मे और फिर दो तीन आदमी साथ लेकर खुद भी वहीं पर आ पहुँचा। उस समय

राव के दरबार मे भांडो का अभिनय हो रहा था, देपा भी और लोगो मे जाकर बैठ गया और राव के भाई केशवदास पर, जो वहाँ पर उपस्थित था, निगह रखी। इस केशवदास के एक लडकी थी जो ऊपर बैठी हुई थी और राणा बाघ पर ककडिया फेक रही थी, जब वह रोने का शब्द करता तो देखने वाले खूब प्रसन्न होकर हँसते थे। यह देख कर राणा बाघ ने कहा, "जब तक, जो कोई भी मेरा उत्तराधिकारो हो, वह इम लडकी को न रुलावेगा, मेरे प्राणो की गति न होगी।' राणा की यह दुर्दशा देख कर देपा ठाकुर बहुत दुखी हुआ। जब खेल समाप्त हुआ और भांडो ने थाली फेरी तो उसने अपने हाथ का कडा उतार कर थाली मे डाल दिया, तब भाड ने कहा, 'यह किमने दिया, हम किसका बखान करे ?' दीपा कुछ न बोला, परन्तु जो लोग उसके आस पास खडे थे उन्होने कहा, "किसी शराबी ने डाल दिए हैं, तुम्हे तो परमात्मा ने दिये हैं, तुम्हे ज्यादा पूछताछ करने से क्या काम है ?" जब उन्होने फिर थाली फिराई तो देपा ने अपना दूसरा कडा भी डाल दिया। उस समय तक आधी रात बीत गई थी, केशवदास उसी समय बाहर निकला। देपा भी उसके पीछे-पीछे चला और कुछ दूर जाकर मशालची के हाथ पर ऐसा झटका मारा कि मशाल नीचे गिर कर बुझ गई। अँधेरा होते ही देपा तो केशवदास का शिर काट कर चल दिया और बहुत से आदमी इकट्ठे होकर चिल्लाने लगे, 'राव के भाई को किसने मारा ? राव के भाई को किसने मार दिया ?' यह देख कर वह लडकी भी रोने-पीटने लगी लगी और राणा बाघ ने जब यह समाचार सुना तो तुरन्त ही अपघात कर के मर गया।

जब तक राणा जीवित रहा राव उससे नित्य कहता रहा कि, यदि कुछ गांव मेरे नाम लिख दो तो मै तुम्हे छोड दूं परन्तु वह हर बार यही कहता रहा कि,

'हूं राणो बाघ, मारो हरणाव सुधी भाग।'

जब रूपा ततरे में बाहर निकल गया तो उसने एक पहाड़ी पर आकर आग लगा दी। इस आग की लपटों को देखते ही उसके रखे हुए आम्भियां ने भी जिस जिस गाँव में थे आग लगा दी। इसके बाद उसने तरसंगमा आकर जयमल से जुहार किया और कहा कि माना की ने मरी लाज रखो। जयमल ने भी उसरा भीमाल नामक गाँव दिया। वजासण गाँव में अब भी रूपा के वशज खेती करते हैं। बाद में राणा जगतसिंह ने भीमाल गाँव खालसे कर लिया परन्तु चौथा हिस्सा छोड़ दिया जो अब तक देपा के वंशजों को मिलता है।

चारण बडवा सादूजी को राव ने बुला कर कहा कि तुमने मेरे चोर को शरण दी है इसलिए तुम मेरे राज्य से बाहर निकल जाओ। जब जयमल ने यह बात सुनी तो उसने चारण को बुलाकर पालियाली नामक गाँव दिया और अपना भक्त भाट बना कर अपने पास रख लिया।[1]

महीपा और राजधर नाम के दो गडिया[2] जयमल की चाकरी में रहते थे कुछ दिन की छुट्टी लेकर घर चले। रास्ते में गोठडा गाँव के दरवाजे पर नदी किनारे उन्हें बकरियाँ चराता हुआ एक गडरिया मिला जिसे उन्होंने पूछा कि,तू किसकी बकरियाँ चराता है? उसने उत्तर दिया 'यह बकरियाँ राणा जी की है। तब उन्होंने कहा 'हम भी राणाजी के आदमी हैं इसलिए इनमें से हमको एक बकरा दे। जब गडरिये ने नाही की तो उन्होंने जबरदस्ती एक बकरा छीन कर मार डाला। गडरिये ने तरसंगमा जाकर फरियाद की कि, नाही करते करते भी गडिया ने जबरदस्ती बकरा छीन कर मार डाला। यह सुन कर राणा ने कहा इन लोगों के दिमाग बहुत बढ़ गए हैं इन्हें समझना है। गडियो के किसी मित्र ने यह बात सुन ली इसलिए उसने

---

१ जिस चारण से यह वृत्तान्त मिला है वह सादूजी का वंशज है। अब भी पालियाली गाँव में उसका सोलहवाँ हिस्सा है।

२ बलपति।

उन्हे कहला भेजा 'राणा तुम्हारे खिलाफ है यदि पूरा भरोसा किए विना आ जाओगे तो वह तुम्हे मार डालेगा।' जब छः महीने बीत गए और गढिये नही लौटे तो राणा ने उन्हें बुलावा भेजा। इस पर उन्होने कहलाया कि हमे तुम्हारा विश्वास नही है, यदि हमे वड्आ सादूजी की बाँहधर[1] दिला दो तो आ जावे।' जब दूत यह समाचार लेकर लौटा तो राणा ने अपने मन्त्रियो और कार्यकर्ताओ को बुलाया और उनसे सलाह करके ऐसी युक्ति से चारण की बाहधर का पत्र लिखवा दिया कि उसे कानो कान खबर भी न मिली। महीपा और राजधर इस पत्र को पढ कर तरसगमा चले आये और एक बाग मे उतर कर राणा के दरबार मे उपस्थित होने की तैयारियाँ करने लगे। इतने ही मे वडवा सादूजी उनसे मिलने आया और स्वाभाविक रीति से कहा, "राणाजी और तुम लोगो मे, दोनो स्वामी सेवको में फिर मेल हो गया यह बडी अच्छी बात हुई।" तब उन दोनो भाइयो ने कहा, "ठीक ही है, परन्तु यदि हमे तुम्हारी बाँहधर का पत्र न मिलता तो हम यहाँ कभी न आते।" यह सुन कर चारण ने कहा, "मुझे तो इस विषय मे एक शब्द भी मालूम नही है।" तब गढियो ने वह पत्र दिखलाया तो सादूजी ने कहा, 'मुझे तो बाँहधर के बारे में कुछ भी मालूम नही है, तुमको जैसा अच्छा लगे वैसा ही करो।' अब उन दोनो भाइयो को मालूम हुआ कि उनके साथ धोखा हुआ इसलिए उन्होने आपस मे सोच कर एक युक्ति निकाली। छोटा भाई बडे भाई से लड पडा और यही मिष लेकर वहाँ से चल दिया। कुछ लोगो ने इकट्ठे होकर बडे भाई को समझाया कि लडना झगडना ठीक नही, तुम अपने छोटे भाई को राजी कर लाओ। यह सुन कर छोटे भाई को मनाने के लिए महीपा भी घोडे पर सवार हो कर रवाना हो गया और आगे जाकर दोनो भाई साथ-साथ महावड चले गये।

जब राणा को मालूम हुआ कि गढिए वापस चले गए तो उसने इसका कारण तलाश किया। लोगो ने कहा कि उन दोनो भाइयो में

---

१. ज़मानत।

लड़ाई हो गई, छोटा भाई नाराज होकर चला गया था और बड़ा उसको लौटा लाने के लिए चला गया। राणा ने अपने मन में सोचा कि किसी न किसी ने उनसे भेद कह दिया है इसीलिए वे चले गये हैं। फिर, उसने गड़वी को बुला कर पूछा कि, क्या तुम गढ़ियों से मिलने गए थे और यह सब हाल तुम्हीने उनको बताया था या और किसी ने ? गढ़ियों का एक नौकर वालिया कोली था वह अफीम खाया करता था और राणाजी के लिए पान के बीड़े लगाया करता था। चारण ने राणा से कहा, शायद उसी ने यह भेद गढ़ियों से जाकर कह दिया है। इस पर राणा ने कोली को बुला कर धमकाया और नौकरी से अलग कर दिया इसलिए वह भी महादेव चला गया। इसके बाद गड़वा साहूजी ने राणा से कहा 'यह तुमने खूब किया ठाकुर, ईडर के राव से मेरी लड़ाई करवा कर मुझे यहाँ से भाये और फिर मेरे नाम की झूठी चौहुधर लिख कर गढ़ियों को यहाँ बुला लिया। इससे तुमने मेरे चरित्र पर कलङ्क लगाने की कोशिश की। अब मैं अधिक दिन तुम्हारे यहाँ नहीं ठहर सकता। यों कह कर वह नाराज होकर चला गया और जब महीपा और रायधर को यह बात मालूम हुई तो उन्होंने चुप-चाप उसको अपने पास महादेव बुला लिया तथा उसे एक गाँव भी देने का विचार करने लगे। परन्तु जब यह बात राणा को मालूम हुई तो उसने गड़वी से वापस आने के लिए आग्रह किया और अन्त में उसको बुला कर फिर पनियाली गाँव में रख दिया।

इसके बाद ईडर की फौज ने तरसंगमा पर चढ़ाई की और लड़ाई में दोनों ही तरफ के बहुत से आदमी मारे गये। अन्त में ईडर की सेना वापस लौटी। उस समय वे लोग तरसंगमा से एक नागर ब्राह्मण को पकड़ ले गए और उसे राव कल्याणमल के सामने उपस्थित किया। राव ने उसकी नाक कटवा देने की आज्ञा दी परन्तु उसने कहा "यह तो ठीक नहीं इससे तो यही मालूम होगा कि मैं कल्याणमल की सेना के साथ था। राव ने पूछा 'तेरी बात का क्या रहस्य है ?" तब

नागर ने कहा, "जब तुम मुझे अकेले को पकड कर नाक काट लोगे तो लोग समझेंगे कि इनकी तमाम फौज का नाक कट गया।" यह सुन कर राव ने उसे बिना नाक काटे ही छोड दिया।

जब फौज लौट रही थी उस समय एक कुणबी की स्त्री अपने पति के लिए व्यालू लेकर खेत को जा रही थी। राव को भूख लग रही थी इसलिए उससे पूछा, "तेरे पास क्या है ?" उसने कहा, 'मेरे पास खीर है।' राव उससे खीर लेकर खाने लगा परन्तु उसमे उँगली डालते ही जल गई। तब उस स्त्री ने कहा, "वाह ! तुम तो कल्याणमल जैसे बेसमझ मालूम पडते हो।" राव ने पूछा, 'यह कैसे ?' उसने कहा, "राव दस वर्ष से तरसगमा लेने का प्रयत्न कर रहा है, परन्तु पहले आस-पास के गाँव लिए बिना उसकी यह बात पार नही पडती, इसी तरह किनारे-किनारे से ठण्डी खीर खाने के बदले तुमने भी पहले ही बीच मे एक दम उँगली डाल दी।' यह सुन कर राव ने मन मे विचार किया कि जो कुछ यह कहती है बिलकुल ठीक है, इससे मुझे अच्छी शिक्षा मिली है। इसके बाद उसने गढियो को बुला कर अपनी सेना की सरदारी लेने के लिए कहा, परन्तु उन्होने कहा, "हमने बहुत दिनो तक राणा का नमक खाया है और उसके कुओ का पानी पिया है इसलिए एक बार उसे समझाने की मोहलत दीजिए, फिर यदि वह हमारा कहना न मानेगा तो जैसा आप कहेगे वैसा करेगे।" राव ने हाँ करली और महीपा ने तरसगमा जाकर राणा से कहा, "तरसगमा के किले के पास जो पीपल के वृक्ष उगे हुए हैं उन्हे कटवा दीजिए वरना इन पर चढ कर शत्रु किले के भीतर आ जावेगे और तुम्हारे महलो तक पहुँच जावेगे।' राणा ने कहा, "यहाँ तक आने की शक्ति ही किसमें है ? फिर, पीपल के वृक्ष को कटवाना और ब्राह्मण की हत्या करना, दोनो बराबर पापकारक[1] है इसलिए मैं तो एक भी पेड

---

१ श्रीमद्भगवद्गीता में श्री कृष्ण ने कहा है —

अश्वत्थ सर्ववृक्षाणा देवर्षीणा च नारद ।
गन्धर्वाना चित्ररथ , सिद्धाना कपिलो मुनि ॥ (पृ० २६)

नहीं कटवाऊँगा इस पर भी जब गढ़िया ने ज्यादा जोर दिया तो राणाने कोधित होकर कहा "जा उनके साथ तू भी चढ़ जाना मैं तुमसे डरता नहीं हूँ। यह सुन कर महीपाने रावकी छावनी में वापस आकर कहा 'राणा ने हमारी बात सुनने से इनकार कर दिया। अब उन्होंने सेना के तीन विभाग कर लिए जिनमें से दो का नेतृत्व तो दोनों गढ़ियों ने ले लिया और एक विभाग का संचालन स्वयं राव ने किया। तीनों ने तीन ओर से तरसंगमा की ओर प्रस्थान किया और पहाड़ियों पर चढ़ कर नगर में उतर गए। राणा अपने कुटुम्ब को लेकर दाँता भग गया। इस लड़ाई में जो सरदार राणा की ओर से काम आये थे उनके नाम इस प्रकार है —स्वेत मेहेवास पठाणखान प्रताप गोपालसिंह और वीरमाराए। राणा के सरदारों में से एक का नाम जगमाल था उसने ईडर के सरदार सेमखान का वध किया।

जब राणा जयमल और कुंअर जैतमाल दाँता गए तो शत्रुओं ने वहाँ भी उनका पीछा किया। तब उन्होंने माताजी के मन्दिर में आकर शरण ली और फिर राव का मुकाबला करने के लिए निकले। राव कल्याणमल जगह-जगह फौजी थाने स्थापित करके ईडर लौट गया था। तरसंगमा के थाने पर माला ड़ामी था सरा में रेहेवर थे और थाणा में मेघा जादव। धीरे-धीरे राणा जयमल के आदमी और घोड़े कम होते गए और अन्त में वह मर गया।

अपने पिता की मृत्यु के बाद कुंअर जैतमाल बहुत दिनों तक माताजी के द्वार पर बैठा रहा परन्तु उसको कोई संकेत नहीं मिला तब अन्त में वह कमलपूजन करने की तैयारी करने लगा। माताजी ने उसका हाथ पकड़ लिया और कहा 'घोड़े पर चढ़ कर रवाना हो मैं तेरी सहायता करूँगी। आज-रात में जितनी दूर होकर तेरा घोड़ा निकल जायेगा वह सब भूमि तेरी हो जावेगी परन्तु जहाँ पर तू अपने घोड़े की लगाम खींच लेगा वहीं तेरी सीमा खतम हो जावेगी। इस पर अपने कुछ बचे-खुचे सवारों को साथ लेकर रवाना हुआ। सबसे पहले वे लोग रेहेवर के थाने पर आये वहाँ पर लोगों ने देखा कि

वहुत बडी घुडसवारो की फौज आ रही है इसलिए अपने घोडे और सामान आदि छोड कर भग गए। फिर, मेघा जादव के थाने की ओर रवाना हुए, वहाँ भी माताजी की कृपा से शत्रुओ को झाडी-झाडी मे घुडसवार दिखाई देने लगे इसलिए वे भी घवरा कर भग गए। मेघा अपने घोडे को नहला रहा था उसी समय अचानक पकड कर मार डाला गया। इसके बाद ये लोग तरसगमा पहुँचे और वहाँ का थाना भी खाली करवा लिया। फिर घोराद और हराद मे से भी शत्रुओ को भगा दिया। अब, राणा जैतमल थक गया था इसलिए वह घोडे पर से उतरने के लिए तैयार हुआ, दूसरे राजपूतो ने उससे न उतरने की प्रार्थना की परन्तु राणा ने कहा, 'अब मैं ज्यादा देर घोडे पर नही बैठ सकता।" यह कह कर वह उतर पडा और माता का वरदान पूरा हुआ। इसके बाद तरसगमा उजाड हो गया और वहाँ से हटा कर दाँता मे राजधानी स्थापित की गई। इस शहर का नाम दाँता इसलिए पडा कि इसको दाँतोरिया वीर ने बसाया था। दाँता से दो मील पश्चिम की ओर नयावास को जाने वाली सडक पर दाँतोरिया का मन्दिर है जहाँ अब भी मिट्टी के घोडे बना-बना कर लोग उसको पूजते हैं। दाँता आने के थोडे ही दिन बाद जैतमाल की मृत्यु हो गई।

प्रकरण दसवाँ

ईडर के राव

ईडर के राव कल्याणमल के बाद उसका पुत्र जगन्नाथ गद्दी पर बैठा। कल्याणमल के समय में ही ईडर के कार्यकर्ताओं के दो दल हो गए थे। पहला दल वसाई मुँटेड़ी और करियाद रा के जमींदारों का था और पोसीना के बाघेला ठाकुर तथा डेरोल के सरदार उनकी सहायता करते थे। दूसरे दल में रमासण के रेहेवर ठाकुर गरीबदास ईडर के मुसलमान कस्बातियों के मुखिया और बड़ामी के शाह मोतीचन्द मजूमदार थे। इन दिनों में ईडर से कर उगाहने के लिए मुसलमानों की फौज बराबर आने लगी थी और मड़ोन्द्रा का बेताल बारहट जिसको राव की पदवी मिली हुई थी बादशाह और राठौड़ सरदारों के बीच में मध्यस्थ बना हुआ था। ईडर की जमाबन्दी दिल्ली की ओर से अहमदाबाद के सूबेदार की मारफत वसूल होती थी। उस समय तक वर्ष प्रतिवर्ष कर वसूल करने का रिवाज नहीं पड़ा था वरन् दस-पाँच वर्ष में जब कभी अहमदाबाद का सूबेदार अपना जोर देखता एक दम वसूल कर लेता। राव जगन्नाथ के गद्दी पर बैठने के बाद मुसलमानी सत्ता दिनो दिन बढ़ती गई और धीरे-धीरे ईडर से प्रतिवर्ष कर वसूल होने लगा था। बेताल बारहट अभी तक मध्यस्थ बना हुआ था और उसका कर्जा राव जगन्नाथ पर इतना चढ़ गया था कि वह (जगन्नाथ) उससे किसी तरह अपना पिण्ड छुड़ाने की सोचने

लगा। एक दिन उसने अपनी दासी को वारहट के घर भेज दी और उस पर व्यभिचार का दोष लगाकर शहर से बाहर निकाल दिया। वारहट वहाँ से सीधा वडोदरा गया और फिर दिल्ली। यह सब हाल आगे लिखा जावेगा।

इस घटना के बाद डूँगरपुर के सीसोदिया रावल पूँजा के साथ राव जगन्नाथ[1] का उच्च पद सम्बन्धी झगडा हुआ। इन दोनो राज्यो की सीमा पर शामला जी का मन्दिर है, वही पर लगभग १६५० ई० मे इन दोनो की मुलाकात हुई थी। ऐसा हुआ कि, रावल का रूमाल नीचे गिर पडा, राव उससे छोटा था इसलिए उसने रूमाल उठा कर उसको दे दिया। परन्तु, लोगो ने इस वात को इस तरह प्रचलित किया कि रावल ने वलपूर्वक राव से पैर छुवाए। उस समय मोहनपुर का ठाकुर मोहनदास रेहवर था, उसने राव की वहुत वडी-वडी सेवाए की थी। उसीने डूँगरपुर पर चढाई करके रावल को कैद कर लिया और जव उसने राव के पैर छू लिए तो शिरोपाव देकर विदा किया। जव रावल पूजा करने बैठा था उसी समय राव ने उसे पकड लिया था और जिस मूर्ति की वह पूजा करता था वह अव भी मोहनपुर मे स्थापित है। इस विषय मे भाट का लिखा हुआ कवित्त इस प्रकार है—

कुडलिया—पूँजो पाय लगाडियो, ईडर हदे राव,
जोर कियो जगनाथियै, दीनो सबळो दाव,
दीनो सबळो दाव, रावे रावल ने रेश्यो[1],
की अचरज कमधज्ज[2], खगा[3] वल पावो खेश्यो[4],
गरधरानाथ[5] ईजत गई, चास लगी जद आडियो[6],
केल परो झाले कर, पूँजो पाय लगाडियो[7]॥

---

१ ईडर की वावडी मे जगन्नाथ सम्वन्धी लेख १६४६ ई० का है।

१. कैद कर लिया। २ राठौड। ३ तलवार। ४ पावोखेशो=वढ़ी। ५ डूँगरपुर पति। ६ डर के मारे कांपने लगा। ७ हाथ पकडकर वलपूर्वक पैर छुआ लिये।

जब जगन्नाथ मोडासा में था तब एक दिन दिल्ली से एक हकीम आया। उसने राव को धातुपुष्टि की एक दवा दी और यह कहा कि, रानी से मिलने के पहले इस दवा को मत खाना। परन्तु, जब वह ईडर गया तो कुछ मील इधर ही उसने दवा खाली इससे वह इतना बीमार हुआ कि वह मरणासन्न हो गया। इस बार तो वह जैसे-तैसे बच गया परन्तु बाद में वह कभी सीधी कमर करके खड़ा न हो सका।

उधर वैताल बारेठ ने दिल्ली जाकर बादशाह को एक सोने की रकाबी भेंट की। उस रकाबी में पानी भरा हुआ था एक आम का पत्ता और ईख का टुकड़ा पड़ा हुआ था और एक खाखरा के पत्ते पर गिलहरी बनी हुई थी जिसके मुंह में शक्कर थी। जब बादशाह ने इसका अर्थ पूछा तो बारहट ने उत्तर दिया —

'एक देश ऐसा है जिसकी भूमि सोने के भाव जैसी है वहाँ पर आम और ईख बहुतायत से पैदा होते हैं परन्तु खाखर[1] के पेड़ों में एक ऐसा जानवर रहता है जो तमाम शक्कर खा जाता है। यदि आप मेरे साथ पाँच हजार[2] सवार दे दें तो मैं उस देश को आपके अधिकार में ला सकता हूँ। इस पर बादशाह ने शाहजादा मुराद को पाँच हजार सवार लेकर वैताल बारहट के साथ जाने की आज्ञा दी क्योंकि उन दिनों वही अहमदाबाद का सूबेदार था। उन दिनों राव का एक वकील भी दिल्ली रहा करता था उसने दूत भेज कर राव को खबर दी कि वैताल के साथ बादशाही फौज ईडर पर चढ़ाई करने आ रही है। राव बारहट का अपमान करने की बात भूल गया और उसको मित्रता के सम्बन्ध से लिखा कि, 'मेरा तुम पर पूर्ण भरोसा है इसलिए सच्ची सच्ची बात लिख कर भेजना कि ईडर पर फौज आ रही है या नहीं।' वैताल ने लिख भेजा 'तुम किसी तरह की चिन्ता मत करो। परन्तु

---

१ उन दिनों ईडर के पास खाखर के पेड़ों का इतना घना जंगल था कि एक किला सा बना हुआ था वहाँ उसी से तात्पर्य है।

२ अंग्रेजी में पाँच सौ लिखा है, यह भूल है।

मुराद की अध्यक्षता मे फौज आ पहुँची और एक वार भी हमला किए बिना ईडर पर कब्जा कर लिया।

छप्पय —संवत् सतर प्रमाण, वर्ष बारोत्तर विमल,
सीज तिथि रविवार, माम आसो पख निर्मल,
शाहजादो मुराद, लेण गढ ईडर आयो,
करवा रोपा काज, साथ जगनाथ सजायो,
बेताल भाट न दियो वढण, कुडकरी[1] राव काढियो,
पूँजराज अग पडया पछी, लोहा बल ईडर लियो ॥

अन्तिम पद मे जिस पूँजराज का नाम लिखा है वह राव जगन्नाथ का पुत्र था। वह मुसलमानो के विरुद्ध बाहरवाट निकल गया था। वास्तव मे जब तक वह जीवित रहा, मुसलमान कभी ईडरगढ को अपना न कह सके —

गीत—राव रेहेच्या पठाण पडे रण, ईडरिये दल आणी,
नाव ! नाव ! करती निशिवासर, पडे धाह पठाणी,
पूँजेजी खल खेत पछाडया, तणारी नही तबोबी,
कत तणे दख भागिए काकण, बूम करे मुख बीबी,
जोध जडे कमधज्ज जणारे, खाग रोहिला खाया,
मेली धाह दिए मुगलाणी, नाव किसी का ना'या।[2]

---

१ धोखा देकर।

२ पूँजा जी ने अपनी सेना ईडर ले जाकर बहुत से पठानो को मार डाला। जिन दुष्टो को पूँजाजी ने रणक्षेत्र मे मारा, उनकी पठानियाँ रात-दिन आँसू बहाती थी। निराश होकर मुगलानियाँ कहती थी कि, राव पूँजाजी का जिस पर वार हो जाता है उसको हकीम की आवश्यकता नही (अर्थात् कोई भी हकीम उसका इलाज नही कर सकता), अब हमें अपने चूडे (ककण) का कोई भरोसा नही है क्योकि वीर कमधज युद्ध कर रहा है, हाय, हाय, अब किसी का पति लौट कर नही आवेगा।

राव जगन्नाथ ईडर से भाग कर पोल चला गया और फिर थो[ड़े] ही दिन बाद मर गया।[1]

मुरादशाह ने ईडर पर अधिकार करके सय्यद हाथा नामक सरदा[र] को वहाँ का अधिकारी नियुक्त किया और अन्य कार्यकर्त्ताओं को जैसे [थे] वैसे ही रहने दिया इसके बाद वह घर लौट आया। सय्यद हाथा [ने] हुकूमत शुरू करते ही राव के दिए हुए सब शासन (पट्टे) जब्त क[र] लिए, इसलिए सब के सब भाट और चारण अपने-अपने गाँव छोड़ कर मालपुर चले गये वहाँ के ठाकुर ने उनको आश्रय दिया।[2]

जगन्नाथ के पुत्र पूजा के विषय में भाट लोगों ने इस प्रकार वर्णन किया है —

---

१ इस राव के विषय में एक पद्यबद्ध कथा है जिसका प्रारम्भ इस प्रकार होता है —

'जप बोल्यू जगनाथिए, भीम कल्याण रो सुत'

जिस भाट ने यह कविता हमारे (फार्बस) सामने पढ़ी तो उसने सम्मान के लिए अपने दोनों हाथ ऊँचे किए थे परन्तु ज्यों ही उसने उक्त पंक्ति पढ़ी उसके दोनों हाथ नीचे लटक गए, उसका सर नीचे झुक गया और उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बहने लगी। वह रुँधे हुए गले से बोला "मैं रावजी की निन्दा क्यों करूं ?" इसके बाद कई बार कथा पूरी करने के लिए कहा परन्तु वह न कर सका। कितने ही भाट उक्त पंक्ति को इस प्रकार पढ़ते हैं :—

जब बोल्यु जगनाथिया कल्याणरा कपूत
बरम्हा बाम्हण चारणाँ रसगाल्या रजपूत ॥

२ ईडर गढ़ना गोमडु, सांसण दे सुखवास
विश्रामो दे बाँकडा मालपरा पर मांय ॥

भाट ने कहा कि हम ईडरगढ़ के आश्रित हैं, इसलिए हमको सुखवासक ग्राम दीजिए हे बाँका। हमें मालपुरा की धरती में विश्राम दीजिए।

जब पूँजा छोटा था तभी पोषाक लेने के लिए दिल्ली गया। जयपुर के राजा को अपने बड़े मामा वीरमदेव का वैर याद था इसलिए वह चाहता था कि पूँजा को शिरोपाव न मिले तो अच्छा हो। उसने बादशाह को समझाया कि ईडर का राव बड़ा उद्दण्ड है, उसके बाल्य-काल ही मे उसके देश पर अधिकार कर लेना उचित होगा। बादशाह ने पूछा कि, इसका क्या सबूत है कि वह उद्दण्ड है? राजा ने कहा, उसके पास एक सुन्दर घोड़ा है, आप उससे वह घोड़ा माँग लीजिए, यदि वह सीधे-सीधे घोड़ा दे दे तो आप यह समझना कि वह राजभक्त है अन्यथा दगाबाज है।" बादशाह ने यह बात मान ली और घोड़ा लेने के लिए आदमी भेजा। उधर जयपुर के राजा ने पूँजा को यह कह रखा था कि, "बादशाह तुम्हारा अपमान करना चाहता है और तुम्हे बिलकुल बरबाद करना चाहता है इसलिए तुम यहाँ से भाग जाओ।" यह सुन कर राव वहाँ से भाग गया। बादशाह की फौज भी उसके पीछे रवाना हुई और दिल्ली से पच्चीस मील के फासले पर उसे जा घेरा। परन्तु, वह एक खाती के घर मे जा छुपा और किसी तरह एक अतीतो के सङ्घ मे मिल कर निकल भागा तथा बहुत काल तक उनके साथ-साथ इधर-उधर भटकता रहा। उधर बादशाह ने ईडर पर कब्जा कर लिया और पूँजा की माँ, अपने पुत्र को मरा समझ कर अपने पीहर, उदयपुर चली गई। कुछ समय बाद राव पूजा अतीतो की मण्डली के साथ उदयपुर आया और अपनी माता तथा राणा से मिला। राणा ने उसको वंश-परम्परागत राज्य को जीतने के लिए एक सेना दी जिसको साथ लेकर पूजा ने ईडर पर फिर कब्जा कर लिया। वह खुद तो प्राय ईडर मे रहता था परन्तु अपना खजाना और रानियो को सरवान मे रखता था। राव पूजा ने सम्वत् १७१४ (१६५८ ई०) मे ईडर लिया था परन्तु केवल छ महीने राज्य करने के बाद विष देकर मार डाला गया।

उस समय राव पूजा का भाई अर्जुनदास धामोदकी नाल मे रहता था। उसने धीरे-धीरे एक हजार आदमी इकट्ठे कर लिए और समय-

समय पर अहमदाबाद के परगनों पर धावे करने लगा। एक बार, देवलिया बांसवाड़ा और डूंगरपुर के राजकुमार अहमदाबाद से अपने अपने घर लौट रहे थे। मार्ग मे वे रणासमा मे ठहरे, जहां उनकी अच्छी खातिरदारी हुई। जब वे वहां से रवाना हुए तो राव अर्जुनदास को उनकी खबर मिली और उसने आदमी भेज कर कहलाया कि आप लोग मुझसे मिलते जावें। इस पर वे सब राजकुमार मामोद गए। वहां पर उन सब मे सलाह हुई कि रणासना का स्थान बहुत निकट है इसलिए यदि राव यहां पर रहे तो वह ईडर और अहमदाबाद तक दौड़ कर सकता है। यह विचार करके राव से मिल गए और सब मे मिलाकर लगभग पांच हजार आदमी इकट्ठे किए। उधर जब से ये लोग रणासमा गये थे तब से रेहेवर ठाकुरो को सन्देह हो गया था कि कहीं ये लोग अर्जुनदास से मिल कर रणासमा पर वार न करें इसीलिए जब इन्होंने राव के साथ मिल कर अचानक हमला किया उससे पहले ही वे लोग (रेहेवर) तैयार हो गये थे और जब वे रणासनामें घुसने लगे तो उन पर आग बरसा दी गई। इससे अर्जुनदास डूंगरपुर, लूणावाड़ा और देवलिया के कुंअर तुरन्त मारे गए परन्तु बांसवाड़ा का कुंअर जीवित रहा। वह उन चारों लाशों को मामोद ले गया और वहीं पर उनका अग्नि संस्कार किया। अर्जुनदास के एक कुंअर था जिसकी अवस्था उस समय पांच वर्ष की थी। उसको वह अपने साथ बांसवाड़ा ले गया और उसी समय उसके गुजारे के लिए बागड़ मे टूटियाबस नामक गांव का पट्टा कर दिया। अब भी उसके वंशज इस पट्टे का उपभोग करते है।

राव अर्जुनदास की मृत्यु के बाद जगन्नाथ का भाई गोपीनाथ बाहरवाट रहा वह अहमदाबाद तक हल्ले किया करता था। उस समय बादशाह की शक्ति कुछ क्षीण होने लग गई थी इसलिए सय्यद हाकों ने सोच विचार कर देसाइयों और मजूमदारों को गोपीनाथ के पास भेज कर कहलाना चाहा कि तुमको कुछ रुपया वार्षिक मिल जाया करेगा और तुम देश को तंग करना छोड़ दो। परन्तु, मन्त्रियों

ने कहा कि, यह काम भाटो और चारणो की सहायता के बिना ठीक-ठीक नही हो सकता। तब सय्यद हाथो ने भाटो और चारणो को वापस बुला कर रावो की दी हुई जमीने और गांव (जिनको उसने जब्त कर लिया था) लौटा दिए। उसके बाद कूवाया के जोगीदाम चारण को राव के पास भेजा गया और उसकी बात-चीत के अनुसार राव को 'वोल' गांव दे दिया गया, जिस पर अब तक ईडर के रावो का अधिकार चला आता है। इसके कुछ ही दिनो वाद सय्यद हाथो के स्थान पर कमाल खां सूबेदार हो गया, वह बिल्कुल आलसी और निकम्मा आदमी था, राजकाज की ओर कुछ भी ध्यान नही देता था इसलिए राव गोपीनाथ ने अवसर पाकर उसे निकाल कर ईडर पर अधिकार कर लिया और पांच वर्ष तक राज्य किया। रणासन के ठाकुर गरीबदास रेहवर को भय था कि, यदि गोपीनाथ का अधिकार ईडर पर रहा तो वह आगे पीछे राव अर्जुनदास का वैर लिए बिना नही मानेगा। पहले लिखा जा चुका है कि, गरीबदास का दल, जिसमें कस्बाती भी शामिल थे, जोरदार था, उन्ही की सहायता से वह अहमदाबाद जाकर, राव को निकालने के लिए एक सेना ले आया। राव गोपीनाथ के दो रानियाँ थी जिनमे से एक तो उदयपुर की लडकी थी और दूसरी पीथापुर के बाघेलो की, इनके अतिरिक्त उसके दो पासवाने (रखेलियां) भी थी। इन सब स्त्रियो को लेकर वह ईडरगढ मे घुस कर बैठ गया परन्तु उसका पीछा करते हुए कस्वाती भी अन्दर घुस गये इसलिए उसको पहाडी से उतर कर कुलनाथ महादेव की ओर भागना पडा। रानियाँ गोजारिया मगरा की ओर भागी और यह समझ कर कि, सव कुछ नष्ट हो गया, टूटे तालाब मे गिर कर मर गई। उधर राव गोपीनाथ ने कुलनाथ महादेव के मन्दिर मे जाकर शरण ली। वह नित्य सवा सेर अफीम खाने का आदी था इसलिए उसके विना आतुर हो रहा था। इतने ही मे वराली का एक ब्राह्मण वहां पर महादेव का पूजन करने आया, उसको अपने हाथो के दोनो सोने के कडे देकर राव ने कहा, "इनमें से एक तो तुझे इनाम मे दिया

है और दूसरे को वेच कर मुझे अफीम ला दे जिससे मैं सरवाण तक जा पहुँचूं। उसने ब्राह्मण को यह भी वचन दिया कि 'जब मुझे ईडर वापस मिल जावेगा तो मैं तुझे एक गांव दूंगा। अस्तु कड़े लेकर ब्राह्मण घर गया और अपनी स्त्री को सब हाल कह सुनाया। उसने सलाह दी 'तुम तो वापस मत जाओ यदि राव जीवित रह जावेगा तो कभी न कभी कड़े वापस मांग लेगा। अफीम न मिलने के कारण गोपीनाथ मर गया और उसके बाद ईडर पर रावों का अधिकार कभी न हुआ।

अब ईडर का प्रबन्ध बरालो के मजूमदार मोतीचन्द और वासाई के देसाइयों के हाथ में आ गया और गरीबदास रेहेवर प्रधान पद पर काम करने लगा। गोपीनाथ का पुत्र राव कर्णसिंह मृत्यु पर्यन्त सरवाण में ही रहा। उसके दो पुत्र थे एक चांदा अथवा चन्द्रसिंह और दूसरा माधवसिंह। चन्द्रसिंह की माँ हूमवद के झालों की लड़की थी और माधोसिंह की माता दांता वालों की। चांदा का पालन-पोषण सरवाण मे हुआ था और माधवसिंह का उसकी माता के गुजारे में मिले हुए गांव मडेरगा म। आगे जाकर माधवसिंह बाहरवाट हो गया और पोसीना म चाँदपुर नामक स्थान पर बादशाह की फौजों से उसकी मुठभेड़ हो गई वहाँ से बेराबर जाकर अपना अधिकार जमा लिया। यह गांव अब भी उसी के वंशजो के अधिकार में है।

संवत् १७५ (१६६६ ई) मे राव मान और गोविन्द राठौड जो चांदा के सम्बन्धी थे उससे आ मिले और वे सब मिल कर ईडर पर हमले करने लगे। अन्त मे सम्वत् १७७४ (१७१८ ई) मे मुसलमान किलेदारों को बाहर निकाल कर देसाई लोग चांदा को ईडर ले आये। परन्तु राव चांदा ठीक-ठीक राज काज नहीं जमा सका इसलिए वाघेलो और रेहवरो ने ईडर के मुख्य मुख्य गांवों पर कब्जा कर लिया। वाघेलों ने बरासी तक का देश अपने अधिकार मे ले लिया और रेहवरो ने मावली तक कब्जा कर लिया। उन्हीं दिनों पालिया का ठाकुर मर गया इसलिए उसके उत्तराधिकारी को तलवार व सिरोपाव देने का

प्रसग आया। राव, ईडर से वाहर निकलने के लिए अच्छा अवसर देख कर, पालिया जाने के लिए रवाना हुआ परन्तु उसके वेतनभोगी सिपाहियो ने उसका मार्ग रोक लिया और अपनी चढी हुई तनख्वाह मांगी। राव ने उनको वलासना के ठाकुर, सरदारसिंह की, जो उस समय ईडर ही मे था, जमानत दिला दी और अपने प्रतिनिधि के रूप मे ईडर का राज-काज उसी को सौंप कर कभी न लौटने के लिए रवाना हो गया। सरदार सिंह कुछ दिन तो राव के नाम पर काम चलाता रहा, फिर देसाइयो और मजूमदारो ने उसे गद्दी पर विठा दिया। लीही का ठाकुर शामला जी, जो वलासरणा की भायात मे था, उसका प्रधान मन्त्री हुआ। शामला जी वहुत ही योग्य और साहसी पुरुप था, उसने वे सव गांव, जो वाघेलो और रेहवरो ने दवा लिए थे वापस ले लिए। उसकी इस सफलता के कारण बहुत से शत्रु खडे हो गए और अन्त मे कस्वातियो ने जाकर राव से कह ही डाला कि, 'शामला जी आपका और हमारा नाश करने पर तुला बैठा है।' राव ने उनकी बात पर विश्वास करके शामला जी को निकाल दिया और उसकी जगह बडोदरा से बच्चा पण्टित को बुलाकर नियुक्त किया। कुछ दिनो बाद सरदारसिंह और कस्बातियो मे झगडा हो गया, राव ने उन पर आक्रमण करने का मनसूबा बाधा और खुल्लमखुल्ला यह प्रतिज्ञा की कि मैं जब तक सब कस्बातियो को मार न दू गा, ईडर मे नही रहूँगा। परन्तु, उसमे इतनी शक्ति नही थी इसलिए वह निराश होकर वलासरणा लौट गया। अब, बच्चा पण्डित ईडर पर राज्य करने लगा, कस्वाती, मोतीचन्द मजूमदार और रणासना का ठाकुर उदयसिंह रेहवर उसके सलाहकार हुए और देसाइयो का सितारा मन्द हो गया था। बच्चा पण्डित अहमदाबाद के सूबेदार को कर देता रहा और ईडर पर राज्य करता रहा, परन्तु देसाई लोग उससे असन्तुष्ट ही रहे। जब लालसिंह ऊदावत सोरठ से मेवाड जा रहा था तब वसाई के स्थान पर देसाई लोग उससे आकर मिले और सब बात कह सुनाई। लालसिंह ने उनसे कहा, 'यदि तुम स्वीकार करो तो मैं तुम्हारे लिए एक बहुत अच्छा

राजा मा सकता है। उन्होंने मंजूर कर लिया और मानसिंह पोसीना आकर महाराजा मानन्दसिंह और उनके भाई को ईडर से लाया। संवत् १८८७ (१७३१ ई) में आनन्दसिंह ने यथा पश्चित से ईडर लिया था।

उधर राव चांदा मदनी मुसराल पाल में परिहार राजपूतों के यहाँ चला गया और वहाँ आकर यह कहा 'मैंने मृत्यु पर्यन्त काशीवास करने का निश्चय किया है इसलिए आप लोगों स अन्तिम 'राम राम' करने आया हूँ। दो महीने बाद वह वहाँ स काशी जाने के लिए रवाना हुआ और लगभग दस मील की दूरी पर सरसाऊ नामक गाँव में आकर ठहरा। वहाँ स उसने अपने पोल वाले सम्बन्धियों को अपने साथ भोजन करने के लिए बुलाया। तदनुसार वे लोग सरसाऊ आये और राव चांदा के साथ खूब खान पान किया। जब पोल के राजपूत खूब शराब में मस्त हो गए तब राव ने उन सब को मरवा डाला और खुद पोल आकर गद्दी पर बैठ गया जहाँ पर अब तक उसके वंशज राज्य करते हैं।

ग्यारहवाँ प्रकरण

गोहिल[1]

इस प्रकार उतरी गुजरात की स्थिति मे जो फेर-फार हुए उनका वर्णन करते करते हम उस काल तक आ पहुँचे है जब कि मुसलमानो का अस्थायी साम्राज्य लुप्त हो गया और प्रत्येक हिन्दू देवालय के

---

१ यह गोहिल वश चन्द्र-वशी है और मेवाड के सीसोदिया गोहिल सूर्यवशी हैं

मोहोदास (मारवाड के पुराने खेरगढ में)
|
जाँजरजी
|
१ सेजक जी* (१२६० ई० में सुराष्ट्र में आए और सेजकपुर की गद्दी स्थापित की। १२६० ई० तक राज्य किया।)
|

---

* ठाकुर सेजकजी खेरगढ से सुराष्ट्र में कब आए, इस विषय में भिन्न-भिन्न ग्रन्थकारों का भिन्न भिन्न मत है —

देखिए—काठियावाड सर्वसग्रह पृ० ६२ में १२९० ई० लिखा है, इसी पुस्तक के पृष्ठ २१२ में १२६० ई०, सौराष्ट्र का इतिहास पृ० १३४ में शाके ११०२—ई० स० ११८०, कवि दलपतराम कृत विजयविनोद में विक्रम सवत् ११३२ (१०७६ ई०), दीवान विजयशकर गौरीशकर ओझा कृत एक हस्तलिखित इतिहास में सवत् ११३२ (१०७६ ई०)। पुरातत्वान्वेषक गौरीशकर हीराचन्द ओझा ने लिखा है कि वे विक्रम स० ११५० (१०९४ ई०) में आए थे। उक्त मतों से पता चलता है कि सिहोर में गद्दी स्थापित करने वाले

पुन उन्मुक्त हुए मस्टों के मन रव में मुअज्जिन की बाँग हुबने लगी तथा शिवजी की ध्वजा यवनों द्वारा अनेक बार सन्तापित (उनके) प्रभास

२ राणोजी — साहजी — सारंगजी

(राणपुर की गद्दी) (पालीताणा) (लाठी)

१२९ –१३ ई)

३ मोखड़ा जी (पीरम मे १३ ई से १३४७ ई तक)

४ डूंगरसिंह जी (घोघा मे १३४७ ई से १३७ तक) — समरसिंहजी

५ विजैजी (१३७ ई से १३९५ ई०) राजपीपला

६ कान्हो जी (१३९५–१४२ ई०)

७ सारंगजी (१४२ –१४४५ ई) (उमराला)

८ शिवदास जी (१४४५–१४७ ई)

९ जैठोजी (१४७०–१५ ई)

१ रामदासजी (१५ ०–१५३५ ई)

११ सुरतानजी (१५३५–१५७ ई०)

१२ वीसोजी-सिहोर में (१५७०–१६ ई)

१३ धुनाजी (१६ ०–१६१९ ई०)

१४ रतनजी (१६१९–१६२ ई)

१५ हरभमजी (१६२०–१६२२ ई०) — १६ गोविन्दजी (१६२२–१६३६ ई०)

मोखड़ाजी से पहले की तिथियां अनिश्चित हैं और इसीलिए मोखड़ाजी के पीरम में आने की तिथि भी अभी तक निश्चित नहीं हो सकी है।

रासमाला भाग १ की पहली आवृत्ति में (गुजराती अनुवादकर्ता ने) मोखड़ाजी का संवत् १२ ६ लिखा है, परन्तु इसमें सन्देह ही है।

भेद से उनकी मर्यादिनी पकरा जाती थे, यद्यापि पर्दे और कुरम.
चरित्र ता गनठों के अधिकार से जगत्-जगत राष्ट्रीय भाग्दे के रूप से

१७ अखेराज जी (१६३६–१६६०) मकगानजी (१६२६–१६३६)

१८ रतनजी (दूसरा) (१६६०–१७०३)

१९ भावसिंहजी भावनगर १७०३–१७६४

- २० अखेराज (दूसरा) १७६४–१७७२
    - २१ वखतसिंहजी (१७७२–१८१५)
        - २२ विजेसिंहजी (१८१५–१८५२)
            - भावसिंहजी (दूसरा) कुँवर पदवी मे ही देवलोक हुए।
                - २३ अखेराजजी तीसरे (१८५२–१८५४)
                - २४ जसवन्तसिंहजी (१८५४–१८७०)
                    - २५ तख्तसिंहजी (१८७०–१८९६) (इनको महाराज की पदवी मिली थी)
                        - २६ भावसिंहजी (१८९६–१९१९)
                            - २७ कृष्णकुमारसिंह जी (१९१९।–)
- भीमाजी (रत्ना)

भावनगर के ताबे मे २,८६० वर्गमील भूमि, ६४५ गाव और लगभग चार लाख मनुष्यो की वस्ती है, यहा की आमदनी लगभग २५ लाख रुपये वार्षिक है जिसमे से अंग्रेज सरकार और गायकवाड सरकार को जमा-वधी के तथा जूनागढ़ के नवाब को जोर तलवी के मिलाकर १,५४,४९९ रुपए देने पड़ते हैं।

फहराने लगी थी। हम देखते कि दक्षिण के राजे कल्याण के सोलंकियों के समान पुनः सोरठ और गुजरात में राज्य-विस्तार करने लग गए थे परन्तु इसके पहले हम एक बार फिर उसी विस्मृत वल्लभीपुर, सोलियामा के धूमि-धूसरित मीनारों और आसपास के उस प्रदेश के दृश्य का वर्णन करेंगे जहाँ पर अब यह शिलामय का शिखर खड़ा है जिसपर आतङ्कमय दामाजी गायकवाड़ का नाम अङ्कित है—इन्हीं स्थानों के दृश्य से तो हमने अपने नाटक का आरम्भ किया था।

सारंगजी गोहिल के बाद क्रमशः उसका पुत्र शिवदास और पौत्र जैताजी गद्दी पर बैठे। जैताजी के दो पुत्र रामदास और गयादास थे इनमें से गयादास के भाग में 'उमारली'[1] गाँव आया था।

भाट लोग कहते हैं कि गोहिल रामदासजी काशी यात्रा गए तब वहाँ पर १४ हजार ब्राह्मणों को भोजन कराकर उन्हें एक-एक मोहर दक्षिणा में दी फिर पूरे लश्कर (सघ) को घर भेजकर वह अकेले उदयपुर गये। वहाँ पर राणा कुम्भ[2] ने उनसे पूछा 'तुम कौन से राजपूत हो और तुम्हारे पास मे कौन सा ग्राम है? रामदास ने उत्तर दिया "मैं गोहिल राजपूत हूँ और घोघा बन्दर व गोहिलवाड़ा का स्वामी हूँ। तब राणा ने अपनी सुकोमल बाँ नाम की पुत्री का विवाह रामदास से कर दिया। उसी समय मुहम्मदशाह की फौज ने उदयपुर पर चढ़ाई कर दी और लड़ाई मे रामदास के बहुत से मनुष्य हाथी और घोड़े मारे गए। इसी युद्ध में उसके सिर पर जो शालग्राम की मूर्ति विराजमान थी वह दो टुकड़े होकर गिर गई और फिर हाथी का घण्टा टूटकर उसपर गिर पड़ा इससे वह ढँक गई। इसके बाद एक साँप ने आकर उस पर कुण्डली बनाली। गोघा में कुँवर सुर्तोजी ने लड़ाई का समाचार सुनकर अपने पिता का क्रियाकर्म आदि किया

[1] इसी से इनके वंशज उमारलिया गोहिल कहलाते हैं। ये लोग भावनगर प्रान्त में हैं।

[2] इसका विवाह राणा लख की पुत्री के साथ हुआ था। यह राणा १४ ई० में गद्दी पर बैठा था और १४६ में विष दे कर मार डाला गया था।

तब शालग्राम ने उसको स्वप्न मे दर्शन देकर कहा, "मै, तुम्हारा इष्टदेव, उदयपुर की भूमि में गडा पडा हूँ, मुझे वहाँ से निकालकर ले आओ।" इस पर सूतोजी ने रघुनाथ दुबे व उसके साथ दूसरे लोगो को भेजकर शालग्राम की मूर्ति वहाँ से मगवा ली। मूर्ति के दोनो भाग अब भी रघुनाथ दुबे के वशजो[1] के पास सिहोर मे मौजूद हैं और उसको पूजन के उपलक्ष मे वार्षिक वृत्ति भी मिली हुई है।

रामदासजी के शार्दूलजी और भीमजी नाम के और भी दो छोटे लडके थे, जिनमे से शार्दूलजी को अघेवाडा और भीमजी को थाणा गाँव खानगी मे मिला हुआ था इसीलिए भीमजी के वशज अब भी थाणिया राजपूत कहलाते है।

मेवाड के इतिहास मे लिखा है कि जब १३०३ ई०[2] मे अलाउद्दीन ने चित्तौड पर कब्जा किया था तब पीरम का एक गोहिल भी उसके विरुद्ध लडा था। राजपूताने के इतिहास लेखको का कहना है कि यह गोहिल रामदास गोहिल ही था। जैसा कि हम ऊपर लिख चुके हैं भावनगर के भाटो ने रामदास का सम्बन्ध राणा कुम्भा से बतलाया है। फरिश्ता के मत से राणा कुम्भा ने मालवा के शाह महमूद को १४५४ ई० मे हराया था। यह अन्तिम सन् भी शायद ही रामदासजी के समय से मिलता हो क्योकि उनके प्रपौत्र घुनोजी की मृत्यु १६१९ ई० में हुई थी। यह अधिक सम्भव प्रतीत होता है कि यह गोहिल (सरदार) अन्य समस्त रजवाडो के उन सरदारो मे से एक होगा जो १५३२-३३ई०[3] मे चित्तौड का रक्षण करने के लिए एकत्रित हुए थे जब कि गुजरात के बहादुरशाह ने उस पर चढाई करके अधिकार कर लिया था।

---

(१) इसका नाम हरजीवन है।

(२) देखो Tod's Rajasthan, ed 1920 Vol 1, p 291 Tod's Western India, pp 258-9, 266

(३) देखो Tod's Rajasthan, ed 1920 Vol I, pp 361 & 629.

रामदास के पुत्र सूतोजी के चार लड़के थे जिनके नाम वीसोजी देवोजी वीरोजी और मांडोजी थे। वीसोजी सूतोजी के बाद गद्दी पर बैठा तीनों छोटे भाइयों को क्रमशः पचे ग्राम अवानिया मवानिया और दो-दो गांव और मिले। देवाजी के वंशज उन्हीं के नाम पर देवाणी गोहिल कहलाते हैं वीरोजी के वंशज उनके पुत्र बाछाजी के नाम पर बाछाणिया कहलाते हैं। लोसरा मोधी और कनाड़ अब भी इन्हीं के अधिकार में हैं।

हम पहले लिख चुके हैं कि अणहिलवाड़ा के शासकों ने सिंहपुर अथवा सिहोर ग्राम ब्राह्मणों को दान में दे दिया था। ये लोग किसी बाहरी सत्ता का अधिकार माने बिना अब तक इस गांव पर अपना कब्जा जमाये हुए थे परन्तु अब इनके गृह-कलह के कारण वीसोजी गोहिल यहाँ का सरदार बन बैठा था।

सिहोर का स्थान बहुत कुछ किसी ज्वालामुखी के मुख से मिलता हुआ सा है यह एक सपाट मैदान है जिसको चारों ओर से ऊबड़-खाबड़ पहाड़ियों ने घेर रखा है। प्राचीन नगर की इमारतों में से अब एक भी घर नहीं बचा है। इसके बीचों-बीच एक छोटी सी शिलाकृति पहाड़ी खड़ी है जो साम बाजारो की पहाड़ी' कहलाती है। इसके शिखर पर एक चबूतरा बना हुआ है। कहते हैं कि प्राचीन काल में सिहोर के ब्राह्मण यहीं बैठकर सभा करते थे और न्याय चुकाते थे। पहाड़ी की तलहटी के पास ही एक सुन्दर और विशाल तालाब बना हुआ है जो 'ब्रह्म कुण्ड' कहलाता है। इसकी आकृति चौकोर है और इसके चारों ओर पत्थर में हिन्दू देवताओं की मूर्तियां खुदी हुई हैं। इस कुण्ड में चारों ओर से पैड़ियाँ उतरती हैं और बीच-बीच में प्रस्तार बने हुए हैं। किनारे पर चारों ओर ही बहुत से देवालय स्थित हैं जिससे यह एक प्रकार की देवशाला ही बना हुआ है। इन मन्दिरों के बाहर की ओर एक कोट भी खिंचा हुआ है। इस तालाब के दक्षिण में एक विचित्र पहाड़ी है जिसके तीन शिखर हैं इसीलिए यह तरसिंगडा डूंगर कहलाता है।

प्राचीन सिहोर के कोट के खण्डहर अब भी कहीं-कहीं पर खड़े

मिलते हैं, इनको देखकर नगर की पूर्वस्थिति का अनुमान लगाया जा सकता है। इसके उत्तर मे आसपास की पहाडियो की तलहटी मे ही अर्वाचीन नगर स्थित है। आधुनिक सिहोर के पश्चिम की ओर गोमती नदी बहती है जिसके किनारे पर बहुत से मृतको की दाह-भूमि पर स्मारक खडे हुए हैं। शहर से थोडो ही दूर नदी के किनारे पर एक दूसरा कुण्ड बना हुआ है जो गोमतीश्वर कुण्ड कहलाता है।

कहते हैं कि प्राचीन सिहोर दो भागो मे बटा हुआ था, दक्षिणी भाग में रणा ब्राह्मण रहते थे और उत्तरी भाग में जानी ब्राह्मण। एक जानी ब्राह्मण की रूपवती कन्या रणा ब्राह्मणो के कुल में व्याही थी। एक दिन वह अपने घर के आगन मे दही मथ रही थी, उसका सिर खुला हुआ था और बाल कन्धो पर फैल रहे थे। उस समय उसका पति सात बाजार वाली पहाडी के चबूतरे पर दूसरे लोगो के साथ बैठा हुआ था। वहाँ से सारा गाँव सामने ही दिखाई देता था। वही पर बैठे हुए ब्राह्मणो में से एक ने, यह ध्यान दिये बिना ही कि उस स्त्री का पति भी यही बैठा है, कहा, "इस स्त्री का पति कोई हीजडा है-इसीलिए यह ऐसी निर्लज्ज है।" यह सुनकर वह ब्राह्मण बहुत लज्जित हुआ और घर आते ही क्रोध में भर कर अपनी स्त्री के बाल व नाक काट डाले। वह स्त्री रोती पीटती अपने पिता के घर गई और इस दुर्व्यवहार की शिकायत की। इस पर उसके पीहर के मनुष्य बदला लेने के लिये तैयार होकर दौड पडे। आपस मे खूब लडाई हुई और बहुत से ब्राह्मण मारे गये। ब्राह्मणो के पवित्र रक्त से रजित होकर वह भूमि तभी से शापित व ऊजड हो गई और अब तक 'हत्या क्षेत्र'[1] के नाम से प्रसिद्ध है।

अब जानी और रणा दोनो ही कही बाहर से सहायता प्राप्ति का उद्योग करने लगे। जानी ब्राह्मण रणाजी गोहिल के भाई शाहाजी के वशजो के पास गारियाधार गये और उसे सिहोर तथा उसके ताबे के बारह गाँवो का सरदार बनाने का वचन दिया। इस पर उसने सेना इकट्ठी करके

१ गुजराती–'धोजारी भोय'

सिहोर पर कब्जा करने के लिये प्रस्थान कर दिया परन्तु रास्ते में अपशकुन होने के कारण वह ठहर गया और अवसर हाथ से खो दिया इतने ही में राणा[1] ब्राह्मणों के साथ रावल बीसोजी उमराले से आ पहुँचे। उन्होंने अपने सम्बन्धियों को भगाकर सिहोर में प्रवेश किया और सब राजकाज अपने हाथ में ले लिया। ब्राह्मणों के पास वे ही कुछ जमीनें रह गई जो उसने उनके पास छोड़ दीं थी। तभी से सिहोर गोहिलों की राजधानी बन गया और जब तक भावसिंह ने बड़वा के खण्डहरों में अपने नाम पर नया नगर न बसा लिया तब तक बना रहा।

भाट कहता है कि 'उमरकोट (उमराला) के बल को कोई भी शत्रु नहीं दबा सका। सरतानजी का पुत्र हाथ में तलवार लेकर सोरठ में घूमता रहा परन्तु उसका किसी ने मुकाबला नहीं किया वीसल बाघ के समान था उसकी भूमि का एक-एक बीघा उसकी एक-एक आँख के समान था अथक प्रयत्न करने पर भी कोई शत्रु उसे सरतानजी के पुत्र से न ले सका।[2]

बीसाजी के बाद रावल धुनाजी[3] गद्दी पर बैठा और उसने दो छोटे भाई भीमाजी और कानियाजी को क्रमशः हलियाद और भड़ली नामक ग्राम मिले।

---

१ भावनगर स्टाटिस्टिकल एकाउन्ट में लिखा है कि बीसाजी ने भाली ब्राह्मणों की सहायता की थी। रक्षा की मदद पर भारिमावार के कोलोवी आये थे उनको बीसाजी ने हराया था, यह बात सच है। (देखो – काठियावाड़ सर्वसंग्रह पृ ५२४)

२ सोरठा —कल्हे उमरकोट केहि कलाणो नहि
	वे भागा मन मोट मरठे सरतान राउत।
	विसल बाघ तणा कामुतनी भीपी कीपी
	मुवे सावना सारर समसम राउत।

३ धुनाजी का समय १५० ई से १५१६ तक का था। इनके पिता के समय में ही अरबर बादशाह ने गुजरात ले लिया था। १४८३ ई। स्टे ग्रा बा

जब घुनाजी सिहोर मे राज्य करता था उसी समय उसके सम्बन्धी नौघणजी पर, जो गारियाधार का शासक था, खेरडी के काठी सरदार लूमा खुमाण ने आक्रमण कर दिया और उसका ग्राम छीन लिया। नौघणजी आश्रय प्राप्त करने के लिए सिहोर भाग कर आया तब धुनाजी उसे यथाशक्ति सहायता देने को तैयार हुआ, यद्यपि पाटवी ठाकुर अपने भागीदारो के ग्रास पर स्वय अधिकार करने के लिये तैयार रहते हैं, परन्तु जब कोई बाहरी शत्रु उस पर आक्रमण करता है तो उनके लिए सहायता करना आवश्यक हो जाता है क्योकि यदि वह बाहरी शत्रु सफल हो जावे तो आगे चल कर उससे उन्ही का नुकसान होता है। इसका कारण यह है कि फटाया (छुटभइया) के ग्रास का वारिस अन्त में जाकर टीलायत ही हो जाता है। अस्तु, घुनाजी ने वला मे जाकर सेना का पडाव डाला परन्तु लूमा खुमाण ने अपने घुडसवारो सहित रात को हमला कर दिया। इस लडाई मे रावल घुनाजी मारा गया (१६१९ ई०)।

इसके बाद नौघणजी गोहिल बारिया के जवास गाँव मे भग गया और वहा के कोली राजा की लडकी से विवाह करके बारिया से फौज लेकर सिहोर आया तथा वहा से और भी मदद लेकर गारियाधार की ओर रवाना हुआ। गारियाधार के पटेल ने उसकी छावनी मे आकर सूचना दी कि, 'लूमा के पास बहुत फौज है और आप इस बल से उसे जीत न सकोगे।' इस पर एक चाल खेली गई कि पटेल ने गाव मे आकर यह हल्ला मचाया कि मेरे ढोरो को घुडसवारो की एक टुकडी पश्चिम की ओर हांक ले गई। यह सुनकर काठी लोग तुरन्त ही उधर दौड पडे और अवसर देख कर नौघणजी अपने परिवार व दलबल सहित नगर मे घुस आए। गारियाधार के निवासी गोहिलो के पक्ष में थे इसलिए उनकी विजय हुई, परन्तु नवघणजी की स्त्री ने डरकर यह सलाह दी कि लूमा फिर उनके नगर को ले लेगा इसलिए उन्होने जाकर लूमा के चरणो मे तलवार रखदी। नवघणजी की स्त्री लूमा की धर्म-बहिन बन गयी और इन दोनो स्त्री पुरुषो ने ही बदला लेने का अवसर मिलने तक यह स्वाग बनाये रखा। कुछ दिन बाद नगर के जाम ने, जो नौघणजी का जमाई था,

एक शादी के अवसर पर दोनों ठाकुर ठकुरानी को निमन्त्रण भेजा परन्तु मवपणजी की स्त्री ने आग्रह किया कि जब तक मेरे भाई मूमा सुमाण को निमन्त्रित न किया जावेगा मैं वहां न जाऊंगी। पहले एक बार जाम और मुसलमानों में लड़ाई हुई थी उस समय मूमा ने जाम को धोखा दिया था इसलिए उन दोनों में तभी से शत्रुता चली आती थी परन्तु उक्त कारण से जाम को मूमा के नाम भी कु कुमपत्री भेजनी पड़ी। मूमा जाम नगर गया और विवाह में सम्मिलित हुआ। वहां पर जब वह अपने साथियों सहित हथियार लेकर दरबार में जाने लगा तो ड्योढी पर उसे कहा गया कि हमारे दरबार में हथियार लेकर जाने का कायदा नहीं है। निदान वह ड्योढी पर हथियार रखकर अन्दर गया वहां पर जाम व नौकरण ने मिलकर उसको मार डाला उसके कुछ साथियों की भी यही दशा हुई।

॥

जब मूमा घवा हुआ था और घावों से अशक्त हो रहा था तब जाम ने हंसी में कहा "अब यदि मैं तुझे छोड़ दूं तो तू क्या करे? मूमा ने उत्तर दिया "जिस प्रकार स्त्री तवे पर रोटी को उलट देती है उसी तरह नगर को उलटा कर दूं।

भाट लोगों ने धुनाजी रावल की कथा इस प्रकार लिखी है —
'समा काठी और भीषण रणमत्त होकर युद्ध में उतर पड़े बला की सीमा पर नौबत बजने लगी गोहिल भी संग्राम में आकर मिल गये। दोनों ओर से बाणों और गोलियों की वर्षा होने लगी तलवार भौंकने लगी। ईश अपनी मु डमाला में मु ड पिरोने के लिए आ पहुँचे मांस भक्षण करने वाले पक्षियों और हिंस्र पशु इकट्ठे हो गये अप्सराएं और तेतीस करोड़ देवता उपस्थित हुए। भगवान् सूर्य अपने सारथि अरुण से कहने लगे 'अरुण रथ रोक लो और धनोजी का युद्ध देखो वे युद्ध में प्राण त्याग रहे हैं। एक हजार घोड़े हिनहिना रहे थे और ध्वजाएं फहरा रही थीं। धुनोजी ने शत्रु को पीठ नहीं दिखाई। मद राजा ने कोप करके युद्ध किया और काठी की सेना को छिन्न-भिन्न कर

दिया। वीर के बिना रण मे कौन शिर कटावे ? नवघण बच गया और घुनाजी युद्ध मे खेत रहे। राजा ने राम के समान क्षत्रिय कुल की कीर्ति बढाई, अपने विरुद की रक्षा की। वीसल के पुत्र ने तलवार से खेलते हुए अप्सरा को वर लिया और स्वर्ग को चला गया।"

सिहोर मे नदी-किनारे पर घुनाजी का पालिया बना हुआ है जिसमे घोडे पर चढे हुए और हाथ में भाला लिए हुए उनकी मूर्ति स्थापित है। इनकी छतरी के पास ही इनकी दो रानियो के स्मारक बने हुए हैं, ये रानियां इनके साथ ही सती हो गई थी। इनमें से केवल एक सती का ही नाम 'बाई श्री कर्मादेवी' पढा जा सकता है। इन पालियो के अनुसार घुनोजी की मृत्यु कार्तिक कृष्णा[1] छठ सवत् १६७५ वि० (१६१६ ई०) मे हुई थी। पास ही मे रावल श्री घुनाजी के पुत्र रतनजी का पालिया है। यह केवल एक ही वर्ष पीछे सवत् १६७६ वि० (१६२० ई०) का बना हुआ है। रावल रतनजी की छतरी के पास ही दो और सतियो के पालिए बने हुए हैं जिनमें से एक पर 'माताश्री जी इ सहगमन कृत' लिखा हुआ है। रतनजी के विषय मे इससे अधिक कुछ नही लिखा है कि उन्होने एक शूरवीर की भाति वीर गति प्राप्त की।

भाटो ने इस विषय में यो लिखा है —'जब वीर रतन ने रण मे पैर रोपा तो अप्सराओ के झुड के झुड घुना के कुंअर का पाणिग्रहण करने के लिए स्वर्ग से चले आए। उसके कुटुम्बरूपी देवालय पर ला[2]

१ अ ग्रे जी मूल में शुक्ल लिखा है।

२ ला गोहिल इनका एक कल्पित पूर्व पुरुष था, भाटो का कहना है कि वह मृत्यु के बाद भी अपनी छतरी से उतर कर दान दिया करता था। कनाद पर खुमाणो, खाशियो और सखाइयो—इन तीनो में लडाई हुई थी—रतन जी ने सबको हरा दिया था परन्तु वह उनका पीछा करते हुए मारा गया।

रतनजी	१६१६ ई० — १६२० ई०	स्टे० अ० भा०
हरभमजी	१६२० ई० — १६२२ ई०	
गोविन्दजी	१६२२ ई० — १६३६ ई०	

गोहिल ने उदारता का सर्वोच्च शिखर अंपनाया था उसी पर युद्ध के समय में क्षत्रिय-कर्तव्य की ध्वजा फहरा कर धुनाजी के पुत्र ने अपना मार्ग लिया।

रावल रतनजी के अखैराजजी नामक एक भाई हरभमजी गोविन्द जी और सारङ्ग जी नाम के तीन पुत्र तथा सोनाज बा (रत्नावती) नाम की एक पुत्री थी जिसका विवाह भुज के राव भाराजी (भारमलजी) के साथ हुआ था। हरभमजी अपने पिता के बाद रावल हुआ उसका विवाह सरवइयाणी अभाजीबा के साथ हुआ था जिससे उसके अखैराजजी नामक पुत्र हुआ। जब अखैराजजी दो वर्ष का था तभी उसका पिता देवलोक हो गया और उसका काका गोविन्दजी गद्दी पर बैठा। अम्माजी बा उससे डरकर अपने बालक कुंअर को लेकर भुज चली गई।

केशवजी व मुकमजी वाळाएणी ने सलाह करके मांगरा रैवारी को साथ लिया और भुज मे आश्रय लेकर पड़े हुए अपने राजा के बाल पुत्र का पक्ष लेकर गोविन्दजी का सामना करने का निश्चय किया। तदनुसार उन्होंने सिहोर पर चढ़ाई करने की तैयारी की उधर गोविन्दजी मुसल मानों का आश्रय प्राप्त करने के लिए अहमदाबाद गया और वहीं मर गया। जब यह समाचार सिहोर पहुंचा तो गोविन्दजी का पुत्र सबसालजी अपने पिता का क्रिया कर्म करने लगा। इसी गड़बड़ी मे केशवजी और मालजी जो उस समय प्राचीन सिहोर में डेरा डाले पड़े थे पैदल ही रावल के महलों तक पहुंच गए और सबसालजी को ऊंघता हुआ पाकर उसे प्राचीन शहर में ले आए। वहां से उसे एक घोड़े पर डालकर वे दक्षिण-पश्चिम की ओर से चले परन्तु रास्ते में उन्हें काठी अस्वारोही

सबसालजी	१५३१ ई	—	१५९९ ई	
अखैराजजी	१५११ ई	—	१५९ ई०	
रतनजी (दूसरा)	१५६० ई	—	१७ १ ई	
भावसिंहजी	१७ १ ई०	—	१७६४ ई	—रे ए मा

मृत रावल के अन्तिम सस्कार मे शामिल होने के लिए आते हुए मिले। केशवजी और उसके साथियो ने तर्रसिगा की पहाडी जा पकडने का प्रयत्न किया परन्तु काठी उनके सामने ही आ गए, तब उन्होने कहा, "गोविन्दजी ने हमारे स्वामी की गद्दी पर अधिकार कर लिया था इसलिए हम उसके कुँअर को पकड कर ले जाते हैं, यदि इनके साथी नगर को असली राजा के हवाले कर देगे तो हम इन्हे मुक्त कर देगे।" काठियो ने केशवजी की सहायता करने का वचन दिया और उन्हे अखैराजजी को सिहोर लाकर गद्दी पर बिठाने के लिए कहा। इस प्रकार रावल अखैराजजी ने फिर अपने घर आकर गद्दी प्राप्त की। सत्रसालजी को मुक्त करके भडारिया ग्राम जागीर मे दिया गया, उनके वशज गोविन्दाणी गोहिल कहलाते हैं।

अखैराजजी के बाल्यकाल मे (जब सिहोर मे भडारिया के गोविन्दाणियो की सत्ता चलती थी तभी) उनकी माता अन्नाजी बा ने लोलियाणा के बादशाही नौकर देशाई मेहराज से अपने सम्बन्ध स्थापित कर लिए थे और फिर उसके पुत्र मेहता रामजी मेहराज को सिहोर बुलाकर प्रधान मत्री नियुक्त किया इससे उसे लोलियाणा की फौज की सहायता सुलभ हो गई और इस प्रकार गोविन्दाणियो का बल नरम पड गया। अखैराजजी के बाद उसका ज्येष्ठ पुत्र रतनजी गद्दी पर बैठा और उससे छोटे कुअर हरभमजी, व्रजराजजी और सरतानजी को क्रमश बरतेज, थोरडी तथा मगलाणा की जागीरे मिली। पाँचवा कुँअर घुनोजी था, जिसका वश आगे नही चला।

रावल रतनजी ने रामजी मेहराज के पुत्र दामाजी को अपना प्रधान बनाया, उनका (रतनजी का) एकमात्र पुत्र भावसिह था जिसने आगे चलकर भावनगर बसाया था।

भावसिह के बाल्यकाल में दामाजी का पुत्र वल्लभजी राजकाज चलाता था। एकबार भावसिह को उस पर क्रोधित करने के लिए उसके कुछ साथियो ने हसी मे कहा, "राज तो वल्लभजी मेहता करता है,

तुम तो नाममात्र के राजा हो। इस पर भावसिंह ने वल्लभजी को कटार से मार डाला। इस पर वल्लभजी के भाई बन्धुओं ने बहुत हल्ला मचाया और सिहोर छोड़ कर जाने के लिए तैयार हो गए परन्तु, भावसिंह की माता ने उनके घर घर जाकर समझाया 'मुझे तो इस घटना का बिलकुल ही पता नहीं था और मेरे पुत्र को भी यदि इसका सत्य मालूम हो जावेगा तो वह इस पर पूर्ण पश्चात्ताप करेगा। और अगर तुम सिहोर छोड़ कर जाओगे ही तो मैं भी तुम्हारे साथ चलूं गी। इस प्रकार इसने सुनने से वे लोग रुक गए और उनमें सबसे बड़े रणछोड़ मेहता को प्रधान नियुक्त किया गया तथा उस समय की प्रथा के अनुसार उसको सिरोपाव और चाँदी का कलमदान भी दिया गया।

सन् १७२७ ई में रावल भावसिंह ने प्राचीन वडवा के पास एक नगर बसाया[1] जिसका नाम भावनगर पड़ा। यह रमणीय नगर एक खाड़ी के किनारे पर स्थित है जो भावनगर की खाड़ी कहलाती है। इस खाड़ी में भावनगर और बसा शहर के बीच आधे रास्ते में गेमड़ी बन्दर तक छोटे-छोटे वाहन बहते चले जाते हैं। गोहिल रावलों के रहने के महल उनके साथ की गद्दियों के कोट कोट पर बनी हुई एक दो छत्रियाँ रावल विजयसिंह का बनवाया हुआ सरोवर, कुछ सुन्दर देवालय और राज-कुटुम्बियों के दाह-स्थान पर बने हुए स्मारक ही भावनगर में ऐसे स्थान हैं जो हठात् दर्शक को अपनी ओर आकर्षित कर लेते हैं। यहां के घरों की बनावट सुन्दर है और ये प्राय पत्थर के बने हुए हैं कहीं कहीं पर ईंटे और गुथी हुई लकड़ी भी काम में ली गई हैं।

नगर के पास ही भू-भाग की ओर एक ऊँची जगह है जहाँ से गोगा बन्दर दिखाई पड़ता है। इस स्थान के और भावनगर के बीच में समुद्र के कारण निर्जन और सपाट प्रदेश है इस ऊँची जगह से लोमर, पालीताणा सिहोर और चमारडी की पहाड़ियाँ स्पष्ट दिखाई पड़ती हैं और चारों

1 संवत् १७८१ वैशाख सुक्ला ३ सोमवार को चार घड़ी दिन चढ़े।

ओर फैली हुई खाडी अखात की ओर बहती हुई सी मालूम पडती है। नगर से कुछ नीचे की ओर खाडो के किनारे की उठी हुई और वनस्पति से सघन भूमि मे रुवापुरी माना का मन्दिर वना हुआ है। इम माता की मूल उत्पत्ति वल्लभीपुर के नाश के समय कुम्हार की स्त्री के पीछे फिर कर देखने से हुई बतलाते हैं। रुवापुरी माता का मन्दिर कोई महत्वपूर्ण स्थान नही है परन्तु इसके पास ही एक योगी की समाधि बनी हुई है जिस पर एक लम्बा पत्थर लगा हुआ है और जो बहुत दिनो से 'सत्य-असत्य की बारी' के नाम से प्रसिद्ध है।

खाडी के पानी से बिलकुल नजदीक ही किनारे पर टेकरी बनी हुई है जो 'दूणो' कहलाती है। इस टेकरी के बारे मे एक कथा प्रचलित है। कहते हैं कि एक व्यापारी ने रुवापुरी माता की मानता पूरी नही की इसलिए माता के कोप से उसका तेल और मजीठ से भरा हुआ जहाज खाडी मे डूब गया। माता के कोप के साक्षीरूप मे आज भी उस जगह पर खाडी के पानी का रग बदला हुआ है।

पीरम के राजाओ की दरियाई सत्ता के निशान, कुछ जहाजो के ऊँचे मस्तूल नगर के सामने ही खाडी के पानी मे खडे हुए हैं। इन्ही के नीचे समुद्र मे डूबा हुआ घुतार पट्टण का बन्दर है, जो कभी वल्लभी नगर का प्रधान बन्दरगाह रहा था और जिसकी नीव के पत्थर और ईट अब भी कभी-कभी ज्वारभाटे के कारण देखने को मिल जाते हैं।

गोहिल रावलो की राजधानी के, उनके घरू चारणो द्वारा किए हुए, वर्णन को यहा पर उद्धृत करने का हम लोभ सवरण नही कर सकते। उनका कहना है कि, "इस कलियुग मे वैशाख शुक्ला ३ सवत् १७७१ के दिन पण्डितो को बुलाकर शुभ मुहूर्त दिखलाया गया। पण्डित लोग योग देख कर बहुत प्रसन्न हुए और बोले, 'वाह, वाह, यह नगर तो इन्द्रपुरी के सदृश होगा।" ज्योही उनके मुख से ये शब्द निकले कि नगर का नाम भावनगर रख दिया गया। फिर ब्राह्मणो ने भविष्यवाणी की कि, 'यह नगर मणि-माणिक से भरपूर रहेगा और इसके शत्रुओ का पराजय होगा, ब्राह्मणो के वचन अन्यथा नहीं हो सकते।' यह बात मानकर

रावल ने अपनी गद्दी वहां पर स्थापित की बाग बगीचे लगवाये, गगन चुम्बी प्रासाद खड़े करवा दिए और किले कोट पर महल के महल भुका दिए। नगर के कोट पर ध्वज-पंक्ति फहराने लगी छोटी से छोटी गली तक भी चूने से मरम्मत होकर सफेदी हो गई और गली गली से सिंहल द्वीप की पद्मिनियों के समान सुन्दरियों की टोलियां निकलने लगीं। कारीगरों ने भिन्न भिन्न प्रकार की विविध सम्बोंवाली हवेलियां बनाईं दोनों भार झरोखे झुके हुए हैं जालियों और खिड़कियों में से फूलों वाले पौधे झांक रहे हैं हाथियों के गले में बंधी हुई घंटियों से नगर गुञ्जायमान हो रहा है इनके पीछे पीछे पैदल सिपाही और उनके पीछे भाला धारण करने वाले सवारों की पंक्तियां जारही हैं। मोटी मोटी तोंद वाले सेठ ढीली धोती बांधे हुए नगर पधर करते इधर उधर फिर रहे हैं दोनों ओर हजारों दूकानें बनी हुई हैं खरीददार एक दूकान से दूसरी दूकान में जा रहे हैं और व्यापारी लोग यहीं पर खरीद-बेच करके दूसरे देशों के व्यापार को ढीला व नष्ट कर रहे हैं। और किसी नगर में इतने लक्षाधीश (लखपति) नहीं हैं करोड़पतियों की हवेलियों पर जगह जगह 'कोटिध्वज' फहरा रहे हैं। रावल के महलों की शोभा का वर्णन कोई नहीं कर सकता गुलहरी फर्शों बाली बेलें छा रही हैं खिड़कियों पर मणि-माणिक जड़े हुए हैं जगह जगह कुराई का काम हो रहा है और विविध प्रकार के वाद्य बज रहे हैं। सभी लोगों के मुंह से निकलता है कि, इस राजा को धन्य है। सन्ध्या आई दीपक जले दरबारी एकत्रित हुए नौबत गडगडाने लगी नर्तकियां नाचने लगीं मल्ल कुश्ती करने लगे दर्शकों के आनन्द का पार न रहा विदेशी मेवों का ढेर लग गया अप्सराओं के नाच होने लगे। सिंहासन पर मोहिल वंश का सूर्य प्रकाशमान हो गया और कविगण उसका गुणगान करने लगे। इस प्रकार आठों पहर आनन्द से व्यतीत होते थे। ओ, पीरम के बादशाह! जाह्नवी के कण गिने जा सकते हैं वर्षा की बूंदों का हिसाब लगाया जा सकता है परन्तु वह कौन सा पंडित है जो तेरे महत्त्व का वर्णन कर सके!

॥ शुभम् ॥

अनुक्रमणिका

घ

च

य

र

य

र

श

ह